Our London Office:
11, Aldwych, W. C. 2

THE BHAVISHYA

Telephone: 203
Telegrams 'Bhavishya'

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०



तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा	... १२) रु०
छः माही चन्दा	... ६॥) रु०
तिमाही चन्दा	... ३॥) रु०

एक प्रति का मूल्य चार आने

Annas Four Per Copy.

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३

इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ७ मई, १९३१

संख्या ८, पूर्ण संख्या ३२

सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता डॉक्टर एम० ए० अन्सारी (देहली)

Printed at The Fine Art Printing Cottage, Chandralok—Allahabad

'चाँद' के असाधारण सम्मान से लोग क्यों डाह करते हैं ??

एक प्रति का मूल्य
दस आने मात्र !

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०, सं० 'भविष्य'



पृष्ठ-संख्या १३२
चित्र-संख्या १००

वार्षिक चन्दा ६॥) रु०
छः माही चन्दा ३॥) रु०

आख़िर 'चाँद' में गुण क्या है ?

'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखाना सद्विचारों को आमन्त्रित करना है।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली पत्र रहा है, जिसने अपने थोड़े से ही जीवन में समाज तथा देश में खलबली मचा दी है।

'चाँद' की प्रशंसा सभी श्रेणी के विचारशील व्यक्तियों, राजाओं, महाराजाओं, बड़े-बड़े प्रसिद्ध नेताओं और आला अफ़सरों ने की है। सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं ने जितनी प्रशंसा 'चाँद' की की है, उतनी किसी पत्र की नहीं।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली एवं भाग्यशाली पत्र है, जो निर्धन की कुटिया से लेकर राजा-महाराजों की अट्टालिकाओं तक आपको मिलेगा।

'चाँद' तथा इस संस्था ने पत्र-पत्रिकाओं तथा अपने प्रकाशनों द्वारा थोड़ी-बहुत—जो भी सेवा भारतीय समाज और देश की की है, वह सहज ही विस्मरण करने की बात नहीं है।

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में आपको गम्भीर से गम्भीर राजनैतिक एवं सामाजिक लेखमालाओं के अतिरिक्त, सैकड़ों एकरङ्गे, दुरङ्गे और तिरङ्गे चित्र तथा कार्टून मिलेंगे, जो किसी भी पत्र-पत्रिकाओं में आपको नहीं मिल सकते।

'चाँद' में प्रकाशित कविताओं के सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। जिस पत्रिका की उर्दू शायरी का सम्पादन कविवर "बिस्मिल" करते हों और हिन्दी कविताओं का सम्पादन करते हों कविवर आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव और प्रोफ़ेसर रामकुमार वर्मा, एम० ए०, जैसे सुविख्यात कवि, उस पत्रिका की कविताओं से कौन टक्कर ले सकता है ?

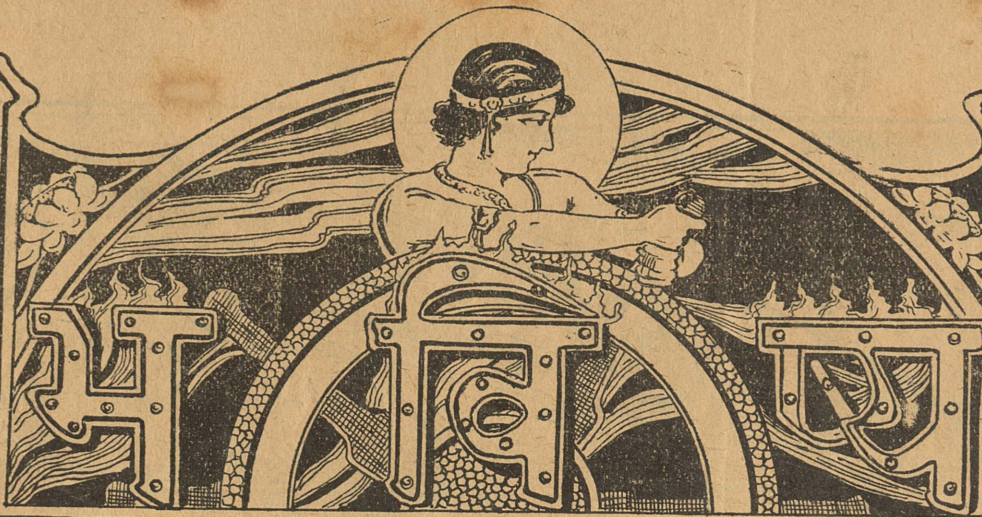
'चाँद' में प्रकाशित लेखों के सम्बन्ध में पाठकों को स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम इस सिलसिले में केवल इतना ही निवेदन करना चाहते हैं, कि सभी सुप्रसिद्ध लेखकों का अभिन्न सहयोग 'चाँद' को प्राप्त है। फिर श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, श्री० विजयानन्द (दुबे जी) और हिज़ होलीनेस श्री १०८ श्री० जगद्गुरु के चुटीले विनोद आपको किस पत्र-पत्रिका में मिलेंगे ??

यदि अभी तक आप 'चाँद' के ग्राहक नहीं हैं, तो इन्हीं पंक्तियों को हमारा निमन्त्रण समझें और इष्ट-मित्रों सहित 'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखा कर हमें और भी उत्साह से सेवा करने का अवसर प्रदान करें।

विज्ञापनदाता भी भरपूर लाभ उठा सकते हैं

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' और विद्याविनोद-ग्रन्थमाला का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!



पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एकमात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ७ मई, १९३१ | सं० ८, पूर्ण सं० ३२

बर्मा में विद्रोह की भीषण ज्वाला

जेल में रिवॉल्वर, गोलियाँ तथा बम बनाने का सामान मिला !

स्व० सरदार भगतसिंह आदि के स्मारक के लिए १० लाख की अपील

पेशावर में विदेशी कपड़े की दूकानों पर रात-दिन पिकेटिङ्ग : : कलकत्ते में श्री० पूर्णचन्द्र दास गिरफ़्तार

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा ७वीं मई के प्रातःकाल तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—चिटगाँव की परिस्थिति में अभी तक किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ है। वहाँ का वातावरण अभी तक ख़तरे से ख़ाली नहीं है। समस्त ज़िले में विप्लवकारियों का आतङ्क छाया हुआ है। पग-पग पर किसी भीषण आक्रमण की सम्भावना है, इसी कारण अधिकारियों ने अस्त्र-शस्त्र बेचने वाले दूकानदारों तक के सारे हथियार, बारूद और गोलियाँ अपने क़ब्ज़े में कर ली हैं। २६ अप्रैल का समाचार है कि २०० गोरखों का एक विशेष जत्था भी नगर के रक्षार्थ बुलाया गया है।

७वीं मई के प्रातःकाल का तार है कि उन अभियुक्तों के सेल (जेल की कोठरी) में से, जिन पर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में एक विशेष ट्रिब्यूनल की अदालत में मामला चल रहा है—२रिवॉल्वर, कुछ गोलियाँ और बम बनाने का सामान बरामद हुआ है, कहा जाता है, ये कुल चीज़ें उस समय ज़मीन में गड़ी हुई मिलीं, जबकि मरम्मत के लिए जगह खोदी गई थी ! जेल में पहरे का बहुत कड़ा प्रबन्ध कर दिया गया है। शहर में कर्फ़्यू ऑर्डर भी जारी है।

—कलकत्ते का ६ठी मई की रात का तार है कि बङ्गाल प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री श्री० पूरनचन्द्र दास आज जैसे ही ढाका मेल से सियालदा में उतरे, वैसे ही ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा गिरफ़्तार कर लिए गए। अभियोग का अभी तक पता नहीं चला है।

—लाहौर का ३०वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्थानीय ब्रेडलॉ हॉल की एक सभा में इस आशय का प्रस्ताव पास किया गया, कि सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु तथा श्री० सुखदेव के स्मारक के लिए १० लाख रुपया इकट्ठा किया जाय। इसी निश्चय के अनुसार डॉ० अन्सारी, श्री० जे० एम० सेनगुप्त, श्री० सत्यमूर्त्ति, पं० जवाहरलाल नेहरू, पं० मदनमोहन मालवीय, मौलाना अब्दुलकलाम आज़ाद, श्री० के० एफ़० नरीमन, श्री० शिवप्रसाद गुप्त, श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, डॉ० महमूद, डॉ० किचलू, पं० सन्तानम्, डॉ० आलम तथा अन्य महानुभावों की एक कार्यकारिणी समिति क़ायम की गई है।

—रङ्गून के समाचारों से विदित होता है, कि विद्रोहियों का दमन अभी पूर्ण-रूप से नहीं हो सका है। इन्सीन और हेनज़ादा आदि स्थानों में विद्रोहियों ने उपद्रव मचा रक्खा है। ४थी मई का समाचार है कि ४० विद्रोहियों ने थॉयेटमेयो के किसी मुखिया के यहाँ डाका डाला। उसके यहाँ सरकारी काग़ज़-पत्र तथा रुपए-पैसे—जो कुछ मिले, विद्रोही लेकर चलते बने। इन्सीन से भी इसी प्रकार के दो डाके की ख़बर आई हैं। हेलगु का कोर्ट हाउस भी जला डाला गया है।

—रङ्गून का ७वीं मई के प्रातःकाल का तार है, कि कल म्योमा नामक गाँव में प्रोम ज़िला के सुपरिण्टेण्डेण्ट-पुलिस श्री० डब्ल्यू० एच० ऑस्टिन तथा पुलिस के एक जत्थे की ६० विद्रोहियों से मुठभेड़ हो गई। कल प्रातःकाल पुलिस के एक दारोग़ा साहब ३ सिपाहियों के साथ सही-सलामत लौटे और वेटिगन से ११ फ़ौजी जवानों को लेकर फिर घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ उन्हें १००विद्रोहियों ने घेर लिया, जिनमें से कहा जाता है, ७ मार डाले गए और कई घायल हुए। इसके दो घण्टे बाद प्रोम के डिप्टी कमिश्नर भी पुलिस के एक जत्थे के साथ घटनास्थल पर पहुँचे, उन्हें कुछ सिपाही तो मिले, लेकिन मि० ऑस्टिन का पता नहीं चला। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि वे विद्रोहियों द्वारा मार डाले गए।

—'इण्डियन डेलीमेल' को विश्वस्त-सूत्र से पता चला है, कि महात्मा गाँधी ने गोलमेज़ परिषद में सहायता देने के लिए एक मन्त्रि-मण्डल नियुक्त किया है। उसमें निम्न-लिखित लोग हैं:—श्री० के० एफ़० नरीमैन, श्री० जमनालाल बज़ाज, श्री० जयरामदास दौलतराम, श्री० जे० एम० सेन गुप्त, और डॉ० आलम।

—ख़बर है कि ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार तथा उनके बड़े भाई डॉ० ख़ाँ साहिब को इस आशय के पत्र मिले हैं कि यदि वे राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेना बन्द नहीं करेंगे, तो उन्हें देश-निकाले की सज़ा दी जायगी।

—कराँची कॉङ्ग्रेस से लौटने के बाद से ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार सीमाप्रान्त के अफ़ग़ानी जिरगों को सङ्गठित करने के लिए भ्रमण कर रहे हैं। शेरपाव, टाँगी, अबजाई आदि स्थानों में आप भ्रमण कर चुके हैं। जगह-जगह सहस्रों नर-नारियों ने आपका स्वागत किया ! आपने सबों से खद्दर अपनाने की अपील की। शङ्करगढ़ की एक बृहत सभा में आपने हिन्दू और मुसलमानों को आपस में सद्भाव बनाए रखने के लिए कहा।

—पेशावर के विदेशी कपड़े की दूकानों पर रात-दिन धरना जारी है। व्यापारियों ने समझौता करने के लिए ४ दिन का समय माँगा है। ५वीं मई की ख़बर है, कि गत रात्रि के समय फेरी देते हुए, एक स्वयंसेवक ने किसी मनुष्य को विदेशी कपड़े की गाँठ ले जाते हुए पकड़ा। वह मनुष्य एक दूकानदार का नौकर था, और वह अपने मालिक की आज्ञा से उन गाँठों को हटा रहा था। दूकानदार ने फिर इस प्रकार की चालबाज़ी न करने की प्रतिज्ञा की है।

—अलीगढ़ की कॉङ्ग्रेस कमिटी को इस आशय की ख़बर मिली है कि स्थानीय ज़मीन्दार अपने रैय्यतों से कर वसूल करने के लिए बड़ी बेरहमी कर रहे हैं। वे उन्हें नाना प्रकार के कष्ट देते हैं, तथा बुरी तरह पीटते हैं। किसानों में कर चुकाने की शक्ति नहीं है। स्थानीय कॉङ्ग्रेस कमिटी ज़िला मैजिस्ट्रेट के पास, इन बेचारे किसानों के ऊपर किए जाने वाले अत्याचारों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करने के लिए, एक डेपूटेशन भेजने वाली है।

—अलीगढ़ से एक सज्जन लिखते हैं कि आन्दोलन के समय जिन कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ताओं की जायदादें, जुर्माने न देने के वजह से ज़ब्त कर ली गई थीं, वे अभी तक लौटाई नहीं गई हैं। कहा जाता है कि वे जायदादें नीलाम पर चढ़ाई जाने वाली हैं। ज़िला मैजिस्ट्रेट का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया है।

—नागपुर का २री मई का समाचार है, कि 'जनरल' आवारी के कुछ अनुयायी धरना देते समय गिरफ़्तार कर लिए गए।



—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि भाई सज्जनसिंह अपनी सज़ा काट कर रावलपिण्डी जेल से आ गए हैं। आपकी गिरफ़्तारी सत्याग्रह आन्दोलन के सम्बन्ध में हुई थी, पर गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार आप नहीं छोड़े गए थे।

जेल के सम्बन्ध में आपका कहना है, कि रावलपिण्डी जेल में इस समय ३८ सत्याग्रही क़ैदी हैं। सभी क़ैदियों का स्वास्थ्य ख़राब है। इनका वज़न बहुत घट गया है। इनमें अधिकांश लोगों को अतीसार हो गया है। लोग जेल के डॉक्टर की शिकायत करते हैं। मास्टर उजागर सिंह, श्री० भगवानदास, श्री० ईश्वरसिंह लम्बरदार, सरदार गुरुदत्तसिंह और सरदार सन्तोकसिंह, सेलों में बन्द रक्खे जाते हैं। मास्टर उजागरसिंह तो चौबीसों घण्टे सेल ही में बन्द रक्खे जाते हैं। चिन्ताजनक अवस्था होने पर भी ये लोग अस्पताल में भर्ती नहीं किए गए हैं।

—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि सरदार अर्जुनसिंह मियाँवली जेल से छूट कर आ गए हैं। मास्टर काबुलसिंह के विषय में उनका कहना है, कि उनकी दशा बहुत ही चिन्ताजनक हो रही है। पहले उन्हें ३ साल की सज़ा दी गई थी, किन्तु अनशन करने के कारण उन्हें ७ माह की और सज़ा दी गई। उनके छूटने में अभी १५ मास बाक़ी हैं, किन्तु उनका स्वास्थ्य बहुत गिर गया है। उनका कान ख़राब हो गया है, फलतः वे सुन नहीं सकते। पाचन-शक्ति इतनी ख़राब हो गई है, कि दूध भी नहीं पचा सकते। ऐसी अवस्था में भी वे सेल में बन्द रक्खे गए हैं और उन्हें नित्य अपने हिस्से का काम करना पड़ता है।

—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि बिलगा वालों ने एक राजनैतिक परिषद करने का निश्चय किया है। इस ख़बर ने वहाँ के अधिकारियों को चिन्तित कर दिया है। इस हौवे से जनता को अलग रखने के लिए वे नाना प्रकार के उपायों का अवलम्बन कर रहे हैं। कहा जाता है, कि एक अफ़वाह यह उड़ाई गई है कि यदि परिषद हुई तो गाँव में प्युनिटिव पुलिस बिठा दी जायगी। दूसरी अफ़वाह यह है, कि स्वागतकारिणी के अध्यक्ष श्री० उजागरसिंह तथा अन्य कॉङ्ग्रेस-कार्यकर्त्ता बहुत शीघ्र ही गिरफ़्तार कर लिए जायँगे। इन सब अफ़वाहों के होते हुए भी बहुत लोग कॉङ्ग्रेस के सदस्य बन गए हैं।

—पेशावर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि पञ्जाब-गवर्नर-गोली-काण्ड के अभियुक्त श्री० हरिकिशन के पिता श्री० गुरुदासमल फ़्रॉण्टियर क्राइम्स रेगुलेशन की ४०वीं धारा के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। कहा जाता है, कि आप पर अनुचित राजनैतिक कार्यवाहियों में भाग लेने का अभियोग लगाया गया है। आप मर्दान के अतिरिक्त-असिस्टेण्ट-कमिश्नर के सामने पेश किए गए। पुलिस के दो गवाहों ने आपकी कार्यवाही के सम्बन्ध में बयान दिया। आपका मामला अब असिस्टेण्ट-कमिश्नर की अदालत में पेश है।

—हमीरपुर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि होशियारपुर ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के एक प्रमुख कार्यकर्ता, स्वामी बसन्त कमलदेव, भारतीय दण्ड-विधान की १०९वीं धारा के अनुसार यहाँ गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। आप हाल ही में सज़ा काट कर जेल से लौटे थे।

—बारडोली का २७वीं अप्रैल का समचार है, कि गत सत्याग्रह आन्दोलन में, स्थानीय अकोटि नामक ग्राम के किसानों को बहुत हानि सहनी पड़ी है। जब महात्मा जी वहाँ गए तो किसानों ने उनसे कहा कि उनकी ५०,०००) रुपए की जायदाद केवल १,४००) रुपए में नीलाम कर दी गई है। वे दाने-दाने को मुहताज हो रहे हैं और कॉङ्ग्रेस की सहायता के बल पर जी रहे हैं। परन्तु इतने पर भी मामलतदार उनसे लगान माँग रहे हैं!

महात्मा जी ने उन लोगों से कहा, कि ऐसी अवस्था में वे समझौते की शर्तों के अनुसार कुछ समय के बाद भी लगान चुका सकते हैं। यदि वे लगान देने में समर्थ हैं, तो उन्हें इन्कार नहीं करना चाहिए, और यदि नहीं दे सकते हों तो इन्कार करने से डरना भी नहीं चाहिए; किन्तु ऐसी हालत में उसका फलाफल भोगने के लिए भी उन्हें तैयार रहना चाहिए।

—डेराइस्माइल ख़ाँ का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि एक स्थानीय व्यापारी ने, प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद फिर विदेशी कपड़े बेंचना शुरू कर दिया था। कॉङ्ग्रेस वालों ने उससे विदेशी कपड़े न बेंचने की प्रार्थना की, किन्तु उस व्यापारी ने उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया। अन्त में लाचार होकर उसकी दूकान पर शान्तिमय पिकेटिङ्ग की गई, जिसके फल-स्वरूप उसे माफ़ी माँगनी पड़ी और उसने भविष्य में विदेशी कपड़े न बेंचने की प्रतिज्ञा की।

—दिल्ली का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि चननशाह नामक एक पेशावरी पठान राजद्रोह के अभियोग में गिरफ़्तार किया गया है। कहा जाता है, कि एक सार्वजनिक सभा में, जिसमें ख़ान अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ का भाषण हुआ था, इस पठान ने कुछ राष्ट्रीय गाने गाए थे।

—बोरसद का ३०वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधि मि० जेम्स ए० मिल्स के साथ बातें करते समय, न्यूयार्क की 'फ़ॉक्स मूवीटोन न्यूज़' नामक एक फ़िल्म-कम्पनी ने टॉकी सिनेमा के लिए महात्मा जी का फ़िल्म ले लिया। टॉकी सिनेमा के लिए महात्मा जी का यह पहला फ़िल्म लिया गया है।

—मुलतान से एक विचित्र घटना की ख़बर आई है। कहा जाता है, कि एक मुसलमान क़ुरान के कुछ पन्नों में विष्ठा लपेट कर मस्जिद में फेंकने ही जा रहा था, कि लोगों ने उसे पकड़ लिया। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उस पर थूकने लगे। मालूम नहीं, मस्जिद को अपवित्र करने का उसका क्या उद्देश्य था?

* * *

—लन्दन का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि मि० बेन ने हाउस ऑफ़ कॉमन्स के एक कॉन्ज़रवेटिव सदस्य मि० फ़्रीमेन को बतलाया है, कि सत्याग्रह आन्दोलन के ७२९ क़ैदी अभी नहीं छोड़े गए हैं। बेन महोदय ने कहा है कि इनमें ७१६ क़ैदियों पर समझौते की शर्तें लागू नहीं होतीं, और शेष १३ का मामला अभी विचाराधीन है।

—लन्दन का २८वीं अप्रैल का समाचार है, कि लिवरपूल की एक कॉन्ज़रवेटिव सभा में भाषण देते हुए मि० बाल्डविन ने कहा कि यदि गाँधी-इर्विन समझौते की शर्तों का पूरा-पूरा पालन नहीं किया गया, तो बड़ी हानि होगी। जब तक भारत साथ नहीं देगा; ब्रिटिश साम्राज्य की आर्थिक एकता कभी पूर्ण नहीं हो सकती। भारतीय आन्दोलन की ख़बरों से लङ्काशायर के चिन्तित होने का उचित कारण है। इसीलिए यह उचित है कि हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स और हाउस ऑफ़ कॉमन्स दोनों में इस विषय पर विचार किया जाय। इससे हमारी अनेक कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी।

—लन्दन का २९वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के दो कॉफ़ी हाउसों ने भारतीय छात्रों को भीतर आने देने से इन्कार कर दिया है। कहा जाता है कि एडिनबरा विश्वविद्यालय के छात्रों की प्रतिनिधि-सभा ने इसका ज़ोरों से विरोध किया है। २८वीं अप्रैल की रात को कुछ यूरोपियन और भारतीय विद्यार्थियों का डेपुटेशन उनके पास गया। यूरोपियन छात्रों को, तो भीतर जाने की अनुमति मिल गई, किन्तु भारतीय छात्रों को नहीं जाने दिया गया। इस पर यूरोपियन छात्रों ने कॉफ़ी हाउस में उपस्थित सज्जनों से इस मामले में भाग लेने के लिए अनुरोध किया। उन सज्जनों ने तुरन्त उस कॉफ़ी हाउस को छोड़ दिया! उस सभा ने कॉफ़ी हाउसों से इस प्रकार की अनुचित बाधाओं को उठा देने की प्रार्थना की है। उसने यह भी कहा है कि यदि ऐसा नहीं किया गया तो वे उन कॉफ़ी हाउसों का बहिष्कार कर देंगे।

—पेशावर के ३०वीं अप्रैल के एक समाचार से मालूम पड़ता है, कि अफ़ग़ानिस्तान औद्योगिक उन्नति की चेष्टा कर रहा है। कहा जाता है, कि यूरोप से कुछ मैशीनें मँगाई जा रही हैं, जिनसे काबुल में सूत कातने और कपड़े बनाने के कारख़ाने खोले जायँगे। इसके अतिरिक्त जलालाबाद में काग़ज़ बनाने का कारख़ाना और कन्दहार में ऊनी कपड़े का कारख़ाना भी खोला जायगा।

—लन्दन का ५वीं मई का समाचार है, कि आज भूमि-कर के सम्बन्ध में बहस होते समय, हाउस ऑफ़ कॉमन्स में एक विचित्र घटना हुई। महिलाओं की गैलरी से एक २२ वर्ष की युवती महिला ने बहस होते समय तीन बार गर्ज कर कहा—"मेरठ के क़ैदियों को छोड़ दो।" मामला यहाँ तक बढ़ा, कि पुलिस को हस्तक्षेप करना पड़ा। उक्त महिला वहाँ से हटा दी गई।

* * *

लाहौर की पुलिस तथा विप्लववादियों में भयङ्कर मुठभेड़

दोनों ओर से गोलियों की बौछार :: पुलिस के छः आदमी घायल

एक क्रान्तिकारी की मृत्यु :: श्री० सुखदेवराज घायल और गिरफ़्तार

३री मई को लाहौर के शालामार बाग़ में, जहाँ किसी समय मुग़ल बादशाह विलासामोद में निमग्न रहा करते थे, एक सनसनीपूर्ण घटना हो गई। पुलिस और दो विप्लववादी नौजवानों में देर तक गोलियाँ चलती रहीं। एक नौजवान, जिसका नाम श्री० जगदीशचन्द्र बताया जाता है, मारा गया और दूसरा जिसका नाम श्री० सुखदेवराज बताया जाता है और जो लाहौर षड्यन्त्र, बम्बई षड्यन्त्र तथा लेमिङ्गटन रोड षड्यन्त्र केसों का पलातक अभियुक्त बताया जाता है—ज़ख़्मी होकर गिरफ़्तार हो गया!

शालामार बाग़ पर घेरा

कहा जाता है, कि घटना के दिन सन्ध्या को ५-६ बजे के बीच लाहौर के किसी कॉलेज के एक विद्यार्थी ने लाहौर पुलिस के ख़ुफ़िया-विभाग को सूचना दी, कि श्री० सुखदेवराज और उसका एक साथी, शालामार बाग़ में मौजूद हैं। इस सूचना के पाते ही लाहौर-पुलिस और स्पेशल पुलिस के जवान बन्दूक़ों और रिवॉल्वरों से लैस होकर, अपने तमाम बड़े-बड़े अफ़सरों की निगरानी में, उपर्युक्त बाग़ के पास जा पहुँचे और उसे चारों ओर से घेर लिया। बाग़ के अन्दर जाने का जो रास्ता सड़क की ओर है, वहाँ पचास सशस्त्र सिपाही तैनात कर दिए गए। ऐसा मालूम होने लगा, कि पुलिस का यह विशाल दल किसी अतीव शक्तिशाली शत्रु का सामना करने की तैयारी में है।

पुलिस का बाग़ में प्रवेश

समस्त अत्यावश्यक पेश-बन्दियों के बाद, पुलिस के कुछ अफ़सर सिपाहियों की एक टोली के साथ बड़ी सावधानी से बाग़ के अन्दर दाख़िल हुए। उस समय पुलिस के सभी सिपाही बड़ी सतर्कता से अपनी बन्दूक़ें तैयार किए हुए और अफ़सर अपनी-अपनी पिस्तौलें हाथ में पकड़े हुए थे।

गिरफ़्तारी की सूचना

ज्योंही पुलिस ने बाग़ के भीतर प्रवेश किया, कहा जाता है, कि पुलिस ने दोनों नौजवानों को ललकार कर कहा कि 'इनको गिरफ़्तार कर लिया गया'। परन्तु वे दोनों नौजवान आपस में बातें कर रहे थे, उन्होंने पुलिस की इस आज्ञा की ओर विशेष ध्यान न दिया।

गोलियों की बौछार

इस पर कहा जाता है, कि पुलिस की ओर से गोली चलाई गई। यह नहीं कहा जा सकता, कि कितने फ़ायर हुए। परन्तु ऐसा मालूम होता है, कि पुलिस के फ़ायरों के परिणाम-स्वरूप दोनों नवयुवक घायल हो गए।

नियमानुसार युद्ध का दृश्य

जिस समय दोनों नौजवान घायल हुए। कहा जाता है, कि इनमें से एक श्री० जगदीश ने अपने पॉकेट से पिस्तौल निकाल कर फ़ायर करना आरम्भ कर दिया। इधर से पुलिस ने भी गोलियों की झड़ी लगा दी। इससे चन्द मिनटों के लिए यह शाही बाग़, जहाँ लोग सैर के लिए जाया करते हैं, समर-क्षेत्र बन गया।

श्री० जगदीश की मृत्यु !

इस अवसर में कहा जाता है, कि श्री० जगदीश की छाती, पेट तथा गले में कई गोलियाँ लगीं, जिससे वह घायल होकर ज़मीन पर गिर पड़ा और गिरते ही उसके प्राण निकल गए!

पुलिस को साधारण चोट

कहा जाता है, कि श्री० सुखदेव ने कई फ़ायर किए, परन्तु पुलिस के आदमियों में से किसी को ज़्यादा चोटें न लगीं। सिर्फ़ पाँच-छः सिपाही थोड़े-बहुत ज़ख़्मी हुए।

पुलिस को सूचना किस तरह मिली

कहा जाता है, कि पुलिस को श्री० सुखदेव और श्री० जगदीश सम्बन्धी सूचना किसी कॉलेज के विद्यार्थी द्वारा मिली थी, उस विद्यार्थी को इन दोनों के लाहौर में आने की ख़बर कैसे मिली, यह तो मालूम नहीं हो सका है, परन्तु लोगों का अनुमान है कि यह विद्यार्थी कोई पुलिस को रिपोर्टें देने वाला ही होगा।

दोनों क्रान्तिकारी लाहौर में कब आए ?

इनके लाहौर में आने के सम्बन्ध में दो प्रकार की बातें सुनी गई हैं। पहला बयान यों है, कि ये दोनों पन्द्रह दिनों से लाहौर में आए थे और प्रायः इधर-उधर घूमते-फिरते थे, इसलिए किसी विद्यार्थी ने, जो इन्हें पहचानता था, देख लिया और पुलिस को रिपोर्ट कर दी। दूसरा बयान इस तरह है, कि श्री० सुखदेव तीन रोज़ से बाग़बाँपुरा में आया हुआ था। परन्तु वह किसी ख़ास स्थान पर ठहरा हुआ न था, इसीलिए किसी ख़ास आदमी को उसके सम्बन्ध में कुछ सन्देह पैदा हुआ और उसने श्री० सुखदेव की निगरानी शुरू की। अन्त में उसीने पुलिस को ख़बर भी दी, जिससे शाम को पुलिस ने बाग़ को घेर लिया।

पुलिस शव भी लेती गई

श्री० सुखदेवराज को गिरफ़्तार करके लॉरी बन्द करने के साथ ही पुलिस ने श्री० जगदीश की लाश भी अपने क़ब्ज़े में कर ली और उसे भी लॉरी में बन्द करके क़िले में ले गई। कहा जाता है कि तलाशी लेने पर सुखदेवराज की जेब से ३१५) रु० और दो पिस्तौलें बरामद हुईं।

श्री० जगदीश कौन था ?

श्री० जगदीश का पूरा नाम जगदीशचन्द्र राय था, परन्तु आम तौर पर वह जगदीश के नाम से ही पुकारा जाता था। वह डेरा इस्माइलख़ाँ का रहने वाला एक होनहार युवक था। इस समय उसकी उम्र २२ या २३ साल की होगी। उसका सम्बन्ध एक उच्च वंश से था और उसके पिता एक उच्च कोटि के सरकारी अफ़सर हैं। श्री० जगदीश ने लाहौर के फ़ोरमन क्रिश्चियन कॉलेज में शिक्षा पाई और उसकी बुद्धि तीव्र और अपूर्व मेधाशील थी, इसलिए अपने सहपाठियों तथा प्रोफ़ेसरों का यह अतीव प्रिय पात्र था।

नौकरी

यों तो श्री० जगदीश में बचपन से ही देश-सेवा का भाव था; परन्तु कॉलेज-जीवन में उसके ये भाव ग़रीबों तथा सर्व-साधारण की सेवा-सम्बन्धी और भी बढ़ गए। परन्तु उसके पिता सरकारी कर्मचारी हैं, इसलिए वह राष्ट्रीय आन्दोलनों में खुल कर भाग नहीं ले सकता था और शायद यही कारण है, कि वह शीघ्र ही रेलवे में नौकर हो गया था।

राष्ट्रीय सभाओं से प्रेम

श्री० जगदीश सन् १९२६-२७ में कॉलेज का विद्यार्थी था, इसके बाद उसने नौकरी कर ली थी। परन्तु नौकरी कर लेने पर भी उसने देश-सेवा नहीं छोड़ी। सार्वजनिक सभाओं में वह बराबर भाग लिया करता था। इन्हीं दिनों लाहौर में कॉङ्ग्रेस होने वाली थी। इस अवसर पर समस्त सरकारी दफ़्तरों में हिदायत कर दी गई, कि कोई सरकारी या रेलवे-कर्मचारी सर्व-साधारण सभाओं में भाग न ले। परन्तु श्री० जगदीश ने इस आज्ञा की कोई परवाह न की। वह खुल्लमखुल्ला राष्ट्रीय सभाओं में भाग लेता रहा।

लाहौर में 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' की गूँज

इन्हीं दिनों लाहौर में दफ़ा १४४ लगा दी गई और 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' कहना ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दिया गया। इस अनुचित आज्ञा के विरुद्ध श्री० धनवन्तरी ने, जो आजकल दिल्ली में क़ैद हैं, सत्याग्रह की घोषणा की और लट्ठबन्द पुलिस के प्रदर्शन के होते हुए भी, अपने नेतृत्व में इस आज्ञा के विरुद्ध पहला जत्था निकालने का निश्चय किया, इस जत्थे के लिए सत्याग्रहियों की आवश्यकता थी।

सत्याग्रही जगदीश

कई नवयुवकों ने अपने नाम लिखाए। जगदीश भी अपने दफ़्तर से उठ कर आया था और सारी बातें ध्यानपूर्वक सुनता रहा। अन्त में मित्रों के मना करने पर भी, वह इस जत्थे में शामिल हुआ और पुलिस द्वारा पीटा जाकर अन्त में गिरफ़्तार हो गया। परन्तु इसके विरुद्ध कोई प्रमाण न था, इसलिए अन्त में वह छोड़ दिया गया। इस पर उसके अफ़सरों ने उससे जवाब तलब किया। श्री० जगदीश ने उत्तर में लिखा, कि मैं नौकरी की परवाह नहीं करता; परन्तु मेरी सज़ा नहीं हुई है, इसलिए आप मेरे विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकते।

नौजवान भारत-सभा

श्री० जगदीश नौजवान भारत-सभा का एक उत्साही कार्यकर्ता था। भगतसिंह डिफ़ेन्स फ़रड के रुपए एकत्र करने में भी इसने बड़ी मेहनत की थी।

श्री० सुखदेवराज का परिचय

इस घटना का दूसरा अभियुक्त, जिसे पुलिस ने गिरफ़्तार किया है, लाहौर-निवासी लाला गयंदाराम का पुत्र है। इसने लाहौर के सनातन-धर्म कॉलेज से बी० ए० पास किया था और एम० ए० की डिग्री प्राप्त करने के लिए डी० ए० वी० कॉलेज में भर्ती हुआ था। श्री० सुखदेवराज की उम्र इस समय २४ साल की है। इससे पहले यह तीन बार गिरफ़्तार हुआ था, परन्तु प्रत्येक बार छोड़ दिया गया था। श्री० सुखदेवराज 'स्टूडेण्ट यूनियन' लाहौर का एक उत्साही कार्यकर्ता था और कुछ दिनों तक बड़ी लगन के साथ यूनियन का कार्य करता रहा।

पहली गिरफ़्तारियाँ

श्री० सुखदेवराज प्रथम बार विगत २री फ़रवरी, सन् १९२८ को गिरफ़्तार हुआ था। यह गिरफ़्तारी

साइमन कमीशन के विरुद्ध प्रदर्शन करने के कारण हुई थी, परन्तु उस समय इस पर कोई मामला नहीं चलाया गया था।

दूसरी गिरफ़्तारी रङ्गून में हुई थी। वह सैर की इच्छा से बर्मा गया हुआ था। वहाँ से वह कलकत्ते लाया गया और फिर बङ्गाल की पुलिस ने उसे लाहौर की पुलिस के हवाले किया। परन्तु अन्त में प्रमाणाभाव के कारण वह छोड़ दिया गया।

तीसरी बार वह २३ दिसम्बर को, वायसराय की गाड़ी पर बम फेंकने के सन्देह में लाहौर कॉङ्ग्रेस नगर से गिरफ़्तार हुआ। परन्तु अन्त में प्रमाणाभाव के कारण छोड़ दिया गया।

गिरफ़्तारी के लिए दो हज़ार का इनाम !

इधर प्रायः एक वर्ष से यह नवयुवक लापता था। पुलिस ने इसकी गिरफ़्तारी के लिए दो हज़ार रुपए इनाम की घोषणा की थी। कहते हैं, पुलिस को तीन षड्यन्त्र के मुक़दमों के लिए श्री० सुखदेव की आवश्यकता थी। जिस दिन श्री० धन्वन्तरी दिल्ली में पकड़ा गया था, उस दिन उसका एक साथी भाग गया था। पुलिस का ख़्याल था, कि वह श्री० सुखदेवराज ही था। इस घटना के प्रायः छः महीने के बाद अन्त में वह ३री मई को गिरफ़्तार कर लिया गया है।

नेशनल न्यूज़ एजेन्सी का बयान

आज लाहौर में एक सनसनीपूर्ण घटना हो गई। उसका विवरण इस प्रकार है कि, एक फ़रार अभियुक्त जिसका नाम श्री० सुखदेवराज है और जो डी० ए० वी० कॉलेज का विद्यार्थी है, अपने साथी श्री० जगदीशचन्द्र के साथ शालामार बाग़ में टहल रहा था। इतने में किसी व्यक्ति ने, जो किसी कॉलेज का विद्यार्थी बतलाया जाता है, पुलिस को फ़ोन द्वारा ख़बर दी कि दो सन्देहात्मक युवक शालामार बाग़ की तरफ़ गए हैं। इस पर सी० आई० डी० विभाग के पुलिस-अफ़सर सदल-बल शालामार बाग़ पहुँचे और युवकों को देख कर चिल्लाने लगे कि इन्हें गिरफ़्तार कर लो। इस पर कहा जाता है, कि दोनों नवयुवकों ने पिस्तौलें निकाल लीं और पुलिस-दल पर गोलियाँ चलाने लगे। पुलिस-अफ़सरों ने भी उत्तर में गोलियाँ चलाईं, जिसका परिणाम यह हुआ कि एक क्रान्तिकारी, जिसका नाम श्री० जगदीशचन्द्र था, गोली लगने के कारण बेहोश होकर ज़मीन पर गिर गया। परन्तु पुलिस के अफ़सरों ने गोली चलाना बन्द नहीं किया। जगदीश गिरते ही मर गया। इसके सिवा कहा जाता है, कि श्री० सुखदेवराज की पिस्तौल जाम हो गयी और पुलिस ने उसे गिरफ़्तार कर लिया। इसके बाद पुलिस उसे अपनी लॉरी पर चढ़ा कर क़िले में ले गई। जगदीशचन्द्र की लाश पोस्ट मार्टम के लिए अस्पताल में भेज दी गई है।

फ़्री प्रेस का बयान

दिल्ली षड्यन्त्र केस का फ़रार अभियुक्त जगदीश और नए लाहौर षड्यन्त्र केस का पलातक अभियुक्त सुखदेवराज तथा कई पुलिस अफ़सरों में, शालामार बाग़ में, आज शाम को खुल्लमखुल्ला लड़ाई हुई। परिणाम-स्वरूप जगदीश तो वहीं मर गया, परन्तु सुखदेव गिरफ़्तार कर लिया गया। जगदीश की लाश पोस्ट मार्टम के लिए भेज दी गई। कहा जाता है, कि पुलिस अफ़सरों को भी कुछ चोटें आई हैं।

बाद की ख़बर है कि स्थानीय किसी कॉलेज के एक विद्यार्थी ने ढाई बजे पुलिस को ख़बर दी थी और इसी ख़बर के अनुसार पुलिस के कई अफ़सर ६० पुलिसमैनों की टोली के साथ शालामार बाग़ में गए और उसके सभी प्रवेश-पथों को रोक लिया।

जिस समय पुलिस पहुँची, उस समय श्री० सुखदेवराज आराम कर रहा था और जगदीश बड़े दरवाज़े के क़रीब नहर के किनारे बैठा हुआ था। इतने में अचानक पुलिस ने इन्हें घेर लिया और लड़ाई आरम्भ हो गई। अभियुक्तों ने आत्म-रक्षा के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक गोलियाँ चलाईं। कहा जाता है कि दो बार गोली चलने के बाद ही वे परास्त हो गए। जगदीश की गर्दन में गोली लगी और वह चक्कर खाकर नहर में गिर पड़ा। अधिक रक्त-स्राव होने के कारण वहीं उसका प्राण निकल गया। सुखदेव ने बच निकलने की चेष्टा की, परन्तु गिरफ़्तार कर लिया गया। कहा जाता है, कि सुखदेवराज के पास ३०५) और दो टिफ़िन के डब्बे बरामद हुए।

जगदीश रेलवे में नौकरी करता था और सुखदेव एम० ए० क्लास का विद्यार्थी था। दोनों फ़रार थे और उनकी गिरफ़्तारी के इनाम की घोषणा की जा चुकी थी।

पुलिस को श्री० सुखदेव के पिता का तार

श्री० सुखदेवराज, जोकि आज शालामार बाग़ में गिरफ़्तार किया गया है, उसके पिता लाला गण्डाराम ने सी० आई० डी० के सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० जेङ्किन्स को तार दिया है, कि "मुझे मेहरबानी करके सूचित करें कि मेरे लड़के सुखदेव को, जो कि घायल होकर पकड़ा गया है, आप कब और किस मैजिस्ट्रेट के सामने रिमाण्ड के लिए पेश करेंगे, ताकि उसकी सफ़ाई का यथोचित प्रबन्ध किया जा सके"

* * *

संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन

अध्यक्ष तथा स्वागताध्यक्ष के भाषण

संयुक्त-प्रान्त का २५वाँ राजनीतिक सम्मेलन आज २री मई को सायङ्काल साढ़े ६ बजे प्रारम्भ हुआ। पण्डाल प्रशस्त भूमि पर बहुत सजावट के साथ बनाया गया था। सम्मेलन का कार्य वन्देमातरम् गान के साथ प्रारम्भ हुआ। बाद में स्कूली लड़कियों ने कुछ राष्ट्रीय गीत गाए।

स्वागतकारिणी सभा के सभापति श्री० सङ्कटाप्रसाद ने आगत प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए मिरज़ापुर नगर का ऐतिहासिक महत्व बतलाया। आपने कहा, कि यह वही स्थान है, जहाँ योगिराज भर्तृहरि ने तपस्या करके अपना शरीर छोड़ा था। परन्तु यह स्थान केवल तपोभूमि होने के कारण नहीं प्रसिद्ध है, यह बड़े-बड़े ऐतिहासिक वीरों का लीला-क्षेत्र भी रहा है। आल्हा और ऊदल की प्रसिद्ध लड़ाई इसी ज़िले के चुनारगढ़ में हुई थी। इसी क़िले को प्राप्त करके शेरशाह अपनी विजय-कीर्ति फैला सका था। बनारस के विद्रोहियों से जान बचा कर इसी मिरज़ापुर में वारेन हेस्टिंग्ज़ ने शरण ली थी।

व्यापारिक केन्द्र

रेल चलने के पहले मिरज़ापुर उत्तर भारत का व्यापारिक केन्द्र भी था। अब तो नए-नए उद्योग-धन्धे चल निकले हैं, यद्यपि कुछ समय से उनकी हालत अच्छी नहीं है। मिरज़ापुर का राष्ट्रीय कार्य सन् १९२१ से लेकर आज तक कुल मिलाकर अच्छा ही रहा है। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार में वह किसी से पिछड़ा नहीं है। इसके पश्चात् आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू, मौलाना मुहम्मदअली और श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। आपने कहा कि विद्यार्थी जी का बलिदान स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। इसके पश्चात् आपने राष्ट्रीय संग्राम के कार्यकर्ताओं का उल्लेख किया। साम्प्रदायिक दङ्गों के सम्बन्ध में आपने कहा कि राष्ट्रीय संग्राम के रुक जाने से लोगों में शिथिलता आ गई, जिससे बदमाशों को उपद्रव करने का अवसर मिल गया। परन्तु आशा है कि एकता के लिए किए जाने वाले प्रयत्न सफल होंगे।

गत वर्ष का राष्ट्रीय संग्राम

गत वर्ष के राष्ट्रीय संग्राम ने, जिसमें स्त्री-पुरुषों तथा सब प्रकार के लोगों ने भाग लिया था, शक्तिशाली ब्रिटिश-गवर्नमेण्ट को आत्म-शक्ति के सामने झुकने के लिए बाध्य कर दिया। भारत अब बिना स्वाधीनता प्राप्त किए चैन नहीं ले सकता। राष्ट्र अपने जीवन के सभी विभागों में आगे बढ़ गया है। आपने कहा कि अगले गोलमेज़ सम्मेलन के पहले घरेलू झगड़ों का तय हो जाना अत्यन्त आवश्यक है। अगर गोलमेज़ में गवर्नमेण्ट ने देश की माँग न पूरी की, तो स्वाधीनता-संग्राम फिर से छिड़ जायगा और उसमें यह देश बिल्कुल प्रतिबन्धहीन स्वाधीनता निश्चय ही प्राप्त कर लेगा।

सम्मेलन के सभापति का भाषण

स्वागताध्यक्ष ने अपना भाषण समाप्त करने के बाद मनोनीत सभापति श्री० शेरवानी से अपना व्याख्यान प्रारम्भ करने की प्रार्थना की।

श्री० शेरवानी राष्ट्रीय नारों के बीच अपना व्याख्यान देने के लिए उठे। आपने कहा कि देश की ऐसी नाज़ुक अवस्था में मुझे अपने सम्मेलन का सभापति चुन कर जो आपने मेरे ऊपर विश्वास प्रकट किया है, उसके लिए मैं आपका हृदय से आभारी हूँ। देश का वातावरण सन्देह तथा आशङ्काओं से परिपूर्ण है। कोई नहीं कह सकता कि निकट-भविष्य में क्या होगा। अपने सभापति चुने जाने का समाचार मुझे देर से मिला। फिर भी यह मैंने समझ कर आपका आग्रह स्वीकार कर लिया है कि आपके संयुक्त-प्रान्त में राष्ट्रीयता का पूर्ण जागरण हो चुका है और आपको अब किसी राह दिखाने वाले की आवश्यकता नहीं रह गई। गत वर्ष के राष्ट्रीय संग्राम में ऐसे अवसर आए थे, जब सब के सब नेता जेलों में बन्द कर दिए गए थे, परन्तु आपके संग्राम की गति वैसी की वैसी ही तीव्र बनी रही।

कुटिल काल का चक्र

इसके बाद आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू, मौलाना मुहम्मद अली तथा श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू का ज़िक्र बड़े मर्मस्पर्शी शब्दों में किया। आपने कहा, पण्डित मोतीलाल केवल एक महान नेता ही नहीं थे, वे महान् योद्धा, सदैव न्याय की लड़ाई लड़ने वाले और एक सहृदय मित्र थे। उनमें अथक शक्ति, अनुपम दृढ़ता और विचित्र दूरदर्शिता थी। अगाध प्रेम, अत्यन्त ऊँचे दर्जे का आतिथ्य-सत्कार, सभ्य विनोद और हास्य उनके अत्यन्त आश्चर्यजनक गुण थे। २१ जनवरी को प्रधान मन्त्री के व्याख्यान पर विचार करने के लिए इलाहाबाद में वर्किङ्ग कमेटी की बैठक हुई थी, पण्डित जी की तबियत उस वक़्त बहुत ख़राब थी। फिर भी उन्होंने हम लोगों को अपने पास बुलवाया। हम लोगों ने जो प्रस्ताव तैयार किया था वह उनके सामने रक्खा। पण्डित जी ने कहा—"यदि तुम लोगों की हिम्मत हार

गई हो तो मैं अपने इस मौत के बिस्तर से उठ कर अकेले लड़ूँगा।" वह बड़ी रात बीते तक बराबर बहस करते करते रहे, जिससे उनके ज्वर का ताप अचानक बढ़ गया। मैंने उनसे कहा कि परिश्रम के कारण आपका ताप बढ़ गया। उन्होंने अपनी स्वाभाविक मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया—"यदि आप लोग मेरा ताप कम करना चाहते हैं, तो अपना ताप ऊँचा रखिए।" मित्रो, आज वह महान देश-भक्त नहीं है, परन्तु वह राष्ट्र को अपना अनुपम जवाहर सौंप गया है।

मुझे अपने राजनीतिक गुरु मौ० मुहम्मदअली के लिए भी शोक है। उनकी निडर भावना, विश्वास की दृढ़ता, वाकचातुरी, उनका अनुपम उत्साह और भाषा पर अबाधित अधिकार, ये गुण हम सभी लोगों को बराबर याद रहेंगे। कुछ लोगों का यह ख़्याल है कि मौलाना मुहम्मदअली अन्त में राष्ट्रीयता के पथ से भ्रष्ट हो गए थे। आपने कहा कि यद्यपि इधर हममें मतभेद हो गया था, फिर भी वे अन्त तक राष्ट्रवादी रहे। उनके आख़िरी वक्तव्य की दो-चार ऐसी तहरीरें हैं, जिन्हें कुछ लोगों ने सामने आने से रोक दिया है। फिर भी उनमें से कुछ को मुझे देखने का मौक़ा मिला है। उन्हें देख कर मेरी यह राय हुई है कि मौ० मुहम्मदअली अन्त तक राष्ट्रवादी थे। मैं वचन दे चुका हूँ, इस कारण से आपके सामने उनका मज़मून नहीं प्रकाशित कर सकता, परन्तु मृतात्मा के प्रति न्याय के नाते मैं उस सज्जन से, जिसके पास मौ० मुहम्मदअली के वक्तव्य हैं, प्रार्थना करता हूँ कि वे उन्हें प्रकाशित कर दें। ख़िलाफ़त कमेटी के नाम सभापति की हैसियत से उन्होंने एक पत्र लिखा था। उसमें उन्होंने लिखा था—"मेरी इच्छा है कि आप लोग कॉङ्ग्रेस के साथ कन्धा से कन्धा भिड़ा कर आज़ादी की लड़ाई लड़ते, लेकिन चूँकि मैं लन्दन जा रहा हूँ, इसलिए मेरी ग़ैर मौजूदगी में कम से कम उन लोगों के मार्ग में कोई बाधा न पहुँचे, जो हिन्दुस्तान के आज़ादी की लड़ाई लड़ रहे हैं।"

श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु का ज़िक्र करते हुए आपने कहा कि वे आजीवन सत्याग्रही रहे और अन्त में सत्याग्रही की तरह वीर-गति को प्राप्त हुए। उन्होंने दूसरों की जान बचाने में अपनी जान देकर एक अत्यन्त उच्च आदर्श उपस्थित किया है। उनकी मृत्यु से बढ़ कर कोई मृत्यु नहीं हो सकती। मैं ख़ुदा से इस्तेदुआ करता हूँ कि मेरा सौभाग्यपूर्ण अन्त किसी हिन्दू की रक्षा करने में हो। मैं उपरोक्त मृतात्माओं तथा राष्ट्रीय संग्राम में वीरगति पाने वाले कुटुम्बियों के साथ हार्दिक समवेदना प्रकट करता हूँ।

अहिंसात्मक संग्राम

आगे आपने कहा,—"मैं आपको संग्राम की सफलता के लिए बधाई देता हूँ। जो आपने बलिदान किए हैं उनमें इस प्रान्त की स्त्रियों का सब से भारी भाग है। मैं तो चाहता था कि इसमें नवयुवकों का अधिक से अधिक भाग होता। लेकिन मुझे विश्वास है कि अगली लड़ाई में नवयुवक दल, विशेषकर विद्यार्थी दल कहीं अधिक संख्या में भाग लेगा। इस युद्ध के द्वारा हमने संसार के सामने हिंसा पर अहिंसा की विजय प्रमाणित कर दी है। हमने कमज़ोर राष्ट्रों के सामने सबल राष्ट्रों के अर्थ-शोषण से बचने का उपाय उपस्थित कर दिया है। हमें आशा है कि हम आधुनिक सभ्यता वालों को यह बात सफलतापूर्वक सिखला देंगे कि संसार में सुख-शान्ति काग़ज़ी सन्धियों, समझौतों या गरोहबन्दियों से न हो सकेगी, सुख-शान्ति हार्दिक निःशस्त्रीकरण तथा स्वार्थत्याग के द्वारा ही होगी।

सरदार भगतसिंह, सुखदेव तथा राजगुरु के सम्बन्ध में आपने कहा कि यद्यपि हम उनकी नीति नहीं पसन्द करते, फिर भी हम उनके साहस तथा त्याग-भावना की प्रशंसा करते हैं। मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह बात स्वीकार करता हूँ कि सन् १९३० के पहले मैं अहिंसा को केवल नीति की दृष्टि से लाभकारी समझता था, परन्तु इस संग्राम से अब मेरा यह अटल विश्वास हो गया है कि भारत की स्वाधीनता का सर्वोत्तम तथा निश्चित उपाय अहिंसा ही है। लाहौर की फाँसियों ने एक बार फिर से हमारी असमर्थता को प्रकट करके दिखला दिया है।

संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन के प्रस्ताव

सभापति की ओर से नीचे लिखे प्रस्ताव पेश किए गए, जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए :—

(१) यह सम्मेलन मौलाना मोहम्मदअली और पण्डित मोतीलाल, श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी, श्री० रामदहिन ओझा और इम्तियाज-अहमद की मृत्यु पर शोक प्रकट करता है और उनके कुटुम्बियों के साथ समवेदना प्रकट करता है।

(२) यह सम्मेलन प्रान्त के उन वीर पुरुषों के प्रति, जिन्होंने गोलियों या लाठियों का सामना करते हुए या राष्ट्रीय कार्य करते हुए प्राणों का उत्सर्ग किया है, श्रद्धा प्रकट करता है और उनके कुटुम्बियों को विश्वास दिलाता है कि सारा प्रान्त उनके दुःख में हिस्सेदार है।

(३) अपने को राजनीतिक हिंसा-नीति से सर्वथा अलग रखते हुए यह सम्मेलन श्री० भगतसिंह और उनके दोनों साथी श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु तथा श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद और श्री० शालिग्राम की वीरता, त्याग और देश-भक्ति की प्रशंसा करता है और उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

(४) यह सम्मेलन बनारस, कानपुर आगरा और मिर्ज़ापुर आदि स्थानों के साम्प्रदायिक दङ्गों पर अत्यन्त शोक प्रकट करता है। कॉन्फ्रेन्स की सम्मति में ऐसे दङ्गे हमारी राजनीतिक प्रगति के मार्ग में ज़बरदस्त बाधा डालते हैं और उनके बीच धर्म-स्थानों पर जो आक्रमण होते हैं, वे विरुद्ध हैं और धन-जन की जो भीषण क्षति होती है वह सर्वथा निन्दनीय है। इस सम्बन्ध में सम्मेलन को इस बात का गर्व है कि श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी हिन्दू-मुसलमानों की सेवा करते हुए वीर-गति को प्राप्त हुए और उसे आशा है कि उनकी यह अपूर्व आत्मबलि प्रान्त में ही नहीं, वरन् सारे देश में साम्प्रदायिक ऐक्य की नींव को दृढ़ करेगी।

गाँधी-इर्विन समझौता

गाँधी-इर्विन समझौते के सम्बन्ध में मैं अधिक नहीं कहना चाहता। कराची कॉङ्ग्रेस ने उसे स्वीकार कर लिया है। मैं उसके विषय में केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि कराची में देश ने त्याग की अपेक्षा विनयन का कहीं अच्छा परिचय दिया है। बहुत से लोगों ने सोच रक्खा था कि कॉङ्ग्रेस दो दलों में विभक्त हो जायगी। परन्तु हम देखते हैं कि कॉङ्ग्रेस में जैसी एकता आज है, वैसी कभी नहीं थी।

साम्प्रदायिकता

आगे चल कर आपने कहा, कि "हममें से प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जानता है कि राष्ट्रीय संग्राम के अवसर पर विरोधियों की ओर से इस बात के लिए प्रयत्न किया गया कि हिन्दुस्तान की दो बड़ी क़ौमों में लड़ाई हो जाय। लेकिन विरोधी अपने उपायों में सफल न हो सके। परन्तु कॉङ्ग्रेस-कार्य के बन्द हो जाते ही साम्प्रदायिकता सहसा उभड़ पड़ी। कानपुर तथा बनारस के पाशविक कृत्यों को सुन कर सर शर्म से झुक जाता है। आप सब कॉङ्ग्रेस वालों से मेरी प्रार्थना है, कि साम्प्रदायिकता के दैत्य से सदैव सावधान रहिए। साम्प्रदायिकता देश का सबसे ज़बरदस्त दुश्मन है। आप विश्वास रक्खें, देश में साम्प्रदायिकता के रहते हम आज़ादी नहीं हासिल कर सकते। मैं यह बात जानता हूँ कि सभी देशों में राष्ट्रीयता के जागरण के साथ-साथ एक प्रकार की सङ्कुचित देश-भक्ति का भाव पैदा हो जाता है। उसके परिणाम-स्वरूप साम्प्रदायिकता उत्पन्न हो जाती है। परन्तु जब साम्प्रदायिकता सम्पूर्ण जातियों में फैल जाती है तब वह एक भयानक बीमारी का रूप धारण कर लेती है। मैं आप सब लोगों को यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि धर्म का उच्छृङ्खलता से कोई सम्बन्ध नहीं है। हठधर्मी से धर्म का उच्च आदर्श नीचा हो जाता है। अपने सम्प्रदाय का प्रेम दूसरों से घृणा करने के रूप में बदल जाता है।

सन्देह का भाव

प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग भ्रमवश यह समझ लेते हैं कि हम अपने सम्प्रदाय का कार्य दूसरे सम्प्रदाय पर किसी तरह का आघात पहुँचाए बिना कर लेंगे। परन्तु एक सम्प्रदाय की साम्प्रदायिकता से दूसरों में भी साम्प्रदायिकता पैदा हो जाती है। साम्प्रदायिकता में केवल दुष्टता ही नहीं है, उसमें मूर्खता भी है। या तो एक सम्प्रदाय दूसरे को दाब ले या दोनों मिल कर सहयोग से रहें; इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। परन्तु पहला उपाय अन्त में निश्चय ही असफल होता है, इसलिए दूसरा ही उपाय व्यावहारिक है। चाहे जिस दृष्टि से भी साम्प्रदायिकता पर विचार कीजिए, उसमें स्वार्थी तथा पतित लोग ही लाभ उठाते हैं। साम्प्रदायिकता में सब प्रकार की हिंसाएँ सन्निहित रहती हैं। परन्तु किसी प्रकार की साम्प्रदायिक घटना के हो जाने पर लोग अपनी साम्प्रदायिकता को दोष न देकर सम्प्रदायवाद के विरोधियों को दोषी ठहराने लगते हैं। जो हो, कॉङ्ग्रेस वालों का कर्तव्य है कि वे साम्प्रदायिकता को जड़ से उखाड़ फेंकें।

मैं हिन्दुओं से दरख़्वास्त करना चाहता हूँ कि अल्पसंख्यक समुदाय में साम्प्रदायिकता अविश्वास की वजह से होती है, परन्तु बहुसंख्यक समुदाय में साम्प्रदायिकता नफ़रत की वजह से होती है।

इस सम्बन्ध में मैं अपने मुसलमान भाइयों से भी कुछ कह देना चाहता हूँ। बहुत-कुछ विचार करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि देश में फैली हुई साम्प्रदायिकता का मुख्य कारण मुसलमानों की पृथक्करण वाली नीति है। आपने इस नीति को २० वर्ष तक आज़माया है और नतीजा भी देख लिया है। सम्प्रदायों में एकता होने के स्थान में भेद ही अधिक बढ़ता गया। अविश्वास से विश्वास नहीं पैदा हो सकता। साम्प्रदायिक संरक्षणों से काम नहीं चल सकता। सर्वोत्तम संरक्षण अपने साथ रहने वाले सम्प्रदायों की सहानुभूति है। सहानुभूति मिल कर काम करने से प्राप्त होती है। अपने-अपने त्याग तथा परिश्रम के अनुसार प्रत्येक सम्प्रदाय अपना स्थान प्राप्त कर लेता है। शोर मचाने से कुछ नहीं होता।

* * *

क्या कानपुर का दंगा ख़ुफ़िया पुलिस की साज़िश से हुआ था?

कानपुर की जाँच-कमिटी के सामने पुलिस पर भीषण दोषारोपण

कानपुर का गत दङ्गा वास्तव में सरकार के विरुद्ध ही हुआ था, किन्तु सरकार की चालबाज़ी से, ख़ुफ़िया-पुलिस वालों के द्वारा वह साम्प्रदायिक दङ्गे के रूप में परिणत कर दिया गया। एक सब-इन्स्पेटर साहब इक्के पर फ़तहपुर जा रहे थे। कुछ लोगों ने उन्हें इक्के से उतार कर पीटा। फिर एक ख़ुफ़िया पुलिस का आदमी फेरी वालों का-सा वेष बना कर जा रहा था, एक दूसरा ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी ग्राहक बन कर उससे कुछ ख़रीदने गया। इसी ख़रीद-फ़रोख़्त में दोनों में लड़ाई हो गई। फेरी वाला हिन्दू था और ग्राहक था मुसलमान। इस प्रकार साम्प्रदायिक दङ्गे की नींव पड़ी !!

—मज़रुद्दीन

कानपुर, ३० अप्रैल

आज कमीशन के सामने लाला रामरतन गुप्त की गवाही हुई। उन्होंने अपने बयान में कहा, कि गत २४वीं मार्च को मि० जोग ने फ़ोन द्वारा मुझे सूचना दी कि सरदार भगतसिंह को फाँसी दे दी गई है। इसके बाद मि० जोग कोतवाल साहब के साथ स्वयं चटाई-मुहाल में मेरे ऑफ़िस के समीप आए। उन्होंने मुझसे कहा कि सरदार भगतसिंह की फाँसी की वजह से बड़ी सनसनी फैली हुई है। इसके बाद ही हम लोग डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन श्री० रामनारायण गर्ग के साथ श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी के यहाँ गए। इस समय क़रीब ११ बजे होंगे। इसी समय हमें ख़बर मिली कि बादशाही नाका में एक बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई है, और पं० रघुबरदयाल तथा श्री० इक़बालकृष्ण कपूर उसे शान्त करने की चेष्टा कर रहे हैं, किन्तु उसका फल कुछ नहीं हो रहा है। २ बजे के लगभग हमें मालूम हुआ कि मि० जोग को भी कुछ चोट आई है।

चिन्ताजनक परिस्थिति

इस समय तक विद्यार्थी जी को यह ख़बर नहीं थी, कि परिस्थिति कितनी नाज़ुक हो गई है। मैं विद्यार्थी जी के साथ कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस गया, किन्तु मि० जोग के सम्बन्ध में कुछ नहीं मालूम हो सका। वहाँ से हम लोग सराफ़ा चले गए। वहाँ बड़ी सनसनी फैली हुई थी। हाल्सी रोड पर कोतवाल साहब खड़े थे। विद्यार्थी जी ने उन्हें सलाह दी, कि यदि कुछ बदमाश गिरफ़्तार कर लिए जायँ, तो परिस्थिति शान्त हो जायगी। किन्तु कोतवाल साहब ने विद्यार्थी जी की सलाह की ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। इसके बाद हम लोग मूलगञ्ज के चौराहे पर गए। हम लोगों ने देखा कि हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे पर पत्थर फेंक रहे हैं और पुलिस वाले खड़े तमाशा देख रहे हैं। हम लोगों ने हिन्दुओं से हट जाने के लिए कहा। हिन्दुओं ने उत्तर दिया, कि यदि हम हट जायँगे, तो मुसलमान हमारा पीछा कर हमारे मकानों को लूट लेंगे। ऐसी परिस्थिति देख कर विद्यार्थी जी को बड़ी निराशा हुई।

दो लाशें

उसी समय हमें मालूम हुआ कि दङ्गाइयों ने एक इक्के पर के यात्रियों को मार डाला है। हम लोग एक मुसलमान के साथ घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ हम लोगों ने एक जला हुआ इक्का पाया, किन्तु यात्रियों का मृत-शरीर नहीं मिला। जो लोग वहाँ खड़े थे, उन्होंने कहा कि इक्के पर के यात्री भाग गए हैं। किन्तु पीछे हमें मालूम हुआ कि एक नाले में दो मृत-शरीर फेंके गए थे; जो ४-५ रोज़ के बाद मिले। जब हम लोग वहाँ से लौटे, तो देखा कि पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब की मोटर आ रही है। विद्यार्थी जी ने सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब की मोटर खड़ी कराई और जो-जो बातें हम लोगों ने देखी थीं, उसका वर्णन उन्होंने उनके सामने किया। उन्होंने सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब से यह भी कहा कि हमारी नज़रों के सामने दङ्गाइयों ने एक दूकान को लूटा, पुलिस के सवार वहाँ खड़े थे, किन्तु उन लोगों ने कुछ नहीं किया। सुपरिण्टेण्डेण्ट ने केवल इन बातों पर ही नहीं, बल्कि इनके सुनने तक से इन्कार कर दिया।

इसके बाद मैंने विद्यार्थी जी को लगभग १५० मुसलमानों के साथ आते देखा। इनमें केवल बच्चे और औरतें थीं। इसी समय एक मुसलमान ने विद्यार्थी जी से आकर कहा कि मेरे दो लड़के ख़तरनाक स्थान में हैं, आप ज़रा चल कर उन्हें बचा दीजिए। इसके बाद मैं पूर्व निश्चय के अनुसार बेकनगञ्ज चला गया। वहाँ ४ बजे सन्ध्या-समय मुझे फ़ोन द्वारा ख़बर मिली कि विद्यार्थी जी ख़तरे में हैं, उन्हें बचाने के लिए शीघ्र ही प्रयत्न करना चाहिए।

गवाह—परिस्थिति बहुत जल्द क़ब्ज़े में कर लीजिए, क्योंकि पुलिस कुछ नहीं कर रही है!

कमिश्नर—"अब तक तो लोग पुलिस को गालियाँ देते रहे हैं, अब उसकी सहायता चाहते हैं" ××× "कॉङ्ग्रेस वाले क्या कर रहे हैं? वे इस समय सामने आकर मामला शान्त क्यों नहीं करते?"

गवाह—(हँस कर) "यदि कॉङ्ग्रेस वालों को अधिकार और शस्त्र दिए जायँ तो वे २४ घण्टे के भीतर परिस्थिति को शान्त कर सकते हैं।"

विद्यार्थी जी की मृत्यु कैसे हुई ?

यह ख़बर पाकर मैंने कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस को फ़ोन किया और मैं स्वयं मेस्टन रोड पर गया और कोतवाल साहब से विद्यार्थी जी के सम्बन्ध में कहा। पं० रामेश्वरदयाल डिप्टी कलेक्टर मेरे साथ चलने को तैयार हुए। हम लोग कुछ ही दूर गए होंगे, कि एक लड़के से मुलाक़ात हुई जो विद्यार्थी जी के साथ था। उसने वह जगह बताई, जहाँ उसने विद्यार्थी जी का साथ छोड़ा था। वहाँ हम लोगों ने देखा कि कुछ मुसलमान खड़े हैं। उन लोगों से पूछने पर पता चला कि विद्यार्थी जी कुछ औरतों को दङ्गाइयों के हाथ से बचा कर लाठी मुहाल की ओर गए हैं। हम लोगों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के सारे मुहल्ले छान डाले, किन्तु विद्यार्थी जी का पता नहीं चला। इसी बीच में हमें फ़ोन के द्वारा विद्यार्थी जी के सम्बन्ध में अनेक झूठी ख़बरें मिलीं। विद्यार्थी जी के लापता होने की बात सुन कर जनता में बड़ी खलबली मच गई। लोगों के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। किन्तु हम लोगों ने समझा-बुझा कर उन लोगों को शान्त किया।

दङ्गा कैसे शुरू हुआ

हड़ताल के दिन ख़ुफ़िया-विभाग का कोई मुसलमान कर्मचारी बादशाही नाके के समीप साइकिल पर जा रहा था। कुछ लड़कों ने उसे साइकिल से उतर जाने को कहा। जब उसने साइकिल से उतरने से इन्कार कर दिया तो लड़कों ने उस पर पत्थर फेंकने शुरू किए। कुछ हिन्दू-युवकों ने उसका पीछा भी किया। वह मुसलमान जब मूलगञ्ज के चौराहे के समीप पहुँचा तो, उसने चिल्ला-चिल्ला कर कहना शुरू किया, कि हिन्दू मुसलमानों को पीट रहे हैं, और मैं मरते-मरते बचा हूँ। यह सुन कर मुसलमान इकट्ठे हो गए और इस प्रकार दङ्गा शुरू हो गया। दोनों ओर से ईंट और पत्थर फेंके जाते थे। पुलिस वहाँ खड़ी थी, किन्तु वह केवल तमाशा देखती थी। लौटते समय हम लोगों ने देखा कि कुछ दङ्गाई एक मुसलमान की दूकान को लूटना चाहते हैं। हम लोगों ने बड़े प्रयत्न से उस दूकान को लुटने से बचाया। वहाँ पर पुलिस के कुछ सवार भी मौजूद थे। विद्यार्थी जी ने उन सवारों से पूछा कि आप लोगों के सामने यह लूटपाट हो रही है, आप लोग तमाशा क्यों देख रहे हैं? उन लोगों ने उत्तर दिया कि, इन लोगों को रोकने की आज्ञा हमें नहीं मिली है। इसके बाद हम लोग ए० बी० रोड के मन्दिर की ओर गए। हम लोगों ने देखा कि मन्दिर वास्तव में जल रहा है। मन्दिर की छत पर से एक मनुष्य, कोतवाल से अपने को बचाने की प्रार्थना कर रहा था, किन्तु कोतवाल ने कुछ ध्यान नहीं दिया। आम तौर पर लोगों का कहना है कि हड़ताल के दिन मुसलमानों को ज़बरदस्ती दूकानें बन्द करने को बाध्य किया गया, इसी कारण दङ्गा हुआ। वास्तव में, यह बात बिलकुल ग़लत है।

अधिकारियों की अकर्मण्यता

यहाँ के व्यापारियों का साधारणतया यह विचार है, कि यहाँ के अधिकारीवर्ग पहले ही से उनसे इसलिए रुष्ट थे, कि उन्होंने कॉङ्ग्रेस वालों को सहायता दी थी। अधिकारीगण इसलिए उन्हें यह शिक्षा देना चाहते थे, कि उनकी जानोमाल की रक्षा के लिए अधिकारियों की सहायता अनिवार्य है। कॉङ्ग्रेस वाले उनकी कुछ सहायता नहीं कर सकते। जनवरी में बिना लाइसेन्स के करटा, बल्लम आदि हथियार रखने की मनाही कर दी गई थी। ऐसी आज्ञा के जारी होते हुए भी, अशान्त परिस्थिति के समय, लोगों से इन हथियारों के ले लेने की कोई व्यवस्था नहीं की गई। दङ्गे के समय, कोतवाल साहब बराबर मेस्टन रोड पर मि० सिद्दीक़ के यहाँ रहे। शहर में चारों ओर घूम कर परिस्थिति देखने

की कोई परवाह नहीं की! कोतवाल साहब की इस अकर्मण्यता का बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। मि० सिद्दीक़ का निजी फ़ोन व्यवहार में लाकर अधिकारियों ने भारी भूल की। इसका फल यह हुआ कि हिन्दुओं के लिए अनेक उलझनें पैदा हो गईं, और वे अपनी इच्छानुसार किसी अधिकारी से बातें नहीं कर पाते थे। मि० सिद्दीक़ ने, जो कोतवाल साहब के दोस्त हैं, इस मौक़े से बहुत अनुचित लाभ उठाया। वे अक्सर पुलिस वालों को मनमानी ख़बरें, सलाह और आज्ञा दिया करते थे।

कमिश्नर साहब ने क्या कहा?

२६वीं मार्च को कमिश्नर कुँवर महाराज सिंह बाबू विक्रमाजीत सिंह और मि० सिद्दीक़ के साथ मेरे घर पर आए। मेरे चचा साहब ने उनसे प्रार्थना की कि परिस्थिति बहुत जल्द क़ब्ज़े में कर लीजिए, क्योंकि पुलिस कुछ नहीं कर रही है। उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, कि "अब तक तो लोग पुलिस को गालियाँ देते रहे हैं, और अब उसकी सहायता चाहते हैं।" इतना कह कर वे चले गए। लौटती बार, संयोगवश, उनके मोटर के टायर में पञ्चर हो गया; इस कारण, उन्हें मोटर खड़ी करनी पड़ी। मुझे इस बार उनसे बातचीत करने का अच्छा मौक़ा मिला। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने कहा, "कॉङ्ग्रेस वाले क्या कर रहे हैं? वे इस समय सामने आकर, मामला शान्त क्यों नहीं करते?" मैंने हँस कर उत्तर दिया, कि यदि कॉङ्ग्रेस वालों को अधिकार और शस्त्र दिए जायँ तो २४ घण्टे के भीतर वे परिस्थिति को शान्त कर सकते हैं। इसके बाद उन्होंने उपस्थित पुलिस वालों को लाठी लेकर, दङ्गाइयों को भगाने की आज्ञा दी। हेड-कॉन्स्टेबिल ने पूछा कि यदि लाठी का असर न हो तो गोली चलाई जा सकती है? कमिश्नर साहब ने उत्तर दिया कि किसी दशा में भी गोली नहीं छोड़ी जा सकती है। इन्हीं कारणों से, हिन्दुओं का विश्वास ज़िला मैजिस्ट्रेट, कोतवाल और सब-इन्स्पेक्टर पर से उठ गया है।

कानपुर, २री मई

आज कमीशन के सामने मि० मजरुद्दीन नामक एक व्यापारी ने अपना बयान दिया। आपने अपने बयान में कहा, कि कानपुर का गत दङ्गा वास्तव में सरकार के विरुद्ध ही हुआ था, किन्तु सरकार की चालबाज़ी से, ख़ुफ़िया-पुलिस वालों के द्वारा, वह साम्प्रदायिक दङ्गे के रूप में परिणत कर दिया गया। एक सब-इन्स्पेक्टर साहब इक्के पर फ़तहपुर जा रहे थे। कुछ लोगों ने उन्हें इक्के से उतार कर पीटा। फिर एक ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी फेरी वालों का सा वेष बना कर जा रहा था, एक दूसरा ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी ग्राहक बन कर उससे कुछ ख़रीदने गया। इसी ख़रीद-फ़रोख़्त में दोनों में लड़ाई हो गई। फेरी वाला हिन्दू था और ग्राहक था मुसलमान। इस प्रकार साम्प्रदायिक दङ्गे की नींव पड़ी!!

सरकार के विरुद्ध ऐसे भीषण अभियोग उपस्थित करने के कारण, कमीशन ने उनसे अनेक प्रश्न पूछे और अन्त में अपने कथन को प्रमाणित करने को कहा। गवाह ने कहा, कि मेरा ऐसा विचार है, कि यह दङ्गा ख़ुफ़िया-पुलिस का कराया हुआ है। मेरे पास इसका कोई प्रमाण नहीं है। हाँ, शहर में चारों ओर लोग ऐसा ही कहते हैं।

इसके बाद गवाह ने कहा, कि २४वीं मार्च को ११ से २ बजे तक मैं मूलगञ्ज में था। २५वीं मार्च को मैं ८ बजे सवेरे मूलगञ्ज के चौराहे पर गया। वहाँ मैंने देखा कि एक भीड़ इकट्ठी है और पत्थरों की वर्षा हो रही है। इधर हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे पर ईंट-पत्थर फेंक रहे थे और उधर पुलिस खड़ी तमाशा देख रही थी।

आगे पूछने पर गवाह ने कहा, कि मैंने उस समय वहाँ पर मिलिटरी नहीं देखी।

* * *

बिजौलिया में फिर सत्याग्रह

सत्याग्रहियों पर पाशविक अत्याचार

उदयपुर के राणा के नाम श्री० हरिभाऊ उपाध्याय का तार

बिजौलिया के किसानों के दुख का अभी अन्त नहीं हुआ है। श्री० पथिक जी के निरन्तर आन्दोलन करने पर सन्, १९२२ में ठिकानों को किसानों से समझौता करना पड़ा था। उस समय किसानों से यह कहा गया था कि ज़मीन का बन्दोबस्त बहुत शीघ्र कर दिया जायगा। १९२६ में मेवाड़ के हाकिमों ने बन्दोबस्त किया, किन्तु लगान बढ़ा दिया गया; सन् १९२२ के फ़ैसले की कुछ शर्तें भी ठिकाने की तरफ़ से तोड़ी गईं। किसानों ने इसका बार-बार प्रतिवाद किया। जब उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया गया, तब १९२७ में, इस अन्याय के विरोध में उन्होंने अपनी ज़मीनों से इस्तीफ़ा दे दिया। अधिकारियों ने इन इस्तीफ़ों की लेशमात्र परवा न कर ज़मीनों का दूसरे किसानों के हाथ बन्दोबस्त कर दिया। कहा जाता है, कि अधिकांश ज़मीन ज़बरदस्ती लोगों के मत्थे मढ़ दी गई। किसानों को जब इस प्रकार भी सफलता नहीं मिली तब उन्होंने लगान देना बन्द कर दिया। श्री० हरिभाऊ उपाध्याय ने किसानों और राज्य के हाकिमों से मिल कर इस मामले का निबटारा करना चाहा। उन्होंने किसानों को समझाया कि जब तक समझौते की आशा है, तब तक लड़ाई नहीं ठाननी चाहिए। वे मेवाड़-राज्य के बन्दोबस्त के हाकिम मि० ट्रेञ्च से मिले। मि० ट्रेञ्च ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वे किसानों से समझौता करने के लिए तैयार हैं। किसानों की माँगें ये थीं:—

१—सन् १९२२ की शर्तों का पालन किया जाय।

२—लगान में ।) की कमी कर दी जाय और 'छटूँन्द' नामक लागत लगान में शामिल कर ली जाय, अलग न ली जाय।

३—जिन ज़मीनों के इस्तीफ़े दिए गए हैं वे लौटा दिए जायँ।

उपाध्याय जी और मि० ट्रेञ्च के बीच ये बातें तय हुईं:—

१—ठिकाने की ओर से किसानों को इस बात का विश्वास दिलाया जाय कि सन् १९२२ के फ़ैसले की शर्तें न तोड़ी जायँगी, और जो तोड़ी गई हैं उनकी पूर्ति करा दी जायगी।

२—'छटूँन्द' नामक लागत लगान में शामिल कर ली जायगी, लगान में -) फ़ी रुपया कमी कर दी जायगी और बाक़ी रक़म में आधी छूट दे दी जायगी।

३—जो ज़मीन ठिकाने के क़ब्ज़े में है वह लौटा दी जायगी और जो ज़मीन बन्दोबस्त में दे दी गई है, वह भी बन्दोबस्त वालों से कह-सुन कर लौटा दी जायगी।

किसान इस समझौते से प्रसन्न हुए और उन्होंने बाक़ी लगान अदा कर दिया। किन्तु इस समझौते की शर्तों की भी अवहेलना की गई। किसानों ने जिन ज़मीनों से इस्तीफ़ा दिया था, वे उनको नहीं लौटाई जा रही हैं। बन्दोबस्त लेने वाले कुछ किसान—इन्हें लौटा देने के लिए तैयार हैं, किन्तु रियासत के डर से वे ऐसा नहीं कर रहे हैं। उपाध्याय जी ने जेल से इन ज़मीनों के सम्बन्ध में एक पत्र मि० ट्रेञ्च के पास लिखा था। उन्होंने उत्तर में लिखा, कि मैंने बन्दोबस्त लेने वाले किसानों को समझाया, किन्तु वे ज़मीन लौटाने के लिए तैयार नहीं हैं।

अन्त में किसानों के धैर्य का बाँध टूट गया। उन्होंने बन्दोबस्त लेने वाले किसानों को सूचना दी कि यदि हमारी ज़मीनें हमें लौटाई नहीं जायँगी तो हम स्वयं अपनी ज़मीन पर क़ब्ज़ा करेंगे।

इस निश्चय के अनुसार गत २१ अप्रैल को लगभग ४०० किसानों ने अपनी ज़ब्त ज़मीनों को जोता। इनमें ७७ किसान गिरफ़्तार किए गए, किन्तु वे पीछे छोड़ दिए गए। फिर २३वीं अप्रैल को १४ सत्याग्रहियों पर हमला किया गया, और उनके औज़ार तोड़ दिए गए। कुछ सत्याग्रहियों को गहरी चोटें भी आईं। उनके नेता श्री० मणिलाल जी गिरफ़्तार कर लिए गए। किसानों की यह शिकायत है कि सत्याग्रहियों के घावों पर मरहम-पट्टी करना तो दूर रहा, उनकी क़ानूनी सुनवाई भी नहीं की जाती। श्री० मणिलाल जी को भी जेल में कठोर यातना सहनी पड़ रही है। कहा जाता है, कि उनके पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ डाल दी गई हैं। प्रमुख सत्याग्रहियों को देश-निकाले की धमकी दी जा रही है। किसान-पञ्चायत के नेता श्री० हरिभाऊ उपाध्याय ने श्रीमान् महाराणा साहेब के पास इस सम्बन्ध में निम्न-लिखित तार भेजा है। उन्होंने महात्मा जी, मालवीय जी, वायसराय, पोलिटिकल एजेण्ट आदि के पास भी तार भेजे हैं।

"ता० ७ अप्रैल के अपने पत्र के सिलसिले में सूचित करता हूँ, कि बिजौलिया की परिस्थिति विकट होती जा रही है। समाचार है कि माण्डलगढ़ के जिन हाकिमों को क़ानून का पालन कराने के लिए नियुक्त किया गया था, वे सीमा से आगे बढ़ गए हैं और सत्याग्रहियों को ग़ैर-क़ानूनी तौर पर धमकियाँ दे रहे हैं। यों तो ठिकाने के पास यदि सत्याग्रहियों के विरुद्ध बाज़ाब्ता शिकायतें आवें, तो वह उन पर मुक़दमे चला कर सज़ा दे सकता है; पर इसके बजाय ठिकाने के अधिकारी शान्त सत्याग्रहियों पर बामीदारों के द्वारा हमले होने देते हैं, हमला करने वालों की जब शिकायतें उनसे की जाती हैं तो वे सुनने से इन्कार करते हैं। इसके अलावा जो प्रमुख सत्याग्रही अभी हिरासत में हैं, उनके साथ १९२२ के फ़ैसले के ख़िलाफ़ मामूली क़ैदियों का सा बर्ताव किया जा रहा है। खाने को उन्हें जौ का आटा दिया जाता है और उनके पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ डाली गई हैं। कहा जाता है कि ठिकाने के जेल-अधिकारियों ने स्थानीय नेता श्री० मणिलाल जी को कम्बल ओढ़ कर घण्टों तक निरन्तर धूप में बैठने को मजबूर किया। उन्होंने जब इसका विरोध किया तो जेल-अधिकारियों ने उन्हें बहुत मारा-पीटा। उन्हें दो दिन की भूख-हड़ताल भी करनी पड़ी। इतना होते हुए भी सारे सत्याग्रही पूर्णतः शान्त हैं। मैं श्रीमन्त से बड़ी नम्रता और व्याकुलता के साथ प्रार्थना करता हूँ, कि आप न केवल न्याय और मनुष्यता के ख़ातिर, बल्कि मेवाड़ के परम्परागत गौरव की रक्षा के ख़ातिर भी तत्काल इस मामले में हस्तक्षेप करने की कृपा करें। कृपया अत्याचारों को बन्द करने, अत्याचार करने वालों के विरुद्ध न्यायदान की पूरी सुविधाएँ दिलाने और घायलों के लिए शीघ्र और पूरी-पूरी चिकित्सा का प्रबन्ध करने की आज्ञा जारी कीजिए। यदि अपनी पुश्तैनी ज़मीनों पर फिर क़ब्ज़ा करने का सत्याग्रही किसानों का कार्य एक अपराध समझा जाय, तो उनके विरुद्ध ज़ाब्ते की कार्यवाही भले ही की जाय; परन्तु यह पशुता तो बिना विलम्ब रुक जानी चाहिए। कृपया ऐसा प्रबन्ध भी कर दीजिए, जिससे घायलों की सेवा-शुश्रूषा भली भाँति हो और कम से कम इतना तो ज़रूर हो, कि जो लोग मरहम-पट्टी के लिए भेजे जायँ, ठिकाने या राज्य के अधिकारी किसी तरह उनकी रोक-टोक न करें

देहली षड्यन्त्र केस में पुलिस की मनोरञ्जक गवाहियाँ !

बिना हुलिया और बिना वारण्ट के अभियुक्तों की निष्फल तलाश

नई दिल्ली का समाचार है, कि २री मई को स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने सरकारी गवाहों की गवाहियाँ ली गईं। अभियुक्तों की ओर के वकील श्री० बलजीतसिंह ने आरम्भ में यह उज्र पेश किया कि मुख़बिरों की अनुपस्थिति में मामले की कार्यवाही नहीं हो सकती है। उन्होंने बतलाया कि अभियुक्तों और मुख़बिरों में इस अन्तर के सिवा, कि मुख़बिरों को सम्राट ने क्षमा प्रदान कर दिया है, और कोई अन्तर नहीं है। मि० ज़फ़रुल्ला ने सरकार की ओर से बहस करते हुए कहा कि हिरासत में रक्खे जाने से जहाँ तक सम्बन्ध है, वहाँ तक तो सरकारी गवाहों और अभियुक्तों में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु और सब बातों में दोनों में अन्तर है। मुख़बिरों का नाम, सरकारी गवाह होने की वजह से, चलान में दर्ज नहीं किया गया है और इसलिए उन पर मामला नहीं चल रहा है।

साढ़े दस बजे के लगभग अभियुक्त जेल से लाए गए। वे बन्द लॉरियों में पुलिस के कड़े पहरे में लाए गए थे। वे क्रान्तिकारी नारे लगाते थे। ११ बजे तक उन्हें नीचे ठहरना पड़ा। 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारे के साथ उन्होंने अदालत में प्रवेश किया। दो राष्ट्रीय गीत भी उन्होंने गाए।

सवा ग्यारह बजे के लगभग जजों ने अदालत में प्रवेश किया। अभियुक्तों के वकील श्री० बलजीतसिंह ने अध्यक्ष का ध्यान, अभियुक्तों की बेड़ियों की ओर आकर्षित किया। बेड़ियाँ तुरन्त हटा देने की आज्ञा दी गई। प्रोफ़ेसर निगम ने प्रार्थना की, कि उनके कमरों में भी, उन्हें हथकड़ियाँ नहीं लगाई जायँ, किन्तु अदालत ने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की।

पहली गवाही

सब से पहले सब-इन्स्पेक्टर काशीनाथ की गवाही ली गई। उसने अपने बयान में कहा कि मैंने फ़रार अभियुक्त सम्पूरणसिंह टण्डन, यशपाल और मुसम्मात प्रकाशो के सम्बन्ध में काङ्गड़ा, गुरुदासपुर, होशियारपुर, अमृतसर, लाहौर, दिल्ली और बनारस में खोज की है, और अब भी मैं उनकी खोज में हूँ, किन्तु उनके मिलने की कोई आशा नहीं दिखाई पड़ती है। जब अभियुक्त की ओर के वकील मि० आसफ़अली, गवाह से जिरह करने के लिए खड़े हुए, तो सरकारी वकील ने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि, गवाह से जिरह करने का मि० आसफ़अली को कोई अधिकार नहीं है। मि० आसफ़अली ने कहा कि उन्हें यह अधिकार प्राप्त है। यह मामला षड्यन्त्र-सम्बन्धी होने के कारण, किसी प्रकार की गवाही से, यहाँ तक कि फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध की गवाही से भी, वर्तमान अभियुक्तों का सम्बन्ध है। यह सम्भव है, कि जिरह से यह बात सिद्ध हो जाय कि, फ़रार अभियुक्त कोई वास्तविक व्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे काल्पनिक व्यक्ति हैं॥

मि० ज़फ़रुल्ला ने कहा, कि वर्तमान गवाही में इस मामले का कोई विशेष भाग नहीं है। मामले के सम्बन्ध में अन्य गवाहों की गवाहियाँ होंगी।

मि० अमीरअली—तब इस गवाही का क्या अर्थ है?

मि० ज़फ़रुल्ला—इससे ट्रिब्यूनल को यह पता लगेगा, कि कुछ अभियुक्त अभी तक फ़रार हैं।

मि० कुँवर सेन—क्या आप कोई ऐसा प्रमाण बता सकते हैं, जिससे यह मालूम हो, कि अभियुक्तों को स्वयं जिरह करने का कोई अधिकार नहीं है?

मि० ज़फ़रुल्ला—इस विषय पर कोई विशेष प्रमाण नहीं है, किन्तु इन गवाहों का बयान, इस मामले का कोई भाग नहीं है।

मि० कुँवर सेन—क्या अदालत उनसे जिरह नहीं कर सकती है?

मि० ज़फ़रुल्ला—हाँ, कर सकती है।

श्री० कुँवर सेन—तब यदि अभियुक्त उनसे जिरह करें तो क्या हर्ज है?

ज़फ़रुल्ला—इसमें उज्र यह है कि वर्तमान गवाही, फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध में है। इन अभियुक्तों से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। इसलिए गवाह से जिरह करने का उन्हें अधिकार नहीं है।

मि० आसफ़अली—किन्तु फ़रार अभियुक्त को भी इन अभियुक्तों के साथ चलान किया गया है और फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध की गवाही, इन अभियुक्तों पर भी लागू समझी जाती है। अभियुक्तों को यह सिद्ध करने का अधिकार है, कि न तो षड्यन्त्र ही हुआ और न कोई फ़रार ही है। प्रतिवादी का वकील, इसी बयान से किसी भी अभियुक्त के लिए 'अलीबी' सिद्ध कर सकता है।

प्रतिवादी पक्ष के वकील श्री० एस० एन० बोस ने कहा कि 'एविडेन्स एक्ट' के अनुसार ही जिरह करने का अधिकार दिया गया है, भारतीय दण्ड-विधान के अनुसार नहीं; और 'एविडेन्स एक्ट' अभियुक्तों को भी, गवाहों से जिरह करने का अधिकार देता है।

अन्त में ट्रिब्यूनल ने यह फ़ैसला दिया कि गवाहों को भी जिरह करने का अधिकार है।

आगामी सप्ताह से 'भविष्य' के इन्हीं स्तम्भों में पाठकों को देहली षड्यन्त्र केस में मुख़बिरों द्वारा दिए गए ऐसे सनसनीपूर्ण बयान मिलेंगे, जो शायद दूसरे पत्रों में न मिलें, क्योंकि 'भविष्य' की ओर से अदालत में एक विशेष प्रतिनिधि की नियुक्ति की गई है।

फ़रार अभियुक्तों की खोज

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर श्री० काशीनाथ ने कहा कि जिन फ़रार अभियुक्तों की खोज मैं कर रहा हूँ, उनके विरुद्ध लाहौर षड्यन्त्र-केस के सम्बन्ध में वारण्ट निकाले गए हैं। दिल्ली षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में, उन पर कोई वारण्ट जारी नहीं किया गया है। मुझे इन फ़रार अभियुक्तों का कोई निश्चित पता नहीं दिया गया है, और किन ज़रियों से मैं उनकी खोज करता हूँ, यह मैं अदालत के सामने नहीं बता सकता।

गवाह ने आगे कहा कि मैं इसका कोई प्रमाण पेश नहीं कर सकता कि मैं वास्तव में फ़रार अभियुक्तों की खोज में हूँ। मैंने यशपाल के सम्बन्धियों से उसके बारे में कुछ पूछ-ताछ नहीं की है। मुसम्मात प्रकाशो एक प्रतिष्ठित घराने की स्त्री है, किन्तु उसका पिता जुआरी और कोकेनख़ोर है। मैं नहीं कह सकता वह अभी तक गिरफ़्तार किया गया है या नहीं। इसके बाद गवाह ने तीन फ़रार अभियुक्तों का वर्णन किया और कहा कि उसके साथ अभियुक्तों को शनाख़्त करने वाले ख़ास आदमी भी रहते हैं।

अभियुक्त विद्याभूषण के पूछने पर गवाह ने कहा, कि यशपाल बहुधा यूरोपियन लिबास में रहता है, किन्तु वह खद्दर भी पहनता है।

दूसरी गवाही

इसके बाद गवाह मन्सबअली ने अपने बयान में कहा कि मैं १९३० के अक्टूबर से ही लेखराम को खोज रहा हूँ। दिल्ली, मथुरा, कराची, माउण्ट-आबू और लाहौर आदि स्थान मैंने छान डाले, किन्तु उसका कुछ पता नहीं चला। निकट-भविष्य में उसके गिरफ़्तार होने की सम्भावना भी नहीं है। श्री० एस० एन० बोस के जिरह करने पर गवाह ने कहा, कि अभियुक्त को खोजने के लिए मुझे लिखी हुई और ज़बानी दोनों प्रकार की आज्ञा मिली है। मुझे याद नहीं कि मैंने स्वयं उसके सम्बन्ध में किसी से पूछ-ताछ की हो। मेरे भेदिए इस प्रकार की पूछ-ताछ किया करते थे। यह सिद्ध करने के लिए कि मैं वास्तव में अभियुक्त की खोज में था, मेरे पास यहाँ सफ़र के ख़र्चे का बिल मौजूद नहीं है। अभियुक्त की कोई फ़ोटो भी मुझे नहीं दी गई है।

श्री० वात्सायन के प्रश्न का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि मैं लाहौर षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में अभियुक्त लेखराम की खोज करता था, किन्तु अब दिल्ली षड्यन्त्र के सम्बन्ध में भी वह चलान किया गया है। मुझे उसकी गिरफ़्तारी के लिए कोई वारण्ट नहीं दिया गया है।

हेड कॉन्स्टेबिल की गवाही

अपराध सम्बन्धी जाँच-विभाग के हेड कॉन्स्टेबिल जयप्रसाद ने अपने बयान में कहा, कि मैंने हज़ारीलाल और लेखराम की खोज हिस्सार और रोहतक में की है। मुझे हज़ारीलाल का कोई पता नहीं दिया गया था, किन्तु वे स्थान मुझे बताए गए थे, जहाँ वह बराबर आया-जाया करता था। किसी भी अभियुक्त के मिलने की आशा नहीं है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा—किसी भी अभियुक्त के लिए मुझे वारण्ट नहीं दिए गए हैं, किन्तु उनकी फ़ोटो, उनके वर्णन के साथ, मुझे दी गई है। मैं लेखराम के घर पर नहीं गया। मैंने उसके ससुर से मुलाक़ात की, और उसकी स्त्री से भी कुछ प्रश्न किए। प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मैं नहीं जानता कि लेखराम की स्त्री परदा करती है या नहीं। मैं उस स्थान का रहने वाला हूँ, जहाँ लेखराम हकीमी करते थे। कोई भी लेखराम के सम्बन्ध में कुछ नहीं बता सका। सभी लोगों ने यही कहा कि वह छिपा हुआ है।

लेखराम ज़िन्दा है या नहीं ?

गवाह ने आगे कहा कि मैं यह भी नहीं कह सकता कि लेखराम जीवित है या नहीं, किन्तु मेरा ऐसा अनुमान है कि वह जीवित है, क्योंकि उसकी मृत्यु के सम्बन्ध में कोई ख़बर अख़बारों में मैंने नहीं देखी है। मि० बोस के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मुझे याद नहीं कि मैंने हज़ारीलाल के सम्बन्ध में किसी से पूछताछ की हो। मैंने इसकी सूचना, अपनी रिपोर्ट में दे दी है। मैं सफ़र के ख़र्चे का बिल या अभियुक्तों के फ़ोटो यहाँ नहीं लाया हूँ।

(आगामी अङ्क में समाप्त)

सेण्ट्रल सिक्ख लीग की १७ शर्तें

(१) सिक्ख राष्ट्रीय शासन-व्यवस्था चाहते हैं, इसलिए वे किसी ऐसे नियम का समर्थन नहीं कर सकते जिसके द्वारा बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सीटें व्यवस्थापक सभाओं में संरक्षित कर देने का विचार किया गया हो।

(२) पञ्जाब में सिक्खों का महत्व अपना सानी नहीं रखता। सिक्खों ने भारत की रक्षा में और राष्ट्रीय आन्दोलनों में काफ़ी त्याग किए हैं। पञ्जाब प्रान्त में जैसी उनकी स्थिति है, उसे देखते हुए वे पञ्जाब व्यवस्थापक सभा तथा शासन-सम्बन्धी अन्य विभागों के लिए ३० प्रतिशत प्रतिनिधित्व की माँग पेश करते हैं।

(३) पञ्जाब की कार्यकारिणी समिति में तथा पब्लिक सर्विस कमीशन में एक तिहाई सदस्य सिक्ख जाति के रक्खा करें।

(४) यदि उपरोक्त प्रस्तावों के आधार पर कोई निर्णय न हो सके, तो पञ्जाब प्रान्त का वह भाग, जो सीमा प्रान्त की तरफ़ है और जिसके निवासी अधिकांश में मुसलमान हैं, पञ्जाब से अलग करके सीमा प्रान्त में मिला दिया जाय जिससे कि शेष पञ्जाब के निवासियों का साम्प्रदायिक बल बराबर-बराबर हो जाय। उस हालत में निर्वाचन संयुक्त हो और सीटें संरक्षित न रक्खी जायँ।

(५) यदि उपरोक्त दो उपायों में से कोई भी स्वीकृत न हो तो उस हालत में हमारा प्रस्ताव है, कि पञ्जाब प्रान्त का शासन-भार उत्तरदायी केन्द्रीय शासन के अधिकार में तब तक के लिए सौंप दिया जाय, जब तक कि किसी प्रकार का साम्प्रदायिक समझौता न हो जाय।

(६) पञ्जाब प्रान्त की सरकारी भाषा पञ्जाबी हो। सिक्ख तथा अन्य दूसरे लोग अपनी इच्छानुसार गुरुमुखी लिपि के प्रयोग करने में स्वतन्त्र रहें।

(७) ब्रिटिश भारत के उच्च और निम्न दोनों व्यवस्थापक सभाओं में ५ प्रतिशत स्थान सिक्खों को मिलें।

(८) केन्द्रीय शासन की कार्यकारिणी में कम से कम एक सिक्ख अवश्य रक्खा जाय।

(९) यदि कोई फ़ौजी कौन्सिल बने, तो उसमें सिक्ख जाति के प्रतिनिधि यथेष्ट संख्या में रक्खे जायँ।

(१०) सिक्खों का फ़ौज के साथ सदैव से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, इसलिए फ़ौज में सिक्खों की संख्या यूरोपीय युद्ध के पहले की संख्या से कम न रहे।

(११) अखिल भारतीय सर्विस कमीशन में सिक्खों का यथेष्ट प्रतिनिधित्व रहे। केन्द्रीय शासन के सर्विस कमीशन में भी उनके प्रतिनिधि रक्खे जायँ।

(१२) प्रान्तीय अधिकारों को छोड़ कर, शेष सब अवशिष्ट अधिकार केन्द्रीय शासन के अधीन रहें।

(१३) अल्प जातियों की रक्षा के लिए कुछ निश्चित अधिकार केन्द्रीय शासन के अधीन रहें।

(१४) दूसरे प्रान्तों में सिक्खों के लिए अन्य अल्प जातियों के समान ही संरक्षण रहें।

(१५) प्रान्तीय तथा केन्द्रीय शासन धार्मिक स्वाधीनता की घोषणा कर दें। परन्तु अब तक जितनी सम्पत्ति धर्म पर लग चुकी है, उसे छोड़ कर आगे धर्म पर कोई नवीन सम्पत्ति न लगा सके, ऐसा नियम कर दिया जाय।

(१६) जहाँ कुछ भी विद्यार्थी एक निश्चित संख्या में पाए जायँ, वहाँ राज्य की तरफ़ से उन्हें गुरुमुखी लिपि सिखाने का प्रबन्ध रहे।

(१७) शासन-विधान में सिक्खों के लिए निश्चय हुए संरक्षणों में कोई भी संरक्षण बिना सिक्खों की स्पष्ट अनुमति के हटाया न जा सकेगा।

उपरोक्त शर्तें साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति के किसी रूप में बनी रहने की हालत में ही लागू होंगी। राष्ट्रीयता के आधार पर कोई दूसरी योजना सामने लाए जाने पर उपरोक्त शर्तों में से यदि कोई शर्त उसके विपरीत पड़ेगी, तो सिक्ख उस पर ज़ोर न देंगे।

* * *

ख़ून के बदले ख़ून की घातक नीति

लाहौर की फाँसियाँ :: एक अँगरेज़ के विचार

बार-बार अमृतसर-काण्ड की पुनरावृत्ति करने से दोनों देशों की मैत्री मुश्किल होती जा रही है

लाहौर षड्यन्त्र-केस में सरदार भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को दी गई फाँसी के सम्बन्ध में विलायत के "मैञ्चेस्टर गार्जियन" में लिखते हुए मि० होर्स जी० एलेक्ज़ेण्डर नाम के एक सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़ लेखक ने निम्न-लिखित विचार प्रकट किए हैं :—

ठीक ऐसे समय, जब कि लोग यह उम्मीद करने लग गए थे, कि महात्मा गाँधी अपनी समझौता वाली नीति में, नवयुवक-दल के प्रबल विरोध करने पर भी, काँग्रेस में विजयी होंगे, भगतसिंह और उनके साथी फाँसी पर लटका दिए गए! अगर लोगों को यह निश्चय हो गया होता, कि कैप्टेन सॉण्डर्स के असन्दिग्ध हत्याकारी ये ही व्यक्ति हैं, तो इनकी फाँसी के सम्बन्ध में, एक बार विरोध करके मौन होकर बैठ रहते। लेकिन इस मामले में जैसी कार्रवाई की गई है, उसे देखते हुए, कोई मौन नहीं बैठ सकता, बल्कि इसका तीव्र प्रतिरोध आवश्यक था।

इस मामले की मुख्य बातें भारतवर्ष के लोगों पर बहुत अच्छी तरह प्रकट हैं, कि किस तरह साइमन कमीशन लाहौर आया, किस प्रकार उसके विरुद्ध सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता लाला लाजपतराय के नेतृत्व में एक विराट प्रदर्शन हुआ और किस प्रकार कैप्टेन सॉण्डर्स द्वारा, जैसा कि लोग कहते हैं, लाला जी पर वार किया गया और कुछ ही दिनों बाद उनकी मृत्यु हुई। लाला जी की मृत्यु के कारण के विषय में डॉक्टरों में यद्यपि मतभेद था, लेकिन अधिकांश भारतीयों का यह दृढ़ विश्वास है, कि कैप्टेन सॉण्डर्स के आक्रमण के आघात से ही उनकी मृत्यु हुई। इस मृत्यु के एक मास बाद, अनुमान है, कि प्रतिशोध की भावनाओं से प्रेरित होकर कैप्टेन सॉण्डर्स की हत्या कर डाली गई। हत्याकारी लापता रहे। बहुत समय बाद भगतसिंह, जिन्हें एसेम्ब्ली बम-काण्ड के मामले में सज़ा दी जा चुकी थी, और जिन्होंने स्वयं ही अपने को हिंसक क्रान्तिकारी स्वीकार किया था, कुछ अपने साथियों के साथ इस हत्या के लिए दोषी ठहराए गए। इस मामले के दौरान में कोर्ट में जो गवाहियाँ गुज़रीं, वे बहुत ही अपर्याप्त थीं। भगतसिंह एक अत्यन्त साहसी, निर्भीक और स्पष्टवादी युवक था। अपनी मातृ-भूमि के कल्याण के लिए वह किसी क्षण जीवनोत्सर्ग कर सकता था। उसने स्वयं ही कहा था, कि इस हत्याकाण्ड से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन वह और उसके साथी अपराधी ठहराए गए और फ़ैसले में उन्हें मृत्यु का दण्ड दिया गया। सारी अपीलें और सज़ा कम करने की प्रार्थनाएँ रद्द कर दी गईं और ठीक ऐसे समय, जब कि गाँधी जी काँग्रेस को इस बात का विश्वास दिलाने जा रहे थे, कि सरकार ने अपना हृदय परिवर्तन कर लिया है, वे नवयुवक फाँसी पर चढ़ा दिए गए। हम इस मनोवृत्ति को किस बात का परिचायक समझें? मेरा पहला ख़्याल यही हुआ, कि कुछ इर्विन-गाँधी समझौते के शत्रु अधिकारी इस समझौते को किसी भी तरह भङ्ग करने पर तुले हुए हैं, इसीलिए इन फाँसियों के देने में इतनी जल्दी की गई है। ठीक ऐसे समय, जब कि लॉर्ड इर्विन ने पुलिस-जाँच की माँग के सम्बन्ध में अपने मातहतों का समर्थन किया था, कुछ लोग, मालूम होता है, उन्हें गिरा देने के लिए ही तत्पर थे। इसीलिए उन्होंने उपर्युक्त अभियुक्तों को फाँसी दे देने में इतनी जल्दी की।

लेकिन सम्भव है, यह बात न हो। हो सकता है, कि भारत-सरकार के कुछ विभागों को अपने दमन की घातक नीति पर ही पूरा विश्वास हो। ये महाशय पूर्वीय देशों के निवासियों की मनोवृत्ति को समझने का दावा करते हैं और कहते हैं कि पूर्वीय मनोवृत्ति तो केवल पशुबल का आदर करना जानती है, उस पर और किसी बात का प्रभाव नहीं पड़ता। शायद, उनका ख़्याल है कि काँग्रेस इन फाँसियों से दब जायगी। परन्तु मेरा विश्वास है कि पूर्व और पश्चिम के बीच विषाक्त और अप्रिय सम्बन्ध पैदा करने के लिए सब से अधिक उत्तरदायी यही नीति है।

यही अवसर है कि इङ्गलैण्ड के निवासी चेत जायँ और समझ लें कि वास्तव में पूर्वीय और पश्चिमीय मनोवृत्ति में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। पूर्वीय या पश्चिमीय दोनों ही, चाहे थोड़े समय के लिए बल प्रयोग से भले ही दब जायँ, लेकिन याद रहे कि अवसर पाकर दबी हुई वस्तु अपने दूने वेग से उभड़ती है। मेरा तो अनुभव है और मैं जानता हूँ कि मेरे और भी मित्रों का ऐसा ही अनुभव है कि हिन्दुस्तानियों में अगर कोई विशेषता है, तो वह यही है, कि वे अल्प से अल्प उदारता, प्रेम और विश्वास से सहज ही वशीभूत हो जाते हैं। उनके ये लक्षण कमज़ोरी के चिन्ह कदापि नहीं हैं। वे थोड़े से भी विश्वास और सहानुभूति के आधार पर बड़ी शीघ्रता के साथ स्थायी मैत्री स्थापित कर लेते हैं। मेरा विश्वास है, कि हिन्दुस्तान के लोग अब भी दोस्ती चाहने वाले इङ्गलैण्ड का साथ दे सकते हैं। लेकिन बात यह है, कि बार-बार अमृतसर-काण्ड की पुनरावृत्ति करने से दोनों देशों की मैत्री मुश्किल होती जा रही है। उन लोगों को, जो वास्तव में पूर्व और पश्चिम में प्रेम स्थापित करना चाहते हैं, चाहिए कि भारतीयों के प्रति उदारता और सहृदयता का व्यवहार करें और अपने पुराने कृत्यों लिए के प्रायश्चित्त कर डालें।

* * *

महात्मा जी के नाम स्वर्गीय सुखदेव की खुली चिट्ठी

गत सप्ताह के सहयोगी "यङ्ग इण्डिया" में स्वर्गीय सुखदेव का एक पत्र, जो कहा जाता है, उन्होंने फाँसी के कुछ ही पूर्व महात्मा जी के पास भेजा था—प्रकाशित हुआ है, जिसका उत्तर भी महात्मा जी ने "यङ्ग इण्डिया" के इसी अङ्क में प्रकाशित किया है। दोनों इतने महत्वपूर्ण विषय हैं कि उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। श्री० सुखदेव का पत्र हिंसात्मक विचार के पक्षपातियों के सिद्धान्त जनता के सामने उपस्थित करता है और महात्मा जी का उत्तर अहिंसात्मक सिद्धान्तों का परिचायक है, अतएव पाठकों के विवेचनार्थ दोनों ही पत्रों का अविकल अनुवाद नीचे दिया जा रहा है।

—सं० 'भविष्य'

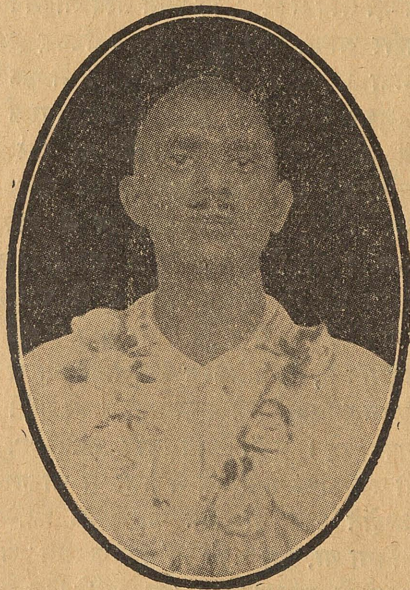
अत्यन्त सम्माननीय महात्मा जी,

आजकल के नए समाचारों से मालूम होता है, कि आपने सन्धि-चर्चा के बाद से क्रान्तिकारियों के नाम कई एक अपीलें निकाली हैं, जिनमें आपने उनसे कम से कम वर्तमान समय के लिए अपने क्रान्तिकारी आन्दोलन को रोक देने के लिए कहा है। वास्तविक बात यह है, कि किसी आन्दोलन को रोक देने का काम कोई सैद्धान्तिक या अपने वश की बात नहीं है। समय-समय की आवश्यकताओं का विचार करके आन्दोलन के नेता अपना और अपनी नीति का परिवर्तन किया करते हैं।

हमारा अनुमान है, कि सन्धि के वार्तालाप के समय आप एक क्षण के लिए भी यह बात न भूले होंगे, कि यह समझौता कोई अन्तिम समझौता नहीं हो सकता। मेरे ख़्याल से इतना तो सभी समझदार व्यक्तियों ने समझ लिया होगा, कि आपके सब सुधारों के मान लिए जाने पर भी देश का अन्तिम लक्ष्य पूरा न हो जायगा। कॉङ्ग्रेस, लाहौर कॉङ्ग्रेस के प्रस्तावानुसार स्वतन्त्रता का युद्ध तब तक लगातार जारी रखने के लिए बाध्य है, जब तक पूर्ण स्वाधीनता न प्राप्त हो जाय। बीच-बीच की सन्धियाँ और समझौते क्षणिक विराम मात्र हैं। जिनमें अगली लड़ाई के लिए अधिकाधिक शक्ति सङ्गठित करने का अवसर मिलता है। उपरोक्त सिद्धान्त पर ही किसी प्रकार का समझौता या विराम-सन्धि की कल्पना की जा सकती है।

समझौते के लिए उपयुक्त अवसर का तथा शर्तों का विचार करना नेताओं का काम है। यद्यपि लाहौर के पूर्ण स्वाधीनता वाले प्रस्ताव के होते हुए भी आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है, फिर भी वह प्रस्ताव ज्यों का त्यों बना हुआ है। हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के क्रान्तिकारियों का ध्येय इस देश में सोशलिस्ट प्रजातन्त्र प्रणाली स्थापित करना है। इस ध्येय में संशोधन के लिए ज़रा भी गुञ्जाइश नहीं है। वे तो अपना संग्राम, जब तक कि ध्येय न प्राप्त हो जाय और आदर्श की पूर्ण स्थापना न हो जाय, तब तक बराबर जारी रखने के लिए बाध्य हैं। परन्तु वे परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ अपनी युद्ध-नीति भी बदलते रहना जानते हैं। क्रान्तिकारियों का युद्ध भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण कर लेता है। कभी वह प्रकट रूप रखता है, कभी गुप्त रूप धारण कर लेता है; कभी केवल आन्दोलन के रूप में हो जाता है और कभी जीवन और मृत्यु का भयानक संग्राम करने लग जाता है। वर्तमान परिस्थितियों में क्रान्तिकारियों के सामने आन्दोलन रोक देने के लिए कुछ विशेष कारणों का होना तो आवश्यक ही है। परन्तु आपने हम लोगों के सामने ऐसा कोई निश्चित कारण उपस्थित नहीं किया, जिस पर विचार करके हम अपना आन्दोलन रोक दें। केवल भावुक अपीलें क्रान्तिकारियों के संग्राम में कोई प्रभाव नहीं पैदा कर सकतीं।

समझौता करके आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है, जिसके फल-स्वरूप आपके आन्दोलन के सब बन्दी छूट गए हैं। परन्तु क्रान्तिकारी बन्दियों के विषय में आप क्या कहते हैं? सन्, १९१५ के ग़दर पार्टी वाले राजबन्दी अब भी जेलों में सड़ रहे हैं, यद्यपि उनकी सज़ाएँ पूरी हो चुकी हैं। कोड़ियों मार्शल-लॉ के बन्दी अब भी जीवित ही क़ब्रों में गड़े हुए हैं! इसी प्रकार दर्जनों बब्बर अकाली क़ैदी जेल-यातना भोग रहे हैं। देवगढ़, काकोरी, मछुआ बाज़ार और लाहौर षड्यन्त्र-केस के अनेकों राजबन्दी अब भी जेलों में बन्द हैं। आधे दर्जन से अधिक षड्यन्त्र-केस लाहौर, दिल्ली, चटगाँव, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों में चल रहे हैं। दर्जनों क्रान्तिकारी फ़रार हैं, जिनमें बहुत सी तो स्त्रियाँ हैं। आधे दर्जन से अधिक क़ैदी अपनी फाँसियों की बाट जोह रहे हैं। इन सब के विषय में आप क्या कहते हैं? लाहौर षड्यन्त्र-केस के तीन राजबन्दी, जिन्हें फाँसी देने का हुक्म हुआ है और जिन्होंने संयोगवश देश में बहुत बड़ी ख्याति प्राप्त कर ली है, क्रान्तिकारी दल के



स्वर्गीय सुखदेव

सब कुछ नहीं हैं। दल के सामने केवल इन्हीं के भाग्य का प्रश्न नहीं है। वास्तव में इनकी सज़ाओं के बदल देने से देश का उतना कल्याण न होगा, जितना कि इन्हें फाँसी पर चढ़ा देने से होगा।

परन्तु इन सब बातों के होते हुए भी आप इनसे अपना आन्दोलन खींच लेने की सार्वजनिक अपीलें कर रहे हैं। वे अपना आन्दोलन क्यों रोक लें, इसका आपने कोई निश्चित-कारण नहीं बतलाया? ऐसी परिस्थिति में आपकी इन अपीलों के निकालने का मतलब तो यही है, कि आप क्रान्तिकारियों के आन्दोलन को कुचलने में नौकरशाही का साथ दे रहे हैं! आप इन अपीलों के द्वारा स्वयं क्रान्तिकारी दल में विश्वासघात और फूट की शिक्षा दे रहे हैं। अगर यह बात न होती, तो आपके लिए सब से अच्छा उपाय यह था कि आप कुछ प्रमुख क्रान्तिकारियों से मिल कर इस विषय की सम्पूर्ण बातचीत कर लेते। आपको उन्हें आन्दोलन खींच लेने की सलाह देने के पहले अपने तर्कों को समझाने का प्रयत्न करना चाहिए था। मेरा ख़्याल है, कि साधारण जनसमुदाय की तरह आपकी भी यह धारणा न होगी कि क्रान्तिकारी तर्कहीन होते हैं और उन्हें केवल विनाशकारी कार्यों में ही आनन्द आता है। हम आपको बतला देना चाहते हैं, कि यथार्थ में बात इसके बिल्कुल विपरीत है। वे प्रत्येक क़दम आगे बढ़ाने के पहले अपनी चतुर्दिक परिस्थितियों का विचार कर लेते हैं। उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी का ज्ञान हर समय बना रहता है। वे अपने क्रान्तिकारी विधान में रचनात्मक अंश की उपयोगिता को मुख्य स्थान देते हैं, यद्यपि मौजूदा परिस्थितियों में उन्हें केवल विनाशात्मक अंश की ओर ध्यान देना पड़ा है।

गवर्नमेण्ट क्रान्तिकारियों के प्रति पैदा हो गई सार्वजनिक सहानुभूति तथा सहायता को नष्ट करके किसी तरह उन्हें कुचल डालना चाहती है। अकेले में वे सहज ही कुचल दिए जा सकते हैं। ऐसी हालत में किसी प्रकार की भावुक अपील निकाल कर उनमें विश्वासघात और फूट पैदा करना, बहुत ही अनुचित और क्रान्ति-विरोधी कार्य होगा। इसके द्वारा गवर्नमेण्ट को, उन्हें कुचल डालने में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है।

इसलिए आपसे हमारी प्रार्थना है, कि या तो आप कुछ क्रान्तिकारी नेताओं से, जो कि जेलों में हैं, इस विषय में कोई बातचीत करके कुछ निर्णय कर लीजिए या फिर अपनी अपीलें बन्द कर दीजिए। कृपा करके उपरोक्त दो मार्गों में से किसी एक का अनुसरण कर लीजिए और जिसका अनुसरण कीजिए, उसे पूरे दिल से कीजिए। अगर आप उनकी सहायता नहीं कर सकते, तो कृपा करके उन पर रहम कीजिए। और उन्हें अकेला छोड़ दीजिए। वे अपनी रक्षा अपने आप कर लेंगे। वे अच्छी तरह से जानते हैं, कि भविष्य के राजनीतिक युद्ध में उनका नायकत्व निश्चित है। जनसमुदाय उनकी ओर बराबर बढ़ता आ रहा है और वह दिन दूर नहीं है, जब कि उनके नेतृत्व में और उनके झण्डे के नीचे जन समुदाय उनके सोशलिस्ट प्रजातन्त्र के उच्च ध्येय की ओर बढ़ता हुआ दिखाई पड़ेगा।

या, यदि आप सचमुच उनकी सहायता करना चाहते हैं, तो उनका दृष्टिकोण समझने के लिए उनसे बातचीत कीजिए और सम्पूर्ण समस्या पर विस्तार के साथ विचार कर लीजिए।

आशा है, आप उपरोक्त प्रार्थना पर कृपया विचार करेंगे और अपनी राय सर्व-साधारण के सामने प्रकट कर देंगे।

आपका,
'अनेकों में से एक'

* * *

अनेकों में से एक (?)

(महात्मा गाँधी का उत्तर)

'अनेकों में से एक' द्वारा लिखित यह पत्र, सुखदेव का पत्र है। श्रीयुत सुखदेव सर्दार भगतसिंह के साथी थे। उपरोक्त पत्र उनकी मृत्यु के बाद मुझे मिला था। समयाभाव वश मैं इस पत्र को इससे पहले नहीं प्रकाशित कर सका। पत्र ज्यों का त्यों छाप दिया गया है।

पत्र का लेखक "अनेकों में से एक" नहीं है। अनेकों राजनीतिक स्वाधीनता के लिए फाँसी नहीं स्वीकार

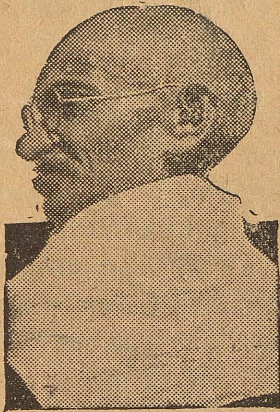
करते। राजनीतिक हत्या चाहे कितनी ही निन्दनीय क्यों न हो, परन्तु ऐसे भयानक कार्यों के लिए प्रेरित करने वालों से, उनका देश-प्रेम और साहस छिपाए नहीं छिप सकता। हमें इस बात की आशा करनी चाहिए कि राजनीतिक हत्या का पन्थ बढ़ने न पावे। यदि स्वाधीनता प्राप्त करने का भारतीय प्रयोग सफल हो गया, जिसकी सफलता में कोई सन्देह नहीं है, तो राजनीतिक हत्या का पेशा दुनिया से सदैव के लिए उठ जायगा। जो हो, मैं तो इसी विश्वास को लेकर अपना काम कर रहा हूँ।

पत्र-लेखक का यह कहना ठीक नहीं है, कि मैंने क्रान्तिकारियों से उनके आन्दोलन स्थगित कर देने के लिए केवल भावुक अपीलें की हैं, विपरीत इसके मेरा तो दावा है, कि मैंने उन्हें वैसा करने के ठोस कारण बतलाए हैं। यद्यपि उन कारणों को मैं कई बार इस पत्र के कॉलमों में प्रकाशित कर चुका हूँ, फिर भी उन्हें यहाँ दुहराता हूँ:—

(१) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों से हम ध्येय के निकट नहीं पहुँचे।

(२) इनके कारण देश का सैनिक व्यय बढ़ गया है।

(३) इनके कारण सरकार का दमन-चक्र बढ़ गया है, जिससे देश का कोई लाभ नहीं हुआ।



महात्मा गाँधी

(४) जब-जब कहीं क्रान्तिकारियों द्वारा कोई हत्या हुई है, तब-तब उस स्थान के लोगों पर उसका बुरा प्रभाव पड़ा है।

(५) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों द्वारा जन-समुदाय की जागृति में कोई सहायता नहीं पहुँची।

(६) जन-समुदाय पर इनके कामों का असर दो तरह से बुरा पड़ा है। एक तो जनता को अतिरिक्त व्यय का भार सहन करना पड़ा है, दूसरे सरकार के अप्रत्यक्ष क्रोध का निशाना बनना पड़ा है।

(७) भारत की भूमि तथा उसकी परम्परा क्रान्तिकारी हत्याओं के उपयुक्त नहीं है। इस देश के इतिहास से जो शिक्षा मिलती है, उससे मालूम होता है कि राजनीतिक हिंसा यहाँ उन्नति नहीं कर सकती।

(८) यदि क्रान्तिकारी, जनसमुदाय को अपने मत में परिवर्तित कर लेने का विचार करते हैं, तो उस हालत में हमें स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए बहुत ज़्यादा तथा अनिश्चित समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

(९) यदि जनसाधारण हिंसात्मक उपाय का समर्थक हो भी जाय, तो उसका परिणाम अन्त में अच्छा नहीं हो सकता। यह उपाय, जैसा कि दूसरे देशों में हुआ है, स्वयं उस उपाय के सञ्चालकों को ही नष्ट कर देता है।

(१०) क्रान्तिकारियों के सामने उनके विपरीत उपाय अहिंसा की सार्थकता का भी प्रत्यक्ष प्रदर्शन हो चुका है। उन्होंने देखा होगा, कि अहिंसात्मक आन्दोलन, क्रान्तिकारियों की स्फुट हिंसा तथा कुछ-कुछ स्वयं अहिंसात्मक आन्दोलन वालों की हिंसा के होते हुए भी, कैसे बराबर अपनी गति पर चलता रहा।

(११) क्रान्तिकारी मेरी इस बात को मान लें, कि उनके आन्दोलन ने अहिंसात्मक आन्दोलन को कोई लाभ नहीं पहुँचाया, बल्कि हानि ही पहुँचाई है। यदि देश का वातावरण पूर्ण रीति से शान्त रहता तो हम अपने लक्ष्य को अब से पहले ही प्राप्त कर चुके होते।

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि उपरोक्त बातें ठोस सत्य हैं, केवल भावुक अपीलें नहीं हैं। पत्र-लेखक ने, मैंने क्रान्तिकारियों से अब तक जो सार्वजनिक अपीलें की हैं, उनका विरोध किया है। लेखक का कहना है कि इन सार्वजनिक अपीलों को निकाल कर मैंने नौकरशाही को क्रान्तिकारियों के आन्दोलन दबाने में सहायता की है। नौकरशाही को क्रान्तिकारी आन्दोलन दबाने के लिए मेरी सहायता की आवश्यकता नहीं है। वह तो अपने अस्तित्व के लिए क्रान्तिकारियों से और मुझसे दोनों से लड़ रही है। उसे अहिंसात्मक आन्दोलन हिंसात्मक आन्दोलन की अपेक्षा अधिक भयानक मालूम होता है। वह हिंसात्मक आन्दोलन का सामना करना तो जानती है; परन्तु अहिंसात्मक से घबड़ाती है, जिसने उसकी जड़ बहुत पहले ही हिला दी है।

राजनीतिक हत्या करने वाले व्यक्ति अपने भीषण जीवन-पथ पर पैर रखने के पहले ही समझ लेते हैं, कि उन्हें अपने कार्यों का कौन सा मूल्य देना पड़ेगा। ऐसी अवस्था में सम्भवतः मेरा कोई भी कार्य उनकी स्थिति को किसी प्रकार से अधिक आशङ्काजनक नहीं बना सकता।

यह जान कर, कि क्रान्तिकारी दल अपनी कार्रवाइयों को छिप कर करता है, मेरे पास उस दल के अज्ञात सदस्यों तक अपील पहुँचाने का, सिवा सार्वजनिक रूप से लिखने के और कोई दूसरा उपाय नहीं रह जाता। मैं कह सकता हूँ, कि मेरी सार्वजनिक अपीलें बिल्कुल निरर्थक नहीं गईं। मेरे सहयोगियों में पहले के बहुत से क्रान्तिकारी हैं।

पत्र-लेखक की शिकायत है कि सत्याग्रही राजबन्दियों के अतिरिक्त दूसरे राजबन्दी नहीं छोड़े गए। 'यङ्ग इण्डिया' के पृष्ठों में लिख कर मैं बतला चुका हूँ कि किन कारणों से अन्य राजनीतिक बन्दियों के छोड़ने के विषय में मैं ज़्यादा ज़ोर नहीं दे सका। स्वयं मैं तो सब बन्दियों के छूट जाने के पक्ष में हूँ, और मैं उनके छुटकारे के लिए कोई प्रयत्न उठा न रक्खूँगा। मुझे मालूम है, कि कुछ बन्दियों को तो अब से बहुत पहले ही छूट जाना चाहिए था। कॉङ्ग्रेस ने इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव भी पास किया है। उसने श्रीयुत नैरीमन को अब तक के न छूटे हुए राजबन्दियों की नामावली बनाने का काम सौंप दिया है। नामावली तैयार हो जाते ही उन्हें छुड़ाने का प्रयत्न किया जायगा। परन्तु जो लोग छूट चुके हैं उन्हें क्रान्तिकारी हत्याओं को रोक कर हमारी सहायता करनी चाहिए। हत्या और छुटकारा दोनों बातें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। निस्सन्देह ऐसे भी राजबन्दी हैं, जिन्हें तो हर हालत में छुड़ाना पड़ेगा। मैं इस सम्बन्ध में लोगों को यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ, कि राजबन्दियों के छुटकारे में देरी का कारण हमारी इच्छा की कमी नहीं है, वरन् योग्यता की कमी है। यह भी याद रहे, कि यदि स्थायी समझौता हो गया तो सम्पूर्ण राजनीतिक बन्दियों को छोड़ना ही पड़ेगा। यदि स्थायी समझौता न हुआ, तो अभी जो लोग बाहर उनके छुड़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं, वे उन्हीं के साथ जेल के अन्दर दिखलाई पड़ेंगे!!

* * *

स्वर्गीय सुखदेव का पत्र ?

सरकारी विज्ञप्ति की नक़ल

श्री० सुखदेव के चचा की शङ्का

[स्वर्गीय श्री० सुखदेव के पास एक ऐसी चिट्ठी पाई जाने के विषय में—जिससे स्वर्गीय मि० सॉण्डर्स की हत्या करने की बात स्वीकार की गई बतलाई जाती है—गवर्नमेण्ट की ओर से जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है उसे पाठकों के मनोरञ्जनार्थ नीचे उद्धृत किया जाता है।

—सं० "भविष्य"]

लाहौर और युक्त प्रान्त की क्रान्ति के मामले में सज़ा पाने के पहले भगतसिंह को छोड़ कर सभी अभियुक्त बोर्स्टल जेल के एक हिस्से में रक्खे गए थे, जहाँ साधारणतया विचाराधीन क़ैदी रक्खे जाते हैं। भगतसिंह को एसेम्बली बम-केस में सज़ा मिल चुकी थी, इसलिए वे लाहौर सेण्ट्रल जेल में रक्खे गए थे।

७वीं अक्टूबर, १९३० को सज़ा सुनाई जाने के बाद नियमानुसार अभियुक्तों को सेण्ट्रल जेल में भेजे जाने की आज्ञा दी गई। यह स्थान-परिवर्तन पुलिस के पहरे में किया जाता है, अतः यहाँ भी पुलिस का प्रबन्ध किया गया। पुलिस के अफ़सर ने नियमानुसार अपने अधीन क़ैदियों की तलाशी ली। सुखदेव के हाथ में एक असमाप्त चिट्ठी पाई गई, जो हिन्दी में थी। इसे वह नष्ट कर देने का प्रयत्न कर रहा था, किन्तु नष्ट होने के पहले ही वह छीन ली गई। यह पत्र प्राप्त होने के बाद से ही एक जवाबदेह सरकारी अफ़सर के पास रक्खा गया। लेखक की अन्तिम अपील के फ़ैसले तक के लिए पत्र का प्रकाशन रोक लिया गया था। जनता की जानकारी के लिए पत्र का मज़मून यहाँ दिया जाता है:—

"प्यारे भाई, बहुत दिनों से मेरे हृदय में कुछ ऐसे भाव उठ रहे थे, जिन्हें कतिपय कारणों से मुझे अब तक दबाना पड़ा था; किन्तु मैं अब अधिक उन्हें नहीं दबा सकता और अब ऐसा करना ठीक भी नहीं समझता हूँ। मैं नहीं कह सकता, मेरे इस प्रकार के भावों को आप किस दृष्टि से देखेंगे। न मालूम आप उन पर ध्यान देंगे या नहीं, और आप उन्हें पसन्द करेंगे या नहीं। किन्तु मैं जो ठीक समझता हूँ वही कर रहा हूँ। उनके अनुसार कार्य करना आपकी इच्छा पर है। यदि आप इस पत्र का उत्तर दें तो बहुत अच्छी बात हो। इससे लाभ यह होगा कि मेरा भ्रम-निवारण हो जायगा, और मुझे इस बात का पता चल जायगा कि जेल की चहारदीवारी के भीतर बन्द रहने से मेरी विचारशक्ति तो नष्ट नहीं हो गई है, जिससे मैं व्यावहारिक क्षेत्र से दूर हट कर केवल हवाई क़िले बनाने में मस्त हूँ।

कार्य

"हम लोगों के जेल में आने के बाद से, बाहर की आबहवा कुछ गर्म रही है। 'कार्य' के विषय में अख़बारों से यह पता चलता है कि प्रत्येक प्रान्त में विशेष कर पञ्जाब और बङ्गाल में परिस्थिति कठिन है। वहाँ बम तो खेल सा हो गया है। पहले कभी इतने "कार्य" नहीं किए गए थे। इन्हीं कार्यों के विषय में मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ; और इन "कार्यों" के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट करने के उपरान्त मैं अपने संस्था की इस "कार्य" विषयक नीति को बताऊँगा।

"हम लोगों ने केवल दो "कार्य" किए, एक सॉण्डर्स की हत्या और दूसरा असेम्बली में बम-काण्ड। इससे पहले भी हम लोगों ने दो-तीन बार प्रयत्न किया था, किन्तु सफलता नहीं मिली थी। इस सम्बन्ध में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि हम लोगों के कार्य तीन प्रकार के थे—(१) प्रचार, (२) धन, (३) विशेष। इन तीनों में हमारा विशेष ध्यान, प्रचार-कार्य की ओर था। अन्य दो पर आवश्यकता पड़ने ही पर ध्यान दिया जाता था। इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि उनका महत्व कम था, किन्तु हमारे अस्तित्व का उद्देश्य तो प्रचार-कार्य। अन्य दो प्रकार के कार्य हमारे उद्देश्य नहीं थे। इन तीनों विषयों को साफ़-साफ़ समझाने के लिए मैं आपके सामने ये तीन घटनाएँ रखता हूँ—(१) असेम्बली-काण्ड, (२) पञ्जाब नेशनल बैङ्क की डकैती, (३) जगदीश चटर्जी को छुड़ाने का प्रयत्न।

प्रचार

"मैं पिछले दोनों प्रकार के 'कार्यों' को छोड़ कर यहाँ पर प्रचार-कार्य के ऊपर विचार करना चाहता हूँ। प्रचार शब्द से शायद इस प्रकार के कार्यों का बोध नहीं होता है। असल में ये कार्य जनता की इच्छा के अनुकूल ही होते थे। उदाहरणार्थ सॉण्डर्स की हत्या का ही कार्य ले लीजिए। जब लाला जी पर लाठी चलाई गई, तो सारे देश में बहुत ही खलबली मच गई। सरकार आग में और भी घी छिड़कने लगी। जनता बहुत ही असन्तुष्ट हो गई। जनता का ध्यान विप्लववादियों की ओर आकर्षित करने का यह अच्छा मौक़ा हम लोगों के हाथ में था।

"सब से पहले हम लोगों ने सोचा कि एक आदमी पिस्तौल लेकर जाय और स्कॉट को मार कर अपना आत्म-समर्पण कर दे। अपने बयान में वह कहे कि जब तक विप्लववादी जीवित हैं; तब तक राष्ट्रीय अपमान का बदला इसी प्रकार लिया जायगा। यह भी सोचा गया था कि तीन आदमी भेजे जायँ, क्योंकि मनुष्य की शक्ति बहुत कमज़ोर है। इसमें भी अपने बचाने का हमारा कोई प्रधान उद्देश्य नहीं था। ऐसा करने की इच्छा भी नहीं थी। हमारा विचार था कि हत्या के बाद यदि पुलिस हमारा पीछा करे तो उसका मुक़ाबला किया जाय। और जो जीता बचे और गिरफ़्तार किया जाय, वह अपना बयान दे।

प्रयत्न

"यह विचार कर, हम लोग डी० ए० वी० कॉलेज के होस्टल में आए। कार्य के समय ऐसा प्रबन्ध किया गया था कि भगतसिंह, जो स्कॉट को पहचान सकता था, पहली गोली दाग़े और राजगुरु थोड़ी दूर पर खड़ा होकर भगतसिंह की रक्षा करे, और यदि कोई भगतसिंह पर आक्रमण करे तो राजगुरु उसका मुक़ाबला करे। इसके बाद भगतसिंह और राजगुरु दोनों भाग जायँ। भागते समय पीछा करने वालों का मुक़ाबला करना सम्भव नहीं है, इसलिए पण्डित जी उन पीछा करने वालों से उनकी रक्षा करने के लिए तैनात रहें। साथ ही साथ हम लोगों ने यह भी निश्चय किया था कि अपनी जान बचाने की अपेक्षा उसके मारने की ओर ही विशेष ध्यान दिया जाय। हम लोग नहीं चाहते थे कि हमारी गोली का शिकार अस्पताल में मरे। इसी कारण

श्री० सुखदेव के चचा लाला चिन्तराम थापर को विश्वस्त-सूत्र से पता चला है कि फाँसी के पहले भगतसिंह और उनके साथियों ने अपने सम्बन्धियों के पास पत्र लिखा था, किन्तु वे उनके सम्बन्धियों को नहीं मिले। लाला चिन्तराम ने पञ्जाब-सरकार के होम सेक्रेटरी के पास दो पत्र भेजे हैं। पहली चिट्ठी में वे लिखते हैं:—

पत्र नं० १

"मुझे विश्वस्त-सूत्र से यह पता चलता है कि सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु ने फाँसी होने के पहले अपने सम्बन्धियों के लिए पत्र लिखा था। ये तीनों पत्र उपस्थित मैजिस्ट्रेट को दे दिए गए और वहीं उसी समय उन पर मुहर दे दी गई। ये पत्र अभी तक उनके सम्बन्धियों को नहीं दिए गए हैं। यह प्रार्थना की जाती है कि वे चिट्ठियाँ हम लोगों को बहुत शीघ्र दे दी जायँ।"

दूसरी चिट्ठी में लाला चिन्तराम लिखते हैं:—

पत्र नं० २

"स्वर्गीय श्री० सुखदेव के पास एक अधूरी चिट्ठी मिलने के सम्बन्ध में, जो उनकी लिखी हुई बताई जाती है, आपने जो विज्ञप्ति प्रकाशित की है, उसके सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूँ कि सुखदेव का एक मात्र छोटा भाई मथरादास बिल्कुल ही हिन्दी नहीं जानता, और यह सोचने की बात है कि यदि सुखदेव मथरादास के पास पत्र लिखना चाहता तो वह कदापि जान-बूझ कर उस भाषा में चिट्ठी न लिखता, जिस भाषा को उसका भाई नहीं जानता है।"

राजगुरु के गोली दाग़ने पर भी भगतसिंह ने तब तक गोली छोड़ना बन्द नहीं किया जब तक कि उसे विश्वास नहीं हो गया कि उसका कार्य सिद्ध हो गया।

राजनैतिक हत्या

"हत्या के बाद भागना हमारा उद्देश्य नहीं था। हम लोग जनता में यह विचार उत्पन्न कर देना चाहते थे कि यह एक राजनैतिक हत्या थी, और इसमें भाग लेने वाले मजनूँ के साथी नहीं, बल्कि विप्लववादी थे। इसलिए हम लोगों ने इसके बाद पर्चे चिपकाए, और कुछ पर्चे प्रकाशनार्थ भी भेजे।

"दुःख है कि उस समय न तो हमारे नेताओं ने और न प्रेस वालों ने ही हमें कोई सहायता पहुँचाई, और सरकार को धोखा देने के लिए उन लोगों ने अपने देशवासियों को धोखा दिया। हम लोग चाहते थे कि वे ज़रा घुमा-फिरा कर यह लिखें कि यह हत्या एक राजनैतिक हत्या थी और यह सरकार की नीति का फल था, और सरकार ही ऐसे कार्यों के लिए उत्तरदायी थी। किन्तु यह सब बातें जानते हुए भी और मेरे बार-बार कहने पर भी उन लोगों ने ऐसा कहने का साहस नहीं किया। यह अच्छा हुआ कि हम लोग गिरफ़्तार हो गए और जनता के सामने सारा भेद खुल गया। प्यारे भाई, केवल इसी कारण मैं अपनी गिरफ़्तारी को अहोभाग्य समझता हूँ। इस कार्य के विषय में कह चुकने के बाद अब मैं उसकी नीति पर कुछ कहना चाहता हूँ।

(नोट—ठीक इसी समय हमें मालूम हुआ है कि आज मामले का फ़ैसला हो जायगा। ख़ाँ साहब और बख़्शी जी यह पूछने के लिए आए कि हम लोग वहाँ जाना चाहते हैं या नहीं। हम लोगों ने इन्कार कर दिया।)

सार्वजनिक सहायता

"मैं दिखाना चाहता हूँ कि हमारा विचार था कि जनता की इच्छा के अनुकूल हो हमारा कार्य हो, और वे सरकार के अत्याचारों के विरोध में किए जायँ, जिससे जनता इस ओर अपनी सहानुभूति प्रदर्शित करे, और सहायता दे। इसी विचार से हम लोग जनता में विप्लववादियों का आदर्श और उनकी चालों का प्रचार करना चाहते थे। ऐसे विचारों का उसके मुख से प्रकट होना, जो इन्हीं विचारों के लिए अब फाँसी पर लटकने वाला है, अधिक गौरवप्रद है।

"हमारा यह विचार था कि सरकार से प्रकट रूप से मुक़ाबला पड़ने पर, हम लोग अपने सङ्गठन के लिए एक निश्चित कार्यक्रम तैयार कर सकेंगे।

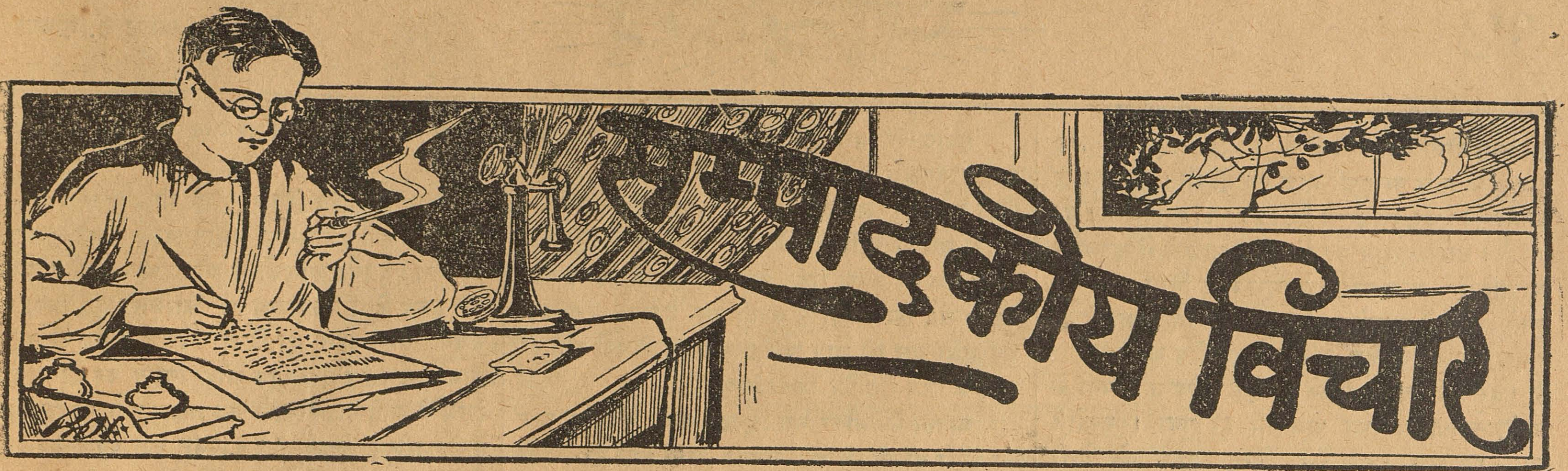
धन-व्यवस्था

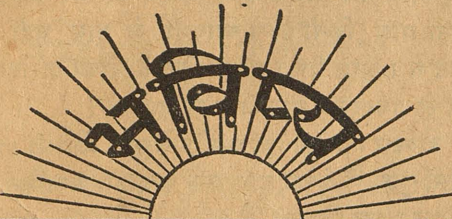
"मैं अन्य दो प्रकार के कार्यों के सम्बन्ध में अधिक नहीं कहना चाहता। धन की व्यवस्था के सम्बन्ध में, उसके लिए डकैतियाँ करने में अधिक ध्यान और शक्ति ख़र्च करने की आवश्यकता नहीं थी, जैसा कि बङ्गालियों ने किया है। अनेक छोटी-मोटी डकैतियाँ सफल नहीं हुई हैं। हम लोगों ने विचार करने के पश्चात् अपने को जुएबाज़ी के लिए तैयार किया, जिसमें यदि हम सफल होकर निकल आवें तो एक बार ऐसा करके हम अपना कार्य ठीक तरह से कर सकेंगे, और धन की समस्या भी हल हो जायगी।

"सॉण्डर्स की हत्या के बाद, धन के लिए हमें बहुत सोच-विचार नहीं करना पड़ा। हम लोग शान्तिपूर्वक जितना धन इकट्ठा कर सकते थे, डकैतियों से उतना नहीं मिलता था। आजकल तो यह बहुत आसान हो गया है।

"विशेष कार्य अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर ही किए जाने चाहिए। उनकी संख्या भी परिमित ही होनी चाहिए।"

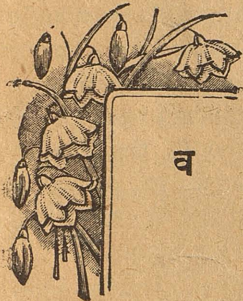
* * *





७ मई, सन् १९३१

स्वदेशी आन्दोलन



वर्तमान सभ्यता भौतिक समृद्धि के आधार पर टिकी हुई है। शिल्प, वाणिज्य और व्यवसाय उसके साधन हैं; अर्थ उसका उपास्यदेव और सङ्गठन उसकी शक्ति है। आजकल संसार में सभ्यता और असहाय राष्ट्रों के उपकार के नाम पर जो कुछ भी हो रहा है, वह है आर्थिक लूट के लिए साम्राज्य का विस्तार और व्यापार की आड़ में शासित जातियों का रक्त-शोषण! जो जाति आजकल सङ्गठित और अपनी ऐहिक आवश्यकताओं की पूर्ति में स्वतन्त्र नहीं है, वह सुखी और स्वाधीन नहीं रह सकती। विदेशी व्यापारी ज़बरदस्ती उसके हाथों अपना माल बेच कर उसके पतन का मार्ग खोल देते हैं। पहले उस जाति को जीवन की कई आवश्यक सामग्रियों के लिए विदेशी व्यापारियों पर निर्भर रहना सिखाया जाता है। फिर कुछ दिनों में—जब उसका रहा-सहा व्यवसाय भी नष्ट हो जाता है और उसके चरित्र में पर-निर्भरता का भाव स्थायी रूप से घर कर लेता है, तो उसे विलासिता की शिक्षा दी जाती है। विदेशी व्यापारी उस जाति के भोले-भाले व्यक्तियों के सामने अपने देश की बनी हुई भड़कीली और मोहक वस्तुएँ लाकर बिखेर देते हैं। भोग-विलास का प्रत्येक सामान उनके सामने सजा कर रख दिया जाता है। निरुद्योगी जाति में परिश्रम की ओर से विरक्ति और भोग की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति होती ही है—वह रङ्ग-बिरङ्गी भड़कीली वस्तुओं को देख कर उन पर मुग्ध हो जाती है। उन्हें पाने के लिए उसका मन लालायित हो उठता है। विक्षिप्त की भाँति वह अपना सर्वस्व अर्पण कर, विलास की प्रचण्ड अग्नि में कूद पड़ती है। विदेशी व्यापारी समझते हैं, हमारा जादू काम कर गया। वे उस अबोध जाति के हाथों में मिट्टी और पत्थर के खिलौने देकर उससे अमूल्य खाद्य पदार्थ और उसके देश की अन्य उपयोगी उपज ठग लेते हैं। इस प्रकार वह विलासी राष्ट्र दिनोंदिन दुखी और दरिद्र होने लगता है तथा उसकी उन्नति और विकास के शत्रु विदेशी व्यापारी उनका ख़ून चूस-चूस कर मोटे और लाल होने लगते हैं।

हम ऊपर कह आए हैं कि वर्तमान युग आर्थिक उत्कर्ष का युग है। इस युग में जीवन के प्रत्येक अङ्ग पर आर्थिक दृष्टि से विचार किया जाता है। धर्म की व्याख्या अर्थशास्त्र के शब्दों में होती है। समाज-निर्माण का प्रश्न आर्थिक सङ्घर्ष के समन्वय का प्रश्न समझा जाता है। आर्थिक समस्याएँ ही राष्ट्रों के राजनीतिक भाग्य का निर्णय करती हैं। जो देश आर्थिक दृष्टि से परतन्त्र होता है, उसका राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र रहना असम्भव हो जाता है। विदेशी व्यापारियों का बढ़ता हुआ समूह धीरे-धीरे उसके राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप करने लगता है और अन्त में उसकी स्वतन्त्रता अपहरण करके उसका शासक बन बैठता है। ऐसे शासकों की नीति क्या होगी, यह आसानी से समझ में आ सकता है। विदेशी बनियों की शासन-नीति का एकमात्र उद्देश्य होता है उस देश को चिरकाल तक परतन्त्र बनाए रख कर उसके रक्त से शासक जाति को पुष्ट करना!

विदेशी शासक अपने देश के शिल्प और व्यापार को प्रोत्साहन देते हैं और शासित जाति के उद्योग-धन्धों को नष्ट करते हैं। इस डकैती को स्थायी बनाने के लिए शासक जाति नाना प्रकार के कुत्सित और हृदयहीन उपायों का अवलम्बन करती है। वह शासित जाति के मन और हृदय पर अधिकार स्थापित करने के लिए उसके प्राचीन गौरव और साहित्य को नष्ट करने का प्रयत्न करती है। उसका सामाजिक सङ्गठन छिन्न-भिन्न कर देती है तथा उस जाति में विदेशी भावों का प्रचार करती है! विदेशी शिक्षा के द्वारा उस देश के युवकों की मनोवृत्ति को ऐसे साँचे में ढाल देती है, कि वे शासक जाति के फ़ैशन और आमोद-प्रमोद का अनुकरण करने में ही अपने को धन्य समझने लगते हैं! क्रमशः शासित जाति के धर्म, उसकी संस्कृति, उसकी सभ्यता और उसके सामाजिक जीवन—सब पर कुठाराघात होता है। वह जाति मृतप्राय हो जाती है और फल-स्वरूप कुछ ही काल के बाद उसका नाम इतिहास के पृष्ठों में शेष रह जाता है! इस हृदयहीन हत्या का स्मरण करके क्रूर से क्रूर मनुष्य का हृदय भी एक बार काँप उठता है। नृशंसता की पराकाष्ठा के एक ऐसे ही भयावने दृश्य को देख कर एक यूरोपीय विद्वान चिल्ला उठा था—

". . . from the contemplation of which, the moralist will shrink, and the Christian protest against, with abhorrence. . ."*

अर्थात्—"......जिसका विचार करके कोई भी सदाचारी मनुष्य एक बार काँप उठेगा और कोई भी सच्चा ईसाई जिसका घृणा के साथ विरोध किए बिना नहीं रह सकता।......"

शासित जाति के अर्थ से लेकर आत्मा तक का विनाश करने के बाद ही शासक जाति विश्राम लेती है। इस राक्षसी नीति के कुचक्र में पड़ कर संसार की कितनी ही मनोरम सभ्यताएँ नष्ट हो चुकी हैं!! सभ्य संसार का सर्व-प्रथम मार्ग-प्रदर्शक मिश्र आज विदेशियों के पैरों के नीचे कराह रहा है! बौद्ध-धर्म के शान्त वातावरण में निवास करने वाला, महात्मा कनफ़्युशियस की तपोभूमि चीन अस्त-व्यस्त और बेहाल है! अमेरिका, दक्षिण और मध्य अफ़्रिका और ऑस्ट्रेलिया के आदि-निवासियों का आज दुनिया के परदे पर कहीं नामो-निशान नहीं। वे यूरोपीय जातियों की अर्थ-पिपासा की नाशक ज्वाला में पड़ कर अनन्त काल के लिए विलीन हो गईं! भारतवर्ष भी आज इसी नीति के चङ्गुल में फँसा हुआ है। अङ्गरेज़-व्यापारियों के द्वारा उसके लहलहाते हुए जीवन, मनोहर ग्राम-संस्थाओं और उन्नतिशील कला-कौशल के दारुण सर्वनाश का लोमहर्षक वर्णन सुनने के लिए पाठकों को हृदय थाम लेना पड़ेगा।

* The Calcutta Review, vol. vii, (1847) p. 226.

भारतवर्ष में अङ्गरेज़ी सत्ता के विस्तार की प्रत्येक घटना इस बात की साक्षी देती है, कि भारतवर्ष का शासन इङ्गलैण्ड के आर्थिक लाभ की दृष्टि से किया जाता है। प्राचीन काल से अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक भारतवर्ष की अपूर्व समृद्धि का समाचार संसार के कोने-कोने तक फैला हुआ था। भारत के साथ व्यापार करके इटली के समुद्रतटवर्ती नगर वेनिस, मिलन, फ़्लॉरेन्स इत्यादि यूरोप के नन्दन कानन बन गए थे। यूरोप के लोग भारत को सोने की चिड़िया समझते थे और इस चिड़िया को फँसा कर मालामाल होने की तीव्र आकांक्षा ने ही उन्हें भारतवर्ष का जल-मार्ग ढूँढ़ निकालने में प्रवृत्त किया था। भारतवर्ष की खोज में भटकते हुए कोलम्बस ने एक नई दुनिया का आविष्कार कर दिया; किन्तु ब्रेज़िल और पेरू के सोने की खानों ने यूरोप की अर्थ-लिप्सा को सन्तुष्ट करने में सफलता नहीं पाई। इससे तत्कालीन यूरोप के भयङ्कर अर्थ-लोभ का कुछ पता लगता है। भारतवर्ष में आने के बाद पोर्चुगीज़, डच, फ्रेञ्च और अङ्गरेज़ व्यापारी भारतीय व्यापार पर एकाधिपत्य स्थापित करने के लिए व्याकुल हो उठे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इन लोगों ने अनेक पारस्परिक युद्धों में एक-दूसरे के ख़ून से अपने हाथ तक रँगे! अन्त में भारत के दुर्भाग्य या सौभाग्य से महावीर नेपोलियन के शब्दों में "बनियों के राष्ट्र" (Nation of Shopkeepers) अङ्गरेज़ों को इस कलह में सफलता मिली।

बङ्गाल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास बेईमानी, घूसख़ोरी और भयङ्कर हत्याओं का इतिहास है। विलियम हॉविट नामक एक अङ्गरेज़ लिखता है—

". . . the mode by which the East India Company has possessed itself of Hindostan, is the most revolting and un-Christian that can possibly be conceived."*

अर्थात्—"जिस प्रकार से ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान पर अधिकार जमाया है, उससे अधिक वीभत्स और ईसाई सिद्धान्तों के विरुद्ध किसी दूसरे प्रकार की कल्पना तक नहीं की जा सकती।"

नवाब सिराजुद्दौला कम्पनी की बेईमानी और धींगाधींगी का नियन्त्रण करना चाहता था। इसी अपराध के लिए शान्त-स्वभाव और प्रजाप्रिय सिराजुद्दौला को सिहा-

* The English in India—System of Territorial Acquisition, by William Howitt.

सन-च्युत होना पड़ा! दिल्ली के सम्राट ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माल पर चुङ्गी माफ़ कर दी थी। नवाब मीर क़ासिम ने देखा, कि इससे देशी प्रजा का व्यापार नष्ट हो रहा है। उसने एलान कर दिया कि आज से हिन्दुस्तानी व्यापारियों के माल पर भी महसूल माफ़ किया जाता है। इससे नवाब के राजकोष को बहुत बड़ा घाटा था, किन्तु नवाब ने प्रजा के हित के लिए राजकोष की परवा न की। इस घोषणा को सुनते ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अङ्गरेज़-व्यापारियों का ख़ून गर्म हो गया। उन्होंने कहा—हम स्वयं कर न देंगे, किन्तु नवाब को देशी व्यापारियों से कर अवश्य लेना पड़ेगा। ऐसा नहीं होने से अङ्गरेज़-व्यापारी उनके मुक़ाबले में नहीं ठहर सकते। अन्त में कम्पनी ने षड्यन्त्र रच कर नवाब मीर क़ासिम को मसनद से वञ्चित किया। बक्सर-युद्ध में जब सम्राट शाहआलम, अवध के नवाब वज़ीर शुजाउद्दौला और नवाब मीर क़ासिम—तीनों एक साथ पराजित हुए, तब भी कम्पनी के अधिकारियों ने अपने अमानुषिक अर्थ-लोभ का भयङ्कर परिचय दिया। उन्होंने सम्राट शाहआलम को रिशवत देकर इस बात के लिए सनद प्राप्त कर लिया, कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का कर वसूल करेगी और कोषहीन नवाब के ऊपर देश में शान्ति और व्यवस्था रखने का भार होगा। यहीं से भारतवर्ष पर क़ानूनी लूट और सङ्गठित डकैती (Legalised loot and organised plunder) का युग आरम्भ होता है।

अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी बङ्गाल में मनमानी करने के लिए स्वतन्त्र थी। नवाब उसके हाथों की कठपुतली मात्र रह गया था। व्यापार के माल पर कर लगाने या न लगाने के अपने उत्तरदायित्वपूर्ण अधिकार का दुरुपयोग कर क्लाइव ने नमक-जैसे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक पदार्थ पर ३५ फ़ी सदी कर लगाया और इसका ठेका कम्पनी के नौकरों को दे दिया!! क्लाइव की स्पष्ट नीति थी, कि जो वस्तु जीवन के लिए जितनी ही अधिक आवश्यक है, उस पर उतना ही अधिक कर लगाया जाना चाहिए। इससे कम्पनी को अधिक लाभ होगा! उस समय कम्पनी के नौकर स्वतन्त्र रूप से अपना व्यक्तिगत व्यापार भी करते थे। इनका धन-लोभ यहाँ तक बढ़ा हुआ था, कि उनकी निन्दा करते हुए स्वयं, रिशवतख़ोर और फ़रेबियों के सरदार क्लाइव तक को लिखना पड़ा था,"...... ये लोग (कम्पनी के अङ्गरेज़-नौकर) अपने-अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के पीछे इस उत्सुकता के साथ बढ़े चले जा रहे हैं, कि इनमें न तो अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान बाक़ी रह गया है और न वे अपने प्रभुओं के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करते हैं।" वह और भी लिखता है—"अङ्गरेज़ी बस्ती भर में शायद ही कोई एक अङ्गरेज़ ऐसा होगा, जिसने अल्प समय में ही अपार धन-राशि लेकर इङ्गलैण्ड लौट जाने का विचार न कर लिया हो।"

सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़-लेखक डॉक्टर रसल लिखता है—

". . . the Government of the East India Company in India was tainted from the very first beginning with mighty vices, . . . for generation after generation, the great aim and object of the servants of the Company, from the high, civil and military functionaries downwards was to squeeze as large as possible a fortune out of the country as quickly as might be, and turn their backs upon it for ever, so soon as that object had been attained. . . ."*

* Dr. Russel.

अर्थात्—"भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन आरम्भ से ही घोर पापों में लिप्त था... ... पीढ़ी दर-पीढ़ी लगातार शासन और सेना-विभाग के उच्च से उच्च कर्मचारियों से लेकर, कम्पनी के छोटे से छोटे नौकर तक का केवल यही एकमात्र महान लक्ष्य और उद्देश्य था, कि जल्दी से जल्दी इस देश से एक बड़ी धन-राशि चूस ली जाय और इस उद्देश्य के पूर्ण होते ही सदा के लिए मुँह फेर लिया जाय.......।"

कम्पनी के नौकर धन इकट्ठा करने के लिए खुल कर डाका डालते थे और उनको सज़ा नहीं दी जाती थी। इतिहास-लेखक टॉरेन्स लिखता है—

"The razzias made with impunity in Bengal and elsewhere . . . the counting house was deserted continually for marauding expedition . . during this period the business of a servant of the Company was simply to wring out of the natives a hundred or two hundred thousand pounds as speedily as possible, that he might return home."*

अर्थात्—"बङ्गाल तथा अन्य स्थानों में (कम्पनी के नौकर) डाका डालते थे और इसके लिए उन्हें सज़ा नहीं दी जाती थी......डाका डालने के लिए बार-बार अपनी दूकान छोड़ कर चले जाते थे......इस समय कम्पनी के प्रत्येक नौकर का यही काम था कि जहाँ तक जल्दी हो सके, भारतवासियों से दस-बीस लाख रुपया लूट-खसोट कर इङ्गलैण्ड को चलते बनें।"

कम्पनी के अङ्गरेज़ नौकरों का व्यक्तिगत व्यापार कही जाने वाली यह डकैती कितनी भयङ्कर रही होगी, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि स्वयं कम्पनी के डाइरेक्टरों तक ने यह स्वीकार किया है—

". . . we think the vast fortunes acquired in the inland trade have been obtained by a scene of most tyranic and oppressive conduct that ever was known in any age or country. . ."†

अर्थात्—"......हम समझते हैं कि देश के आन्तरिक व्यापार में जो अटूट सम्पत्ति कमाई गई है, वह ऐसे भयङ्कर अत्याचार और अन्यायों द्वारा प्राप्त हुई है, जिससे बढ़ कर अत्याचार और अन्याय किसी समय किसी भी देश में देखने-सुनने में न आए होंगे।....."

विलियम डिग्बी का अनुमान है कि सन् १७५७ ई० के पलासी-युद्ध से लेकर सन् १८१५ ई० के वाटर्लू युद्ध तक लगभग एक हज़ार मिलियन पाउण्ड अर्थात् पन्द्रह अरब रुपया शुद्ध लूट का भारत से इङ्गलैण्ड पहुँचा।‡

अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापार का नमूना भी देखिए। बङ्गाल के जुलाहों को ज़बरदस्ती पेशगी रुपया दे दिया जाता था और वे कम्पनी के ही नौकरों द्वारा ठहराए हुए क़ीमत पर कम्पनी के हाथों अपना माल बेचने के लिए बाध्य किए जाते थे। बङ्गाल-सरकार ने एक मनमाना क़ानून बना कर यह निश्चित कर दिया था कि जिसके ज़िम्मे कम्पनी का कुछ भी पावना हो अथवा जो किसी तरह भी कम्पनी के कपड़े के व्यापार से सम्बन्ध रखता हो, वह कभी कम्पनी का काम नहीं छोड़ सकता, न किसी दूसरे व्यापारी के लिए काम कर सकता और न उसे स्वयं अपने लिए ही काम करने की स्वतन्त्रता होगी। कम्पनी की माँग के मुताबिक़ माल न दे सकने पर जुलाहे हवालात में बन्द कर दिए जाते थे और उनका सब कच्चा और तैयार माल ज़ब्त कर लिया जाता था!

रेशम के कारीगरों पर इससे भी बढ़ कर अत्याचार होते थे। एक बार समस्त बङ्गाल में रेशम का दाम कुछ बढ़ गया। अङ्गरेज़ शासकों ने फ़ौरन कम्पनी के गुमाश्तों को हुक्म दिया कि रेशम के कारीगरों से बिना पूछे अथवा उनके हित का बिना विचार किए रेशम की क़ीमत कम कर दी जाय और नियत कर दी जाय।* रेशम के कीड़े पालने वाले काश्तकार और रेशम लपेटने वाले कारीगर केवल मात्र कम्पनी का काम करने के लिए बाध्य थे। अधिक मूल्य मिलने पर भी काश्तकार अपना माल किसी अन्य व्यापारी के हाथ नहीं बेच सकते थे। अगर बेचते तो कम्पनी के नौकर ख़रीदार के यहाँ से ज़बरदस्ती माल उठा ले जाते थे!

बोल्ट्स नाम का एक अङ्गरेज़-लेखक, जिसकी पुस्तक प्लासी-युद्ध के केवल दस वर्ष बाद ही प्रकाशित हुई थी, इस प्रकार लिखता है—

". . . inconceivable oppressions and hardships have been practised towards the poor manufacturers and workmen of the country, who are, in fact, monopolised by the Company as so many slaves . . Various and innumerable are the methods of oppressing the poor weavers, . . . such as by fines, imprsionments, floggings forcing bonds from them, etc., by which the number of weavers in the country has been gradually decreased . . every kind of oppression to manufacturers of all denominations throughout the whole country has daily increased; in so much so that weavers, for daring to sell their goods, and *dallals* and *pykars* for having contributed to and connived at such sales, have, by Company's agents, been frequently seized and imprisoned, confined in irons, fined considerable sums of money flogged and deprived in the most ignominious manner, of what they esteem most valuable, their castes."†

अर्थात्—"..... ...देश के ग़रीब कारीगरों और मज़दूरों पर जैसे ज़ुल्म किए गए हैं, उनकी कल्पना तक नहीं की जा सकती। वास्तव में इनके साथ ऐसा मनमाना किया गया है, मानो वे कम्पनी के ग़ुलाम हों... ग़रीब जुलाहे बहुत से और असंख्य तरीक़ों से सताए जाते हैं। उदाहरण के लिए जुर्माना करना, क़ैद कर लेना, कोड़े मारना, ज़बरदस्ती दस्तावेज़ लिखा लेना इत्यादि, जिनके द्वारा देश में कपड़ा बुनने वालों की संख्या बेहद कम हो गई है..... देश भर के हर पेशे के कारीगरों के साथ सब प्रकार के अत्याचार दिनोंदिन बढ़ रहे हैं, यहाँ तक कि बुनने वाले यदि अपना माल किसी और के हाथ बेचने का साहस करते हैं और दलाल और पैकार इसमें सहायता देते हैं या इससे आँख बचा जाते हैं तो कम्पनी के नौकर अक्सर उन्हें पकड़ कर क़ैद कर लेते हैं, बेड़ियाँ पहना देते हैं, बड़े-बड़े जुर्माने वसूल करते हैं, कोड़े लगाते हैं और बड़े ही लज्जाजनक उपायों से उनकी सब से अधिक मूल्यवान वस्तु—जाति—से भी भ्रष्ट कर देते हैं।"

[अगले अङ्क में समाप्त]

* Torren's Empire in Asia, pp. 82-83

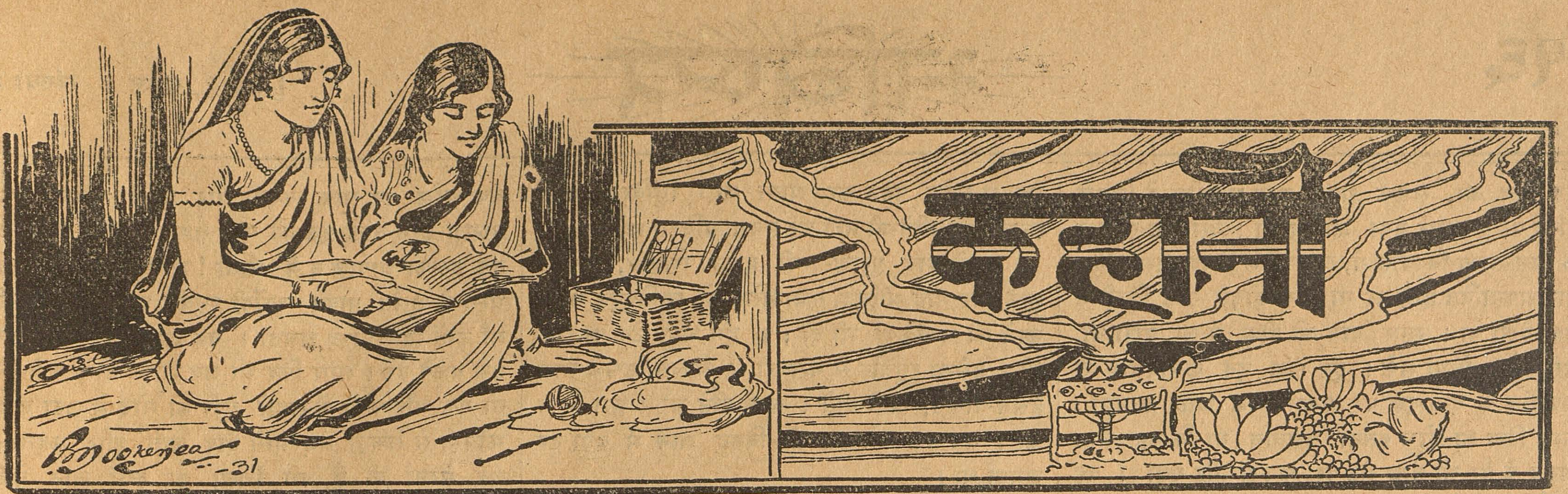
† Letter from the Court of Directors to Lord Clive, dated May, 1766.

‡ Prosperous British India, by William Digby C. I. E. p. 33.

* Mr. Saunder's evidence in March, 1831, before the Parliamentary Committee.

† Consideration on Indian Affairs, by Bolts

* * *



विराम-सन्धि

[श्री० पाण्डेय बेचन शर्मा, 'उग्र']


मारे गाँव का नाम रसूलपुर है, पर उसमें, न तो कोई मस्जिद-मक़बरा है और न मुसलमान।

गाँव में अधिकतर क्षत्रिय बसते हैं। फिर ब्राह्मणों की गणना है। वैश्यों के "अल्प-मत" के एकमात्र प्रतिनिधि हैं साहु चतुर्भुज, जिनकी पन्सारी की दूकान चलती है। पहले साहु जी लेन-देन भी करते थे; मगर गाँव के ब्राह्मणों के मारे उन्होंने यह व्यापार बन्द कर दिया। ब्राह्मण लोग पहले तो सूद-ब्याज का वादा कर साहु से रुपए लेते, पर "लैके दियो न जाय।" जब-जब साहु जी तक़ाज़े जाते, ब्राह्मण लोग उनके हाथ में कुश पकड़ा देते और पञ्चपात्र लेकर गोदान-मन्त्र पढ़ने को प्रस्तुत हो जाते। अगर साहु जी ज़रा भी सख़्त-सुस्त-सा मुँह बनाते, तो कुलाभिमानी, ज्ञानी-विप्रों का कोई बालक परशुरामावतार धारण कर लेता और परशु के स्थान पर डण्डा या जूता तान कर खड़ा हो जाता—"सहसबाहु भुज छेदनहारा, परशु विलोकु ....।"

इस तरह गाहियों गोदान करने के बाद ही, साहु चतुर्भुज जी महाजनो के बन्धन से मुक्त हुए।

गाँव में दो-तीन घर उनके भी हैं, जिन्हें लोग "अछूत" कह कर द्रवित होते हैं। सभी चमार हैं, द्विजों का हल जोतने वाले और ठाकुरों को दशमी, दीवाली पर देशी, डबलङ्ग जोड़े पहनाने वाले।

दस साल पहले उक्त चमारों को हमारे गाँव में कोई अछूत। भी समझता था, तो महज़ नाम-मात्र के लिए। कोई चमार युवक गाँव के किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय को 'चचा' कह कर पुकारता, किसी को 'भैया' या 'दादा'। ऐसे ही हमारी महिला या तो उनकी 'मतवा' थीं, अथवा 'काकी', 'बहिन', 'फुआ' या 'नानी'। जब हम छोटे थे, हमारी माताएँ चमार-परिवारों का परिचय हमें सम्बन्धियों के रूप में देतीं। किसी बूढ़ी चमारिन को देखते ही हम 'चाची-चाची' चिल्ला उठते और जवान को 'बहिन-बहिन'। हमें ज़रा भी ऐसा भेद न मालूम पड़ता, कि ये चाचियाँ या बहिनें हमीं-सी न होकर, कुछ और हैं, न्यून या अछूत हैं।

भले ही आर्यसमाज का इसमें दोष न हो; पर हमारे गाँव वालों ने तिरस्कार के भाव से चमारों को अछूत समझना उसी दिन से आरम्भ किया, जिस दिन रसूलपुर में समाज का पहला प्रचारक जलसा हुआ!

उस जलसे में आर्यसमाज के अनेक विख्यात उपदेशक और संन्यासी पधारे थे और दो-तीन अच्छे भजनीक भी।

*   *   *

उस जलसे का ज़रा विस्तृत वर्णन किए बग़ैर इस कहानी की तस्वीर शुद्ध न हो सकेगी। उसका सम्पादन खुले मैदान में हुआ था। बीच में चौकियों का मञ्च, मञ्च पर दरी-चाँदनी और सभापति की मेज़-कुर्सी। ग्रामीण दर्शकों के बैठने के लिए कुछ दूर तक दरियाँ और अधिकतर टाट का प्रबन्ध था। कई गाँव के लोग, विज्ञापन बाँट कर बुलाए गए थे।

भीड़ अच्छी थी। कोई तीन हज़ार ग्रामीण एकत्र थे। ध्यान से देखने से दर्शकों का अधिकांश उसी लिबास में दिखाई पड़ता था, जिसे धारण करने से गाँधी जी "महात्मा" हो गए। घुटनों के ऊपर कमर को छिपाए कपड़े का एक-एक मोटा टुकड़ा और कन्धे पर एक दूसरा वस्त्र-खण्ड या मैली-कुचैली "अँगौछी"। नङ्गे पाँव, मुँह में चुरुट नहीं, सिगरेट-बीड़ी नहीं; मगर चुटकी भर तम्बाकू और चूना होठ में दबा हुआ। प्रायः सबके।

हज़ार में पचीस दर्शक ग्रामीण ऐसे भी रहे होंगे, जिनके तन पर दुरुस्त कपड़े थे। शेष सभी "लँगोटी बाबा" के छोटे भाई थे। महात्मा जी ज्ञान से विवश होकर लँगोटी-बाबा बने हैं और वे अज्ञान से विवश होकर। बड़े और छोटे भाई की समझ में बस इतना ही फ़र्क़ है।

बाहर से आए उपदेशक और संन्यासी, जो मञ्च पर बैठे थे, चारों ओर से घूरे जा रहे थे। मञ्च पर हमारे रसूलपुर का कोई भी नहीं था। क्योंकि उस समय तक गाँव के ज्ञानियों ने आर्यसमाज के सिद्धान्तों को अपने अयोग्य ही माना था।

इसी कारण और; हमारे गाँव के मैदान में समाज की विख्यात ढोल के भड़भड़ाने की ज़रूरत हुई। वह ठीक वक़्त से एक विकट-वदन वृद्ध भजनीक के भीषण स्वर के साथ भड़भड़ाई।

गाँव के गन्दे, धूलि-धर बीहड़ बच्चे अभी तक एक गधे को रगेद रहे थे, उसकी दुम में हड़-हड़-कारी ताड़ के सूखे पत्ते बाँध कर, ढोल-ध्वनि सुनते ही सभा की ओर दौड़ आए और भजनीक के मुँह की ओर देख कर आश्चर्य करने लगे।

खलिहान में बँधे पशुओं तक के कान खड़े हो गए। भजनीक के अस्पष्ट-भजन के साथ—

यदि ऋषि दयानन्द ना होते
तो उड़ जाते भारत-कर से, ज्ञान-धर्म के तोते।

मञ्च पर बैठे मञ्जीर बजाने वाले, ढोल भड़भड़ाने वाले और आधा दर्जन अन्य गायक-अगायकों ने, दिक्कम्पकारी-स्वर में वृद्ध भजनीक का सस्वर समर्थन किया—

यदि ऋषि दयानन्द ना होते।
होकर उच्चैःश्रवा, बने थे हम सब, कल तक खोते
गन्दो लादी दुष्ट-रूढ़ियों की सशङ्क-मन ढोते
आज ऋषी ने ज्ञान कराया,
सत्य अर्थ, परकाश लखाया,
ओङ्कार का मन्त्र सिखाया,
छूआछूत-भूत भय-मारा भागा रोते-रोते।
भड़भड़भड़भड़ !—भड़भड़भड़भड़।
यदि ऋषि दयानन्द ना होते।

इस बार भड़भड़ाहट ऐसी सर्व-मोहिनी हुई, कि चिल्लाने में वृद्ध-भजनीक जी को, जो दढ़ियल पञ्जाबी थे, अपने तनोबदन का होश भी न रहा। बेचारे के मुँह में नक़ली दाँतों का सेट था, जो तान-मुर्की लेने और अललाने में एक बार ढीला पड़ गया और ऊपर का हिस्सा हज़ार प्रयत्न कर सँभालते रहने पर भी, टपाक से मेज़ के कोने पर आ रहा और वहाँ से छटक कर स्वामी ओङ्कारानन्द जी के मुण्डित खल्वाट सर पर तड़ से जा पड़ा

स्वामी जी जनता के ठीक सामने, अर्ध-मुद्रित नेत्र, कुछ-कुछ गायन के अर्थ का आनन्द ले रहे थे और बहुत-कुछ अपने उस व्याख्यान के बारे में विचार रहे थे, जो आगे उन्हें देना था। सर पर "तड़ांक" होते ही उनका कलेजा उछल पड़ा। आर्यसमाज की सभाओं में प्रायः जूते बरस जाते हैं। स्वामी जी ने पहले वैसा ही कुछ समझा। तुरन्त ही मनुष्य का असली बॉडी-गार्ड घटनास्थल की ओर दौड़ा—स्वामी जी का दाहिना हाथ सर पर गया। तब तक दाँत का सेट उनके सामने आ गिरा। वह लाल-लाल था और लाल लार से भरा था। क्योंकि गाने के पहले भजनीक जी ने पर्याप्त पान की बुकनी मुँह में भर ली थी।

हाथ में लिब-लिब स्पर्श और लाल-लाल देखते ही ओङ्कारानन्द जी को शिरोभङ्ग का विश्वास हो गया। वह जीवट के वीर-पुरुष थे। तुरन्त ही तन कर और घूँसा तान कर, खड़े हो गए—

"किस दुष्ट ने यह नीचता की है? उसको नामर्द की तरह छिपना नहीं, मर्द की तरह सामने आना चाहिए!"

उधर, दाँत गिरते ही, भजनीक का भजन वैसे ही चुप हो गया, जैसे बड़ी गोलाई से क्षुद्र दायरे में सुई के घुसते ही, ग्रामोफ़ोन चुप हो जाता है। ढोल-मञ्जीर बोलते रहे, मैशीन की कर-कर-आवाज़ की तरह।

"आयँ!!" जनता में कलरव।

"चुप क्यों हो गए—वाह! क्या तड़प के गा रहा था बुड्ढा!"

"अरे, यह क्या! बुड्ढे के मुँह से क्या गिरा?"

मञ्च पर किसी ने कहा—ओहो! भजनीक जी के दाँत गिर गए!!

मगर ग्रामीण अज्ञान......

"दाँत कैसे गिरे? और स्वामी जी किस पर बिगड़े हैं?"

"गवैये पर। बुड्ढे के मुँह से दाँत गिर पड़े, देखते नहीं, संन्यासी की खोपड़ी लाल हो गई। चि-च्चि-च्चि!"

"भजनीक का दुपट्टा देखो, रङ्ग उठा है। मुँह का सारा मवाद टपक पड़ा—हि-हि-हि-हि!"

एक जवान अपनी हँसी न रोक सका। इसी समय स्वामी ओङ्कारानन्द जी घटना का असली मर्म, सबका

मुँह देख कर, समझ गए। उन्हें भजनीक के निकले दाँतों पर एक बार बड़ा क्रोध हुआ। वैसे वह स्वभाव के परम-शान्त विख्यात थे, सभाओं में विपक्ष द्वारा अनेक बार अपमानित होने पर भी धैर्य छोड़ते उन्हें किसी ने नहीं देखा था। मगर पान की पीक में जो घृणा थी, उसे वह न छिपा सके। दूर फेंक देने के विचार से भजनीक के दन्त-दल पर उन्होंने एक लात लगाया; मगर दिल का क्षोभ इतना बलवान था कि वह लात अङ्गद के पैर की तरह सेट पर चप-से बैठ गया। वह चूर्ण-विचूर्ण हो गया।

इसी कारण उस जलसे में वह वृद्ध भजनीक पुनः न गा सका और जलसे की चिर-स्मरणीयता ज़रा मनोरञ्जक हो गई।

* * *

जलसे के दूसरे दिन रसूलपुर में बड़ा कोलाहल रहा। ख़ास कर मेरे दरवाज़े पर। क्योंकि मेरे पिता रसूलपुर के सरपञ्च हैं, ब्राह्मण भी; और मैंने आर्यसमाजियों की सभा में, कल अछूतोद्धार का समर्थन किया। दो घण्टे तक भाषण करने के बाद स्वामी ओङ्कारानन्द ने श्रोतृ-मण्डली से जब यह पूछा कि—"कौन-कौन से कुलीन भाई, आज ही से यह प्रतिज्ञा करते हैं कि वे इस कोढ़ का इलाज दिलोजान से करेंगे और भविष्य में परमात्मा के किसी भी बच्चे को अछूत या नीच न समझेंगे?" उस समय, सब से पहले मेरा हाथ उठा और इसके बाद मेरे बाल-बन्धु ठाकुर श्रीसिंह और गुलाबसिंह के। हम तीनों, गर्मी की छुट्टी में गाँव लौटे थे—लखनऊ-कॉलेज से। हम लोगों ने निश्चय कर रक्खा था कि हमारे पूज्य-श्रेष्ठ चाहे असन्तुष्ट ही क्यों न हों; पर समाज की बुरी रूढ़ियों का विध्वंस करना ही होगा।

हम तीनों अपने गाँव के पहले आर्यसमाजी हैं और चौथा है वह जवान चमार रघुवीर, जो गाँव के पूरबी कोने पर मिट्टी और फूस की घरनुमा—झोपड़ी या झोपड़ी-नुमा घर में, एकमात्र अपनी बूढ़ी माँ के साथ, रहता है। हमारे ही साथ वह भी समाज का मेम्बर हुआ। हम तीनों ने उस दिन की सभा में, स्वामी ओङ्कारानन्द जी की आज्ञा से रघुवीर को गले से भी लगाया था।

"यह नहीं होने का।" गाँव के रूढ़िवादी बूढ़ों ने कहा—"चमारों को गले लगाना—छिः!"

"एक चमार तो जनेऊ तक पहन कर आया था; और मञ्च पर संन्यासियों तथा द्विजों के साथ बैठा था।"

"अरे! यह रघुबिरवा साला"—एक अधेड़ क्षत्रिय बोले—"कल न जानें कहाँ से उस सभा में रसूलपुर का नाम हँसाने को पहुँच गया।"

मुझे ताना देते हुए एक वृद्ध क्षत्रिय ने, जिन्हें सब लोग "दादा" कहते थे, कहा—"अब धर्म का नाश ही समझो। जब उच्च कुल के बच्चे इस तरह मल-जल-योग करने लगे तब औरों की कौन कहे?" मेरे पिता का नाम लेकर वृद्ध ठाकुर ने कहा—"रामचन्द्र दुबे का ख़ान्दान भी तर गया।"

इसी समय एक ओर से रघुवीर की बूढ़ी माँ आई, अपनी सदैव कीचड़ में डूबी रहने वाली आँखों में आँसू भरे।

"क्यों रघुवीर की माँ! अब तू भी पण्डिताइन बनेगी? तेरा लड़का तो आर्यसमाज का मेम्बर होते ही पण्डित हो गया है।"—मेरे पिता जी ने उस वृद्धा पर व्यङ्ग्य-बाण छोड़ा। वह तो आप ही रो रही थी।

"निकाल दिया है पण्डित बाबा"—कमर सीधी कर वह बोली—"कल से ही मैंने उसे घर से निकाल दिया है। उसको तो उस चमरे ने बहका दिया था, जो अलीगढ़ से जनेऊ पहन कर आया था। रघुबिरवा ऐसी ग़लती मेरे जीते-जी नहीं कर सकता पण्डित महराज!"

इसके बाद पुराण-पन्थी हज़ार चिल्लाए, उन्होंने मुझे और भाई श्रीसिंह, गुलाबसिंह को जातिच्युत आदि करने की धमकियाँ भी दीं; पर हम अपने टेक पर टिके रहे। हमेशा रघुवीर से बराबरी से मिलते, उसके साथ हँसते-बोलते, खाते-पीते। खाते-पीते ज़रूर ज़रा छिप कर। तब तक लोकमत के विरुद्ध जाने में बड़ा डर लगता था।

रघुवीर की माँ, रोज़ हज़ार-हज़ार गालियाँ, अपनी झोपड़ी के दरवाज़े पर बैठ कर, उसको देती। कहती—यह अभागा झूठे ही गाँव में अशान्ति फैला रहा है। पागल हो गया है जो बड़े-बड़ों के मेल में मिलना चाहता है। हम चमार हैं तो क्या बुरे हैं? अपना रोज़गार करते हैं और राम का दिया खाते हैं। जब राम ही ने हमें ब्राह्मण-क्षत्री, राजा-रईस नहीं बनाया तो अब वह शौक़ आर्यसमाज की मेम्बरी से नहीं पूरा हो सकता। अरे मेरे भगवान! मेरे लड़के रघुबिरवा को क्या हो गया है!

* * *

भाई रघुवीर जब आर्यसमाज के मेम्बर हुए, उस समय उनकी माता का वय सत्तर और एक एकहत्तर वर्ष का था,

खोज

[कवि-सम्राट पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध']

किसके कर से है धवलिमाँ निराली मिली,
किसके धुलाए हैं धवल फूल धुलते।
किसके कहे से ओस-विन्दु सुमनावलि से,
मोह कर मानस हैं मोतियों से तुलते॥
'हरिऔध' किसके सहारे से समीर द्वारा,
मञ्जुल मही में हैं मरन्द भार ढुलते।
किसके लुभाने के बहाने मनमाने कर,
रात में ख़ज़ाने रत्नराजि के हैं खुलते।

* * *

आज वह इक्यासी वर्ष की बूढ़ी है। पिछले दस वर्षों में ऐसा एक दिन भी न गया होगा, जब उनकी माँ ने उन्हें आर्यसमाजी होने के लिए हज़ार-पाँच सौ गालियाँ न दी हों! हज़ार-पाँच सौ तो मैं कम समझता हूँ। गाँव का कोई "कुलीन" व्यक्ति, इच्छा करते ही, रघुवीर की माँ को भड़का देता और वह बूढ़ी भड़कते ही अपने लड़के को सामने-पीछे सदैव—अविराम स्वर से गालियाँ देने लगती।

ब्राह्मणों के बच्चे बुढ़िया को छेड़ते—ओरे रघुवीर की माँ! तेरा लड़का तो 'आर्या' हो गया। मेरे बाबू जी कहते थे—आर्यों का सात पुश्त नरक में निवास करता है।

"नरक में?"—स्तम्भित बूढ़ी ब्राह्मण बालक से पूछती—"आर्य नरक में जाते हैं? हाय रे रघुबिरवा! इस मुँहझौंसे ने मेरे ख़ान्दान का नाश कर दिया।"

कोई क्षत्रिय चिढ़ाता—अरे रघुबिरवा की माँ! अब तू दशमी-दीवाली पर हमारे यहाँ से त्योहारी न पावेगी और न बच्चे होने पर 'सौर' सँभालने! गाँव वालों ने आर्यों का बॉयकॉट किया है। और तू तो आर्या रघुबिरवा की माँ है न?

बूढ़ी, आँखों का कीचड़ पोंछती, गले को मिनटों तक खाँस कर साफ़ करती और अपने यजमानों को नाराज़ करने वाले पुत्र को तब तक गालियाँ देती जब तक उसकी आवाज़ न बैठ जाती! शाम को अपने काम-धन्धे से फ़ुर्सत पाकर ज्योंही रघुवीर घर आते, उनकी माँ उन्हें गालियाँ दे चलती। वह पहले तो घण्टों तक उसे बकने देते। मगर फिर भी जब शान्त होते न देखते तो गले और पाँवों के सहारे बूढ़ी को गोद में उठा लेते, झोपड़ी से सैकड़ों गज़ आगे दौड़ जाते और कहते—जब मरना ही है, तो चिल्ला कर क्यों जान देती है। चल! आज तुझे कुएँ में फेंक दूँ। रहे बाँस न बजे बाँसुरी।

और तब, उस रात के लिए, वह चुप होती। मगर सुबह किसी के याद दिलाते ही, फिर वही रफ़्तार!

बूढ़ी को चिढ़ा कर रघुवीर को गालियाँ दिलाने में गाँव वालों को कुछ अपूर्व आनन्द आता।

लेकिन "भाई रघुवीर" (हम लोग उन्हें इसी नाम से हमेशा पुकारते) मामूली आर्यसमाजी नहीं थे। धुन के पक्के, रङ्ग के चोखे। सारा दिन उनका "काम-धन्धा" क्या था? आस-पास के गाँवों में जाना, वहाँ के अछूतों से मिलना, उनके बच्चों को साफ़ करना, बड़ों को सफ़ाई समझाना, उन्हें नशा वग़ैरह से दूर करने की चेष्टा करना।

भाई रघुवीर का आत्म-त्याग ऐसा उज्ज्वल था कि पिछले दस वर्षों में रसूलपुर के चतुर्दिक-स्थित बीसों गाँवों के अछूतों के वह एकछत्र नेता हो गए!

नेता—जिसको खाने के लिए दुनिया में गालियाँ हैं, और ग़म; तथा पीने के लिए अपमान और आँसू!

* * *

गत वर्ष का वह कोलाहलकारी राष्ट्रीय आन्दोलन, जो आजकल गम्भीर-चुप है, तूफ़ान की तरह पुनः जागने के लिए अथवा उषा-काल की तरह श्यामल से अरुणोज्ज्वल होने के लिए।

उस आन्दोलन में रसूलपुर ने प्रायः कुछ नहीं किया। क्योंकि वहाँ के ब्राह्मणों को "स्वराज्य" नहीं, "मुक्ति" चाहिए—जो अङ्गरेज़ नहीं दे सकते। और जिसे भगवान भूरि-भूरि भजन के बाद ही देते हैं। क्षत्रियों को ग़रीबों की राष्ट्रीय गवर्नमेण्ट नहीं, "सूर्य" या "चन्द्र-कुल" का साम्राज्य चाहिए; जो, उनका दृढ़ विश्वास है, पाँच सौ वर्षों के भीतर, कल्कि अवतार के साथ होगा। हमारे गाँवों के क्षत्रिय, इस बीच में किसी आन्दोलन में पड़ कर अपना समय या बल नहीं नष्ट करना चाहते।

रहे वैश्यों के नेता चतुर्भुज साहु, सो उन्हें जीते जी "रामराज्य" नहीं, आटा-चावल-दाल के ग्राहक चाहिए। मरने के बाद का प्रबन्ध उन्होंने जवानी ही में, एक बछिया गो-दान देकर कर रक्खा है। दान लेने वाले गाँव के ब्राह्मण ने उन्हें बतला दिया है कि वह बछिया अब देवताओं के नन्दन वन में बड़ी हो गई होगी। उसके गाहियों कच्चे-बच्चे होंगे, जो समय पर साहु जी को परम सरलता से वैतरणी के उस पार पहुँचा देंगे।

मगर हम चार आर्यसमाजियों को रसूलपुर के इस राष्ट्रीय-वैराग पर बड़ी ग्लानि हुई। हमने बहुत सोच-समझ कर अपना हक़ अदा करने का निश्चय किया।

निश्चय हुआ, एक दिन "स्वतन्त्रता-दिवस" मनाने का और उसी दिन नमक-क़ानून तोड़ने का। अस्तु, गाँव-गाँव में दौड़ लगा कर भाई रघुवीर ने सभा का विज्ञापन किया। पास की शहर-कॉङ्ग्रेस कमिटी से दस आने का एक तिरङ्गा-झण्डा मँगवाया गया और गत दिसम्बर की एक तारीख़ को हमने अपने गाँव के मैदान में राष्ट्रीय ध्वजारोपण किया। दस-बीस अन्य ग्रामीणों के साथ नमक भी बनाया गया।

उधर नौकरशाही हमारे गाँवों के आस-पास राष्ट्रीय रोग न फैलने देने का क़स्द कर चुकी थी। हमारी सभा की सूचना शहर कोतवाली में पहुँचते ही, कोतवाल ने पहले भाई रघुबीर को बुला कर डाँटा—ख़बरदार! अगर इधर के गाँवों में बदअमली फैलाओगे, तो ऐसे पीटे जाओगे कि मरने पर भी न भूले।" मगर हम लोग तो रसूलपुर की इज़्ज़त बचाने पर तुले थे।

परिणामतः सभा होने के पूर्व ही लाठी-पुलिस और घुड़सवारों का दस्ता रसूलपुर में हाज़िर था। झण्डा ऊँचा होते ही पुलिस की लाठियाँ उठीं—लाठियाँ उठते ही, मारे गर्व के हमारे सर ऊँचे उठ गए। हम निरीहों पर क्रूर मार पड़ते देख कर सारा रसूलपुर और आस-पास के एकत्र दर्शक भी ग़ुलामी की नींद से जाग उठे—"महात्मा गाँधी की जय" के साथ।

मार-पीट के बाद, हम चारों आदमी गिरफ़्तार कर लिए गए, जिनमें एक तो ख़ून से लतपत और बेहोश तक था—रघुबीर। उसे पुलिस वालों ने चुन कर ख़ूब ही मारा था।

सप्ताह भर जेल-अस्पताल-सेवन के बाद हम चारों को ७-७ महीने की सख़्त सज़ा हुई।

* * *

"समय पलटि पलटै प्रकृति" बहुत सच्ची बात है। अब रसूलपुर के ब्राह्मण-क्षत्रिय भाई रघुबीर की प्रशंसा करने लगे—"चमार था तो क्या, था बड़ा बहादुर। इतनी लाठियाँ किसी और पर पड़तीं तो वह या तो यमराज के दरबार में अपनी जन्मपत्री सुनता होता या सालों अस्पताल में, गुड़-हल्दी खाता। मगर रघुबीर के मुँह पर 'उफ़' तक नहीं, माथे पर बल तक नहीं! आख़िर था तो क्या, रघुबिरवा वीर था, यह सच है।"

अब गाँव वाले रघुबीर की माँ को इसलिए न उभारते कि वह उसे गाली दे। मगर बूढ़ी गालियाँ तो देती ही। "रघुबिरवा" को अब नहीं, गाँव वालों को। इसलिए कि उन्होंने उसे उभार कर जेल में भिजवा दिया, इतने डण्डे लगवाए!

"हे भगवान! हमारे सभी मुद्दई मर जायँ और उन्हें देखने को न तो दूसरी रात नसीब हो, न दिन। इन्हीं ने मेरे भोले-भाले बेटे रघुबिरवा को बहका कर पहले आर्या बनाया और अब मुरदा बनवा कर जेल भेज दिया! हे भगवान! नाश हो उस गाँधी का और चारों ओर फैली उत्पात की आँधी का।"

जब वह 'गाँधी' का नाम लेकर रोने-सरापने और गालियाँ देने लगती, तब गाँव के बच्चे उसे न क्षमा कर सकते। ज़मीन से कङ्कड़-पत्थर उठा कर उस बूढ़ी को मारने लगते—हरामज़ादी चमाइन! महात्मा जी को गालियाँ देगी तो तेरी नाक काट ली जायगी।

वह ढेले खाती जाती, आँसू पोंछती और गाँधी, काँग्रेस और गाँव के बदमाशों को गालियाँ देती जाती। गाँव की गली-गली में रोज़ यही नाटक होता। रात हो जाने पर वह अपनी झोपड़ी में लौटती, दरवाज़े पर पाँव फैला कर बैठ जाती और फिर वही स्वर अलाप चलती। पास-पड़ोस वाले पहले तो, मारे डर के नज़दीक न आते; यदि आते भी, तो गन्दी गालियाँ सुनते।

झोपड़ी के द्वार पर बैठ कर जब वह गालियाँ बकती तब, शायद हमेशा यही सोचती कि उसका रघुबिरवा बाहर से आता होगा—उसे बकते सुन कर बिगड़ेगा; पर वह चुप न होगी। रघुबिरवा उसे गोद में उठावेगा और कुआँ में झोंक देने की धमकी देगा।

पर वह तो जेल में था और दूसरी बार बीमार था। वह अपनी "मावा" को सँभालने कैसे आता? वह सचमुच न आता। रात बहुत बीत जाती। बूढ़ी की आवाज़ उसका साथ देने से इन्कार करने लगती। वह गालियों का प्रवाह रोक कर, आँसुओं की धारा बहाने लगती—अरे मोर रजवा × × × याने, रघुबिरवा।

* * *

भाई श्रीसिंह, गुलाबसिंह और मैं लखनऊ जेल में रक्खे गए थे। भाई रघुबीर फ़ैज़ाबाद में। लखनऊ जेल में फ़ैज़ाबाद से बदल कर कुछ क़ैदी आए थे और उन्हीं से भाई रघुबीर की दूसरी बीमारी का पता चला था। पता चला उन्हें ख़ून के दस्त आ रहे थे।

गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार जब हमारी रिहाई हुई और लखनऊ वालों ने, एक तरह के विजयोल्लास से, कई सौ क़ैदियों के साथ हमारा स्वागत किया, उस समय अपने बीच में रघुबीर भाई की अनुपस्थिति हमें बहुत खली। छूटने के बाद लखनऊ के मित्र हमें दो-चार दिन वहाँ रोकना चाहते थे और शायद हम रुकते भी, अगर हमारे साथ भाई रघुबीर होते। उन्हीं से मिलने के लिए लखनऊ त्याग, हम तुरन्त अपने शहर और उसके निकटस्थ रसूलपुर गाँव की ओर झपटे। रसूलपुर से एक कोस पूर्व और रामपुर का बाज़ार है, उसे ही हम "शहर" कहते हैं।

शहर वालों ने हमारा हार्दिक स्वागत किया। वहीं गाँव के कई ब्राह्मण-क्षत्रिय भाई भी मिले, जो काँग्रेस के नए कार्यकर्ता थे। हमारे जेल जाने के बाद रसूलपुर में भी एक छोटी सी काँग्रेस कमिटी स्थापित की गई थी।

वहीं हमें पहली बार पता लगा, भाई रघुबीर का, एक सप्ताह पूर्व, फ़ैज़ाबाद जेल में देहान्त हो चुका है। पुलिस की लाठियाँ उन पर ऐसी निर्दयता से बरसी थीं, कि वह अधिक दिनों तक जीवित न रह सके। वहीं सुना, यह ख़बर गाँव वालों ने रघुबीर की बूढ़ी माँ को दे दी है। वहीं पता चला, बूढ़ी इस ख़बर को सच नहीं मानती। कहती है—"दुश्मन होने के कारण गाँव वाले उसे झूठे ही चिढ़ाते हैं।" वहीं बताया गया, रघुबीर भाई के निश्चय मर जाने पर भी वह बूढ़ी अभी रोती है, गालियाँ देने के बाद, इस आशा में कि उसका लड़का उसे चुप कराने आता होगा। वहीं हमें मालूम हुआ, अब गाँव भर की बड़ी करुण सहानुभूति उस बूढ़ी के प्रति है। पर वह तो सहानुभूति पर गालियाँ देती है!

लोगों ने बताया कि हमारे स्वागत के लिए भेद-भाव भूल कर सारा रसूलपुर बन्दनवारों और पुष्पों से सजाया गया है। लोगों को घर सजाते देख और उनसे सुलह की चर्चा सुन कर रघुबीर की माँ ने भी अपनी झोपड़ी पर आम के पत्तों का बन्दनवार बाँधा है—जिसके बीच-बीच में गेंदे के फूल हैं। बूढ़ी ने अपने काँपते हाथों से उसे सजाया है! उसकी यह पागल-लीला देख कर गाँव की बूढ़ियों के आँसू रुकते ही नहीं। वे उसे यह समझाने की कोशिश करती हैं कि उसका यह सब साज़ोसामान व्यर्थ है। उसका बेटा तो जेल में मर गया, पर वह मानती ही नहीं। कहती है—बेटे मरें होंगे मुद्दइयों के, मेरा रघुबिरवा तो आवेगा सब के साथ।

भाई रघुबीर की माँ की कहानी सुन कर हम सब के सब रो पड़े—आह, बेचारी!!

हमें गाँव में देखते ही लोग लिपटने को दौड़े। बच्चे पुष्प लिए, जवान आरती, माताएँ अभिषेक को अश्रु-जल। हम दिवसावसान काल में रसूलपुर पहुँचे थे।

पहले भाई श्रीसिंह का घर पड़ता था। लोगों का उत्साह-चीत्कार सुनते ही श्रीसिंह अपने द्वार की ओर दौड़े। तुरन्त उन्होंने बन्दनवार तोड़-ताड़ डाला। पास के एक क्षत्रिय के हाथ में जलती आरती की थाल ज़मीन पर उलट दी—उत्सव नहीं! जब तक गाँव की एक माँ के आँसू शान्त नहीं होते, तब तक एक भी माता उत्सव नहीं मना सकती।

इसके बाद अपनी अश्रुमयी माताओं को भूल, हम तीनों, तुरन्त रघुबीर की झोपड़ी के द्वार पर पहुँचे; जहाँ, बन्दनवार के नीचे बैठी, वह बूढ़ी-जननी गाँव वालों को गाली दे रही थी। वह सचमुच पागल हो गई थी। उसने हममें से किसी को भी नहीं पहचाना। हम उसे ज़रा भी शान्त होने को कहते, तो वह गालियाँ देने और रोने लगती और रसूलपुर वालों के नाश की प्रार्थना करने; जो "झूठे ही" उसके "बच्चे को" मरा कहते थे।

उसका वह पागलपन आह! हम लोग उस बेचारी बूढ़ी की दुर्गति पर पिघल-पिघल उठे।

१० बजे रात तक हम उसके सामने थे और तब तक, वह केवल गालियाँ दे रही थी, कीचड़ भरी आँखें बन्द किए। इसके बाद, ज़रा ताज़ा होने के विचार से, हम लोग अपने-अपने घर की ओर लौटे। मगर उस बूढ़ी के कारण हमारे हृदय वज्रनी हो गए थे। मानो कलेजे पर पहाड़ रक्खा हो।

कोई बारह बजे रात रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी—"अरे...मो...र...र...ज...वा...!" वह उसी अभागिनी की आवाज़ थी। मैं तो पागल हो गया। मेरे आँसू बाँध तोड़ कर बहने वाली नदी से बह निकले। मन में ऐसा हुआ कि जब तक यह बूढ़ी रोती रहेगी तब तक आराम से सोने का विचार भी हराम है।

मैं झोपड़ी की ओर दौड़ा। देखा वह ड्योढ़ी पर अपना बुढ़ापा-जर्जर सुफ़ेद-माथा पटक रही थी। झोपड़ी में अन्धकार था, बाहर भी। वह करुण-स्वर में सोहनी-रागिनी-सी गाकर रो रही थी—"अरे मोरे रजवा!"

मैंने झपट कर उसको गोद में उठा लिया। छाती से लगा लिया—"मावा!—माई!—अम्माँ!!"

उसे लेकर मैं सैकड़ों गज़ दूर दौड़ गया। जैसे भाई रघुबीर दौड़ा करते थे। मैंने कहा—चुप भी रहेगी; या तुझे कुएँ में झोंक दूँ?

वह छाती से चिपक कर मेरे सर पर हाथ फेरने लगी। उसने समझा, उसका "रघुबिरवा" ही आ गया! वह बोली—इतने दिनों तक तू कहाँ था मुँहझौंसा!

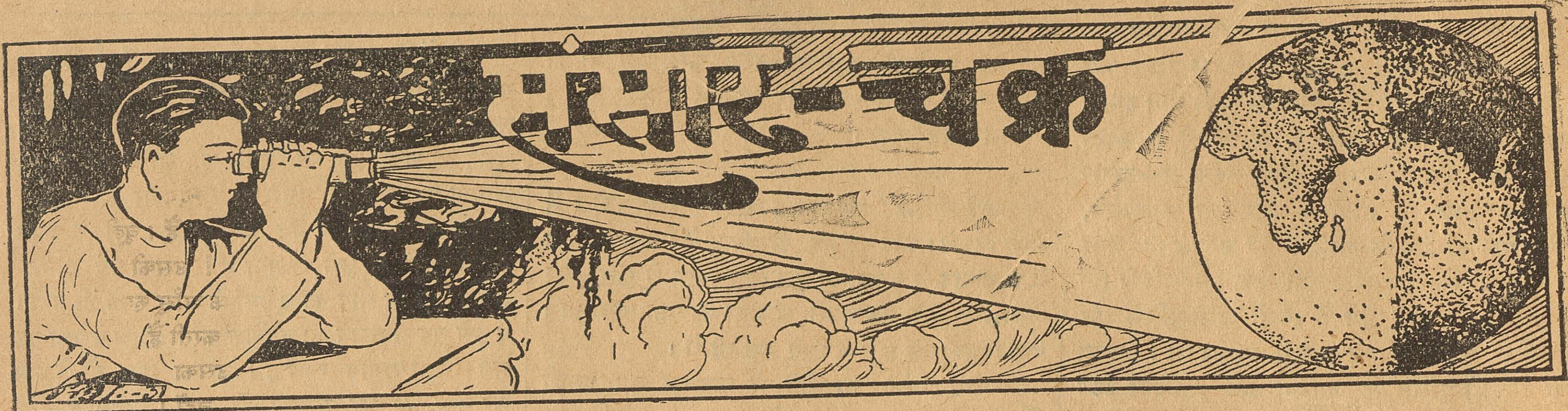
* * *

देखो जिसे उसी को, है अरमाने लीडरी!

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

दिन रात सब के दिल में है, अरमाने लीडरी,
देखे तो कोई, वसअते[1] मैदाने लीडरी!
दामन गुले[2] मुराद से हैं वह भरे हुए,
हाथ आ गया है, जिनका गरेबाने लीडरी!
कमज़ोर इसकी नींव है, बुनियाद कुछ नहीं,
क़ायम न रह सकेगा, यह ऐवाने[3] लीडरी!
पब्लिक में आए, और दी स्पीच पुर-असर[4],
पैदा यहीं से हो गए सामाने लीडरी!
दो दिन में देखते हैं, बड़ा रङ्ग जम गया,
फूले फलेगा और गुलिस्ताने[5] लीडरी!
क्या जाने क्या करेगा, यह अब लीडरी का शौक़,
देखो जिसे उसी को है अरमाने लीडरी!
क़ुर्बानियों के साथ, करो ख़िदमते वतन,
यह रूहे लीडरी है, यही जाने लीडरी!
"बिस्मिल" की हर जगह नहीं पब्लिक में पूछताछ,
यह किस उम्मेद पर करें अरमाने लीडरी!

१—फैलाव, २—फूल, ३—महल, ४—ज़ोरदार, ५—बाग़।



जर्मनी का प्रजातन्त्र

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

(उपसंहार)



पने पिछले लेख में मैंने प्रजातन्त्रीय जर्मनी की कुछ कठिनाइयों का ज़िक्र किया था। पाठकों ने पढ़ा होगा कि हर्जाने के बहाने फ़्रान्स जर्मनी को कुचल देना चाहता था और रह-रह कर उसके मस्तक पर पदाघात कर रहा था। अन्त में अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड की दूरदर्शिता तथा बुद्धिमानी ने हर्जाने के प्रश्न को बहुत कुछ सरल कर दिया था। अपने लेख के अन्त में मैंने यह भी कहा है कि हिण्डनबर्ग का प्रेज़िडेण्ट बनना प्रजातन्त्र की सब से बड़ी विजय थी।

यद्यपि जर्मनी दुर्बल, निस्सहाय तथा क्षीण हो रहा था। पर फ़्रान्स उसे हौआ समझता था। इसके सिवा अन्यान्य पड़ोसी राष्ट्रों की शक्ति को भी वह अपने लिए बहुत हानिकर समझ रहा था। इसीलिए जब लीग ऑफ़ नेशन्स ने निशस्त्रीकरण के प्रश्न को फ़्रान्स के सम्मुख रक्खा तभी उसने यह रोना रोया कि ऐसा करने से उसका अस्तित्व ख़तरे में पड़ जावेगा। वास्तव में वह रक्षा के नाम पर अनुचित लाभ उठा कर पड़ोसी राष्ट्रों को दबाए रखना चाहता था। और चाहता था, संसार के राष्ट्रों द्वारा तत्कालीन स्थिति में परिवर्तन न होने देने का आश्वासन।

फ़्रान्स तथा अन्य राष्ट्रों ने आपस में यह तय किया कि यदि कोई राष्ट्र शान्ति भङ्ग करने का प्रयत्न करेगा तो सभी राष्ट्र मिल कर उसका विरोध करेंगे और उससे लोहा लेंगे। इस सन्धि को अङ्गरेज़ी में 'जिनेवा प्रोटोकाल' कहते हैं। जिस समय यह सन्धि हुई थी, उस समय इङ्गलैण्ड में मज़दूर-दल का शासन था। जब इङ्गलैण्ड में मज़दूर पार्टी पदच्युत हुई तब मैक्डॉनल्ड के उत्तराधिकारी ने उपर्युक्त 'प्रोटोकाल' को मानने से साफ़ इन्कार कर दिया। क्योंकि उससे इङ्गलैण्ड की ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ जाती थी। इसलिए चेम्बरलेन ने वहीं, जिनेवा में ही, उस सन्धि को सदा के लिए दफ़ना दिया।

सन् १९२५ के प्रारम्भ में जर्मनी के प्रति फ़्रान्स का रुख़ बहुत कड़ा था। रूर प्रदेश अभी तक पूर्णतया ख़ाली नहीं हुआ था। जनवरी के अन्त तक इङ्गलैण्ड को 'कोलोन प्रदेश' ख़ाली कर देना चाहिए था, पर उसने भी ऐसा करने से इन्कार कर दिया। उसका कहना था कि जर्मनी ने अपनी शर्त्तों का पालन नहीं किया है। एक बार पुनः मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी को छेड़ना प्रारम्भ कर दिया। इस असन्तोषप्रद स्थिति में स्ट्रेसमैन को सुनहला अवसर मिला। फ़्रान्स की मनोवृत्ति ने यूरोप की रक्षा का प्रश्न खड़ा कर दिया था। फ़्रान्स अपने को सुरक्षित नहीं समझता था। परन्तु प्रश्न यह था कि अगर फ़्रान्स सुरक्षित नहीं था, तो यूरोप के कितने राष्ट्र अपने को सुरक्षित समझ सकते थे? जिनेवा प्रोटोकाल ने फ़्रान्स को सुरक्षित करने का तो प्रयत्न किया था, पर अभी तक जर्मनी की रक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया था। और यदि यूरोप के किसी भी राष्ट्र को रक्षा की आवश्यकता थी तो वह जर्मनी ही था। जिनेवा प्रोटोकाल का अन्त हो जाने के पश्चात् से रक्षा का प्रश्न समस्त यूरोप के दिमाग़ में चक्कर लगाने लगा। स्ट्रेसमैन ने इस स्थिति से लाभ उठाते हुए फ़्रान्स और जर्मनी के बीच एक सन्धि होने का प्रस्ताव फ़्रान्स के सम्मुख रख दिया। स्ट्रेसमैन के पहिले ही ब्रियाण्ड और कुनो इस सन्धि की चर्चा कर चुके थे।

स्ट्रैसमैन के इस प्रस्ताव ने फ़्रान्स को एकदम कसौटी पर चढ़ा दिया। वह अपनी रक्षा चाहता था और चाहता था कि उसके सीमा प्रान्त सुरक्षित रहें। उसको सब से अधिक डर राइन सीमा प्रान्त पर था और वह डर था जर्मनी से। अब जर्मनी स्वयं फ़्रान्स से इसी बात पर सन्धि करने को तैयार हो गया। ऐसी दशा में यदि फ़्रान्स अपनी बात का पक्का था तो उसे जर्मनी के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना चाहिए था, परन्तु मुश्किल तो यह थी कि यदि वह जर्मनी के साथ सन्धि कर लेता है, तो उसे अपनी बराबरी का पद दे देता है और फिर जर्मनी को दबा नहीं सकता। दूसरी तरफ़ यदि प्रस्ताव को अस्वीकार कर जर्मनी से सन्धि करने से इन्कार करता है, तो वह संसार की दृष्टि में गिर जाता है। ऐसी दशा में जर्मनी की प्रेस्टीज बढ़ जाती है। इन्हीं कारणों से इस समय फ़्रान्स की हालत साँप-छछूँदर की सी हो रही थी।

यह सब स्ट्रेसमैन के दिमाग़ की उपज थी; क्योंकि वह बड़ा ही दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। बल्कि यह कहना अत्युक्ति न होगा कि वर्तमान जर्मनी का वह सब से बड़ा राजनीतिज्ञ था। वह समझता था कि फ़्रान्स का राइन सीमा-प्रान्त सुरक्षित होने से जर्मनी का सीमा-प्रान्त भी सुरक्षित हो जावेगा, मित्र-राष्ट्रों को जर्मन राज्य ख़ाली कर देना पड़ेगा और जर्मनी की भूमि का हड़पना बन्द हो जावेगा।

अपना प्रस्ताव उपस्थित कर मित्र-राष्ट्रों में फूट डाल कर स्ट्रेसमैन चुप हो गया और समय की प्रतीक्षा करने लगा। वह चाहता था कि अब मित्र-राष्ट्र ही इस सम्बन्ध में आगे क़दम बढ़ावें। जर्मनी के सौभाग्य से ब्रियाण्ड फ़्रान्स का वैदेशिक मन्त्री बना। यह वही व्यक्ति था, जिसने स्वयं जर्मनी से सन्धि का प्रस्ताव किया था। अतएव जर्मनी के लिए मार्ग सरल हो गया और शीघ्र ही फ़्रान्स तथा जर्मनी के बीच में 'राइन पैक्ट' नाम का समझौता हो गया। अब फ़्रान्स ने जर्मनी से लीग ऑफ़ नेशन्स में शामिल होने के लिए कहा। स्ट्रेसमैन यही चाहता भी था। वह जानता था कि वारसाईल की क़ैद से बचने का केवल यही एक उपाय है। सन् १९१९ में बेचारा जर्मनी लीग से अछूत की भाँति निकाल दिया गया था। मित्र-राष्ट्र उसे लीग से निकाल कर उसका अपमान करना चाहते थे। जर्मनी इस अपमान का अनुभव भी कर रहा था। इसीसे वह लीग में शामिल होने के लिए भिक्षा नहीं माँगना चाहता था। वरन् चाहता था मित्र-राष्ट्र ही इसके लिए उसे न्योता दें। स्ट्रेसमैन ने ऐसा करने के लिए फ़्रान्स को मजबूर भी कर दिया। जिस फ़्रान्स ने जर्मनी को लीग से निकाला था, वही अब उसे लीग में शामिल होने के लिए न्योता देने लगा। इस पर तुर्रा यह कि जब जर्मनी को फ़्रान्स का न्योता मिला, तो स्ट्रेसमैन साहब ने फ़रमाया कि मैं जर्मनी का लीग में शामिल होना आवश्यक नहीं समझता, पर यदि मित्र-राष्ट्र उसे शामिल करना चाहते हैं, तो मुझे कोई विरोध भी नहीं है।

पाठकों को यहाँ पर यह भी समझ लेना चाहिए कि इस प्रश्न पर लीग के छोटे मेम्बरों में घोर असन्तोष फैल गया। छोटे राष्ट्रों ने देखा कि बड़े-बड़े राष्ट्र अपनी भलाई के लिए जो चाहते हैं, वही लीग से करा लेते हैं। और छोटे राष्ट्रों के हित का कुछ भी ध्यान नहीं रखते। अतएव छोटे राष्ट्रों ने बड़े राष्ट्रों की इस नीति का विरोध किया। स्पेन, ब्रेज़ील, चीन और पोलैण्ड ने अपने-अपने लिए लीग की कौन्सिल में स्थायी स्थान माँगा। इस माँग से बड़े राष्ट्र बहुत ही घबड़ाए। सबको एक साथ ही कौन्सिल में स्थान देना मुमकिन नहीं था। ख़ैर, बहुत समझाने-बुझाने के बाद पोलैण्ड, स्पेन और चीन ने अपनी माँगें वापस ले लीं। पर ब्रेज़ील अपनी बात पर अड़ा रहा और किसी तरह सहमत नहीं होता था। अस्तु।

अन्त में जर्मनी लीग ऑफ़ नेशन्स का मेम्बर बनाया गया और उसे कौन्सिल में भी स्थायी स्थान दिया गया। यूरोप की राजनीति में एक नए युग का श्रीगणेश हुआ।

'राइन पैक्ट' पर इटली के भी हस्ताक्षर थे और वह लीग के प्रश्न पर जर्मनी का समर्थक था। टिरोल में थोड़े से जर्मन रहते थे। उन पर फ़ेसिस्ट शासन-काल में घोर अत्याचार हुए। जर्मनी के पत्रों ने इन अत्याचारों का घोर विरोध किया। जनता ने प्रदर्शन कर अपना क्रोध प्रकट किया। फ़रवरी के महीने में, बवेरिया की सभा में सरकार से इस सम्बन्ध में अनेक प्रश्न किए गए। प्रधान-मन्त्री डॉक्टर हेल्ड ने उन प्रश्नों का उत्तर देते हुए इटली पर बहुत से दोषारोपण किए। परन्तु इटली का प्रतिनिधि सिगनर मुसोलिनी चुप रह जाने वाला शख़्स न था। उसने बड़े ज़ोरदार शब्दों में इटली का पक्ष समर्थन किया और जर्मनी को ख़ूब खरी-खरी सुनाई। मुसोलिनी की बातें सुन कर जर्मन-जनता आग-बबूला हो गई। इसलिए स्थिति को हाथ से बाहर होते देख कर, इच्छा न रहते हुए भी, स्ट्रेसमैन को जनता को शान्त करना पड़ा। उसने एक कड़ा व्याख्यान देकर इटली को बहुत कुछ भला-बुरा कह डाला। इससे जनता कुछ शान्त हुई। परन्तु स्ट्रेसमैन को इस बात का बड़ा दुःख हुआ कि दक्षिणी जर्मनी के कुछ अदूरदर्शी

राजनीतिज्ञों की बेवक़ूफ़ी के कारण उसे एक मित्र-राष्ट्र को नाराज़ करना पड़ा और वह भी ऐसे अवसर पर, जबकि उसकी मित्रता की अत्यावश्यकता थी।

उपर्युक्त घटना ने डॉक्टर हेल्ड के हौसले को और भी बढ़ा दिया। उसने एक व्याख्यान देकर जर्मनी के वैदेशिक मन्त्री तथा उसके कैबिनेट पर घोर आक्रमण किया। अभी कैबिनेट चैन से बैठने भी न पाई थी कि उसे एक दूसरे विरोध का सामना करना पड़ा। तत्कालीन सरकार ने विदेशों के जर्मन 'कनसुलेटों' (उपनिवेशों) में उड़ने वाले राष्ट्रीय झण्डे के रङ्गों में परिवर्तन करना चाहा। सरकार की इस नीति से गरम दल के लोगों में घोर असन्तोष फैला। उन्होंने सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव पेश करने की सूचना दी और अन्त में अविश्वास का प्रस्ताव ३० वोटों से पास भी हो गया। फलतः कैबिनेट ने इस्तीफ़ा दे दिया। अनेक कठिनाइयों के पश्चात् डॉ० मार्क्स ने दूसरी कैबिनेट का निर्माण किया। परन्तु डॉक्टर मार्क्स की कैबिनेट एक कमज़ोर कैबिनेट थी, और वह उससे येन-केन-प्रकारेण काम चलाना चाहता था। पर वह अधिक काल तक क़ायम न रह सकी। उसे भी शीघ्र स्तीफ़ा देना पड़ा। इसके बाद प्रेज़िडेण्ट और डॉक्टर मार्क्स ने मिल कर एक दूसरी कैबिनेट का निर्माण किया।

१९२१ में ही एक ऐसी सरकार का निर्माण हुआ, जो प्रजातन्त्रीय होने के साथ ही साथ मज़बूत भी थी। पार्लामेण्ट का बहुमत इस सरकार के साथ था और यह बड़ी आसानी से विरोधियों का सामना कर सकती थी। इस सरकार ने सबसे बड़ी बुद्धिमानी का जो कार्य किया, वह यह था कि हर स्ट्रेसमैन को अपने स्थान पर बने रहने दिया। कौन्सिल में स्थान पाने के पश्चात् जर्मनी ने अपनी नीति से अपने शत्रुओं को अत्यन्त निराश कर दिया। उसने सर्वदा शान्ति-नीति का समर्थन किया और अपनी मनोवृत्ति से प्रमाणित कर दिया कि वह युद्ध का सब से बड़ा विरोधी और शान्ति का पोषक है। इस तरह और उसने संसार के राष्ट्रों में अपना पुराना स्थान प्राप्त कर लिया। वारसाईल की सन्धि के होते हुए भी अब वह स्वतन्त्र था और अन्यान्य राष्ट्रों के बराबर था। लीग के अन्दर बड़े राष्ट्रों का एक गुट्ट है और जर्मनी भी उस गुट्ट में शामिल है। बड़े राष्ट्रों के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर अब वह भी संसार की समस्याओं को सुलझाता है। जब इटली के झगड़े ने यूरोप में युद्ध के बादल इकट्ठे कर दिए थे, तब फ़्रान्स और इङ्गलैण्ड ने जर्मनी को साथ लेकर शान्ति का प्रयत्न किया था। जर्मनी ने इङ्गलैण्ड, रूस, इटली, स्पेन आदि से व्यापारिक सन्धियाँ कीं। सन् १९२७ में लीग ऑफ़ नेशन्स की एसेम्बली में स्ट्रेसमैन ने यह प्रस्ताव रक्खा कि चूँकि जर्मनी पूर्णतया निशस्त्र हो चुका है; अतएव अब और राष्ट्रों को भी निशस्त्र होने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। परन्तु इस प्रश्न का अभी तक कोई निबटारा नहीं हुआ है। फ़्रान्स ने जर्मनी से यह वादा किया था कि उसकी जितनी सेना राइन पर पड़ी है, उसमें से दस हज़ार सैनिक हटा लिए जावेंगे। अक्टूबर के महीने में फ़्रान्स ने अपने ये वचन पूरे भी कर दिए। जब अमेरिका ने युद्ध का अन्त कर देने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि करने का प्रस्ताव किया था, तब उसके प्रस्ताव का जर्मनी में ज़ोरदार स्वागत हुआ था और सन् १९२८ की गर्मियों में सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए स्ट्रेसमैन स्वयं पेरिस गए थे।

यद्यपि डॉज़ कमिटी ने हर्जाने की समस्या को बहुत-कुछ सरल कर दिया था, परन्तु फिर भी जर्मनी की कठिनाइयों का अन्त नहीं हुआ। क्योंकि उसके लिए सन्धि की उन शर्तों का पालन करना अत्यन्त कठिन हो गया। इसलिए इच्छा रहते हुए भी वह उन शर्तों को पालन नहीं कर सकता था। अतएव इस समस्या को हल करने के लिए एक और कमिटी बिठाई गई। इस कमिटी को 'यङ्ग कमिटी' कहते हैं। इस कमिटी ने हर्जाने के प्रश्न को फिर से हल करने के लिए एक विशाल योजना जर्मनी के सम्मुख रक्खा है, परन्तु इस योजना से वह प्रश्न कहाँ तक हल हो जावेगा, यह तो भविष्य के गर्भ में है।

अन्त में मैं दो शब्द जर्मनी की शिक्षा-व्यवस्था के बारे में कह देना चाहता हूँ। जर्मनी में शिक्षा अनिवार्य है—६ वर्ष से १४ वर्ष तक प्रत्येक बालक को किसी शिक्षालय में अवश्य पढ़ना पड़ता है। जर्मनी के स्कूलों के शिक्षकों को सरकारी सार्टीफ़िकेट प्राप्त करना पड़ता है।

सन् १९२६-२७ में जर्मनी में ५२,७८५ सरकारी प्रारम्भिक शिक्षालय थे। जिनमें १,८०,९६४ शिक्षक काम कर रहे थे। इन शिक्षकों में १,३७,१७३ पुरुष थे और ४३,७९१ स्त्रियाँ। विद्यार्थियों की संख्या ६६,५९,७६९ थी, जिनमें से ३३,५६,७४० लड़के थे और ३३,०३,०२९ लड़कियाँ थीं। सरकारी प्रारम्भिक शिक्षालयों के अलावा ५७२ निजी शिक्षालय थे, जिनमें ३६,९९१ विद्यार्थी पढ़ रहे थे। इनमें से १५,२११ लड़के थे और २१,७८० लड़कियाँ थीं।

सन् १९२० की २८वीं अप्रैल को यह क़ानून बना कि प्रत्येक जर्मन बालक को चार वर्ष तक प्रारम्भिक शिक्षा लेनी होगी। इन प्रारम्भिक शिक्षालयों के बाद मिडिल स्कूल हैं। इनकी विशेषता यह है कि इनमें अङ्गरेज़ी और फ़्रेञ्च भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं। सन् १९२६-२७ में १,५७४ मिडिल स्कूल थे, जिनमें १२,४१५ शिक्षक काम करते थे। इन स्कूलों में २,६३,९९२ विद्यार्थी पढ़ते थे, जिनमें १,२२,७९९ लड़के थे और १,४१,१९३ लड़कियाँ थीं। विश्वविद्यालयों के लिए लड़कों को तैयार करने के लिए सेकेण्डरी मदरसे भी हैं। इनका शिक्षा-काल ९ वर्ष का है। इन स्कूलों में कुछ स्कूल अपने-अपने विषयों में विशेषता रखते हैं। किसी-किसी में अर्थमेटिक (अङ्कगणित) की विशेष पढ़ाई होती है और किसी में वर्तमान भाषाओं की विशेष पढ़ाई होती है। लड़कियों के लिए विशेष मिडिल स्कूल हैं, जो उन्हें विश्वविद्यालय की शिक्षा के लिए तैयार करते हैं। सन् १९२६-२७ में लड़कों के लिए १,५९८ मिडिल स्कूल थे, जिनमें २७,४७८ शिक्षक काम करते थे और ५,१८,७८८ लड़के पढ़ते थे। लड़कियों के लिए ९३४ हाई स्कूल थे, जिनमें १५,४४६ शिक्षक काम करते थे और २,७१,२८७ लड़कियाँ शिक्षा पाती थीं। जर्मनी में १० विशेष विद्या-सम्बन्धी हाईस्कूल हैं तथा दो पशु-चिकित्सा सम्बन्धी कॉलेज हैं। सन् १९२८ में इन दोनों कॉलेजों में ५७६ विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। जर्मनी में चार कृषि-सम्बन्धी कॉलेज हैं, जिनमें १४८३ लड़के शिक्षा पाते थे। सङ्गीत-विद्या सम्बन्धी १२ कॉलेज हैं, जिनमें ४,४९५ विद्यार्थी सङ्गीत-विद्या सीखते हैं। जर्मनी प्रजातन्त्र में २३ विश्वविद्यालय हैं। सन् १९२८ में इन विश्वविद्यालयों में ५,४०६ शिक्षक पढ़ाते थे। इन शिक्षकों में से ४३ स्त्रियाँ थीं, और ८३,१७२ विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। इन विद्यार्थियों में से १२,०३७ लड़कियाँ थीं। सन् १९२८ में विदेशों के ४,०७३ विद्यार्थी शिक्षा पा रहे थे।

युद्ध ने जर्मनी को अत्यन्त दुर्बल तथा ज़ख़्मी कर दिया था। परन्तु अब उसके घाव भर चले हैं और बहुत शीघ्र वह अपने पुराने पद पर आ जावेगा। उसके पश्चात् यूरोप तथा संसार के प्रति उसकी क्या मनोवृत्ति होगी, यह एक विचारणीय प्रश्न है। मैं आशा करता हूँ कि नवीन जर्मनी संसार की शान्ति का सब से बड़ा पोषक होगा।

* * *

मध्य यूरोप की समस्याएँ

[डॉक्टर मथुरालाल जी शर्मा, एम० ए०, डी-लिट्]

राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों की उन्नति के लिए रूस ने, सन् १९२६ में, एक विशेष आयोजन किया था। इस आयोजन के अनुसार सरकार ने वहाँ के सब व्यवसाय अपने अधीन कर लिए हैं और घरू कारख़ाने प्रायः बन्द हो गए हैं। जो कुछ हैं, उनको कई क़ानूनी अड़चनें और आपदाएँ उठानी पड़ती हैं। हड़ताल करना क़ानूनन नाजायज़ कर दिया गया है और जो लोग परिश्रम कर सकने योग्य हैं, उनको विवश होकर कार्य करना पड़ता है। सस्ता माल उत्पन्न करने, देश की बेकारी को हटाने, राष्ट्रीय वाणिज्य को उन्नति करने और दुर्भिक्षों के आक्रमण को रोकने के निमित्त रूसी शासन-सञ्चालकों ने यह आयोजन किया था। जिस समय इसका आरम्भ किया गया था, उस समय यूरोप और अमेरिका ने इसको शेख़चिल्ली की तजवीज़ और अव्यवहार्य आदर्श कह कर इसकी हँसी की थी, परन्तु पिछले अट्ठारह मास के अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि यह आयोजन कितनी दूरदर्शिता के साथ आरम्भ किया गया था। इस समय रूस का तैयार किया हुआ, सस्ता माल यूरोप के प्रत्येक नगर में दिखाई देता है। भारी कर लगाने पर भी यह लाभ के साथ सर्वत्र बेचा जाता है। औद्योगिक संसार रूस का पञ्च वर्षीय आयोजन देख कर हैरान है। यह आयोजन वैसे तो सिर्फ़ पाँच वर्षों के लिए आरम्भ किया गया था, सरकार देखना चाहती थी कि यह सफल हो सकता है या नहीं, परन्तु गत दो वर्षों की सफलता ने सिद्ध कर दिया है कि यह आयोजन अत्यन्त व्यवहार्य और लाभकारी है। इस सफलता को देखते हुए हम कह सकते हैं कि रूस में इसको सरकार की स्थायी नीति और शासन-विधि का अङ्ग और उद्देश्य बना दिया जावेगा।

इस समय संसार के औद्योगिक देश इस आयोजन से अत्यन्त दुखी हैं। जितना सस्ता माल रूस तैयार कर सकता है, उतना सस्ता वे पैदा नहीं कर सकते। इसलिए रूसी माल का प्रचार और व्यवहार प्रतिदिन बढ़ता जाता है। इस विषय में गत मास में 'लण्डन-टाइम्स' ने लिखा था कि "हमारे देश का व्यवसाय, रूसी व्यवसाय का मुक़ाबला नहीं कर सकता। रूसी सरकार तो स्वयं ही एक कम्पनी बन गई है। उतनी पूँजी, शक्ति और सङ्गठन अन्य देशों के व्यापारिक सङ्घों के पास कहाँ से आ सकता है? ऐसा जान पड़ता है कि रूस शीघ्र ही अन्य देशों के व्यवसायों को चौपट कर डालेगा।" इस भावी विपत्ति के निवारण का उपाय यह पत्र यह बतलाता है कि रूसी माल को देश में आने से रोका जावे। फ़्रान्स, बेलजियम आदि-आदि देशों में भी यही हलचल है। बड़े-बड़े कारख़ानों के मालिक रूसी माल के सस्तेपन से त्रस्त हैं और अपनी-अपनी सरकारों पर रूसी माल के बहिष्कार करने का ज़ोर डाल रहे हैं। सबका यही कहना है कि यदि भारी औद्योगिक विनाश से बचना है, तो रूस के साथ कोई व्यापारिक सन्धि न रक्खी जावे। साथ ही रूस पर एक लाञ्छन यह भी लगाया जाता है कि श्रमजीवियों का, हड़ताल करने का अधिकार छीन कर, उनकी मज़दूरी निश्चित करके तथा प्रत्येक स्वस्थ श्रमजीवी को क़ानूनन परिश्रम करने के लिए विवश करके रूस ने एक प्रकार से दास-प्रथा पुनर्जीवित करने का उद्योग

किया है। अभी कुछ अर्सा हुआ, संयुक्त राज्य अमेरिका की व्यवस्थापिका सभा में श्रीयुत कण्डल ने यह बिल पेश किया था कि रूसी माल पर कर बढ़ाया जावे और सरकारी एजेण्टों द्वारा इस बात का पता लगाया जावे कि रूस में बेगार-प्रथा का क्या स्वरूप जारी किया गया है ?

इस प्रकार सम्पूर्ण यूरोप और अमेरिका की भौंहें रूस की तरफ़ टेढ़ी हो रही हैं। अमेरिका ने तो कुछ रूसी माल पर कर भी बढ़ा दिया है। किन्तु अभी किसी यूरोपीय देश की सरकार ने अपना रुख़ नहीं बदला है। रूस के साथ सबकी व्यापारिक सन्धियाँ जारी हैं। केवल जर्मनी और इटली, ये दो देश हैं, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष में रूस के विरोधी गुट में सम्मिलित नहीं हैं। इसका कारण यह है कि जर्मनी और इटली दोनों वर्सेल की सन्धि के विरोधी हैं। इन दोनों देशों से तथा रूम (तुर्की) से मित्रता स्थापित करके रूस ने भारी राजनीतिज्ञता का परिचय ही नहीं दिया है, बल्कि यूरोप के स्वार्थ-सङ्घ में फूट डाल दी है। आगामी मई मास में जब यूरोपीय सम्मेलन पर विचार किया जावेगा तो ऐसा जान पड़ता है कि रूस, जर्मनी और इटली का एक स्वर होगा और शेष यूरोप का दूसरा।

रूस के पञ्च-वर्षीय आयोजन के फल-स्वरूप, उसके निर्यात, सन् १९२९-३० में पिछले वर्ष से लगभग सवाए हो गए हैं, परन्तु तो भी उसके आयात निर्यात से कहीं अधिक हैं। अमेरिका में रूसी व्यापार के ख़रीद और फ़रोख़्त का अनुपात ६:१ और इङ्गलैण्ड में १:१०५ है। अमेरिका ने तिस पर भी साम्यवादी कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार रूसी माल पर भारी कर लगा कर एक प्रकार से उसका बहिष्कार किया है। परन्तु इङ्गलैण्ड में अभी ऐसा नहीं हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन में भी साम्यवाद के प्रचार की कई बार शिकायतें हुई हैं, परन्तु रूसी माल को बहिष्कृत करने का या उस पर भारी कर लगाने का कोई व्यापक आन्दोलन नहीं है। इसका कारण मज़दूर-सरकार की नीति जान पड़ता है। वास्तव में अमेरिका ने रूसी माल पर कर लगा कर अन्तर्राष्ट्रीय औदार्य का परिचय नहीं दिया है।

जर्मनी और पोलैण्ड में इधर कुछ अर्से से बड़ी खींचातानी हो रही है। नहीं कह सकते कि यह मतभेद किस दिन भयङ्कर रूप धारण कर ले। इसका कारण है वर्सेल की सन्धि। महासमर के अन्त में जब जर्मनी को लुञ्ज-पुञ्ज किया गया था तो उसका कुछ हिस्सा पोलैण्ड में सम्मिलित कर दिया गया था। इस हिस्से में जर्मन जाति के लोग अधिकतया बसे हुए हैं। पोलैण्ड के समस्त निवासियों को मिलाने पर इन लोगों की संख्या अत्यन्त अल्प है। अतः पोलैण्ड की पार्लामेण्ट में इनकी कुछ नहीं चलती। ऐसी अल्प संख्यक जनता के अधिकारों की रक्षा के निमित्त राष्ट्र-सङ्घ ने नियम बना रक्खे हैं, परन्तु या तो पोलैण्ड सरकार उन नियमों की उपेक्षा करती है या पोलैण्ड-निवासी जर्मन और अधिक अधिकार चाहते हैं। गत नवम्बर में पोलैण्ड को अपर सिलेसिया नामक प्रान्त में, जहाँ जर्मन लोगों की बस्ती अधिक है, जब पार्लामेण्ट के लिए निर्वाचन होने लगा तो जर्मन लोगों में बहुत असन्तोष फैल गया था। गत जनवरी में जर्मनी के चान्सलर (प्रधान-मन्त्री) श्रीयुत ब्रूनिङ्ग ने इस प्रान्त का दौरा किया था। जर्मनी में पोलैण्ड सरकार के व्यवहार के प्रति बड़ा असन्तोष है और उधर पोलैण्ड-निवासी जर्मन लोगों को भी इस बात की शिकायत है कि उनके असली देश ने उनको एक प्रकार से भुला-सा दिया है। श्रीयुत ब्रूनिङ्ग के दौरे का यही अभिप्राय था कि जर्मन-जनता को सन्तोष हो जाए कि सरकार इस विषय में उपेक्षा नहीं कर रही है और पोलैण्ड के जर्मनों को सान्त्वना हो जावे कि जर्मनी ने उनको भुला नहीं दिया है। वे निराधार और असहाय नहीं हैं, उनकी भी कोई सुनने वाला है।

जर्मन-सरकार इस मामले को राष्ट्र-सङ्घ तक पहुँचाना चाहती थी। उधर पोलैण्ड के परराष्ट्र-सचिव श्री० ज़लस्की ने भी घोषित किया था कि अल्पसंख्यक लोगों का मामला (Minority problem) पोलैण्ड की राजनैतिक एकता को हानि पहुँचाने के लिए जो बहाना बनाया जा रहा है, उसका पोलैण्ड-सरकार प्राणपण से विरोध करेगी। आख़िर, गत जनवरी में यह मामला लीग (राष्ट्र-सङ्घ) की कौन्सिल तक पहुँचा ही। लीग-कौन्सिल ने यह व्यवस्था दी कि यह मामला केवल पोलैण्ड और लीग के बीच में है। जर्मनी को इसमें हस्तक्षेप करने का या बोलने का कोई अधिकार नहीं है। लीग ने इस मामले की जाँच करने के लिए एक कमिटी बिठाई, जिसके रिपोर्ट पेश करने पर कौन्सिल ने पोलैण्ड को धीमे शब्दों में दोषी ठहराते हुए,



श्री० जोसेफ़ स्टैलिन

रूसी सोवियट के डाइरेक्टर, जिनके पञ्च वर्षीय आयोजन ने संसार में खलबली मचा दी है।

आयन्दा के लिए सचेत किया है। कमीशन ने रिपोर्ट में लिखा है कि पोलैण्ड ने जर्मनों की अल्पसंख्या (Minority) के साथ अन्याय तो अवश्य किया है, परन्तु साथ ही इसकी भावी आवृत्ति को रोकने का प्रयत्न किया जा रहा है और जिन कर्मचारियों ने पक्षपात किया था, उनके ऊपर मुक़दमे चलाए जा रहे हैं। यह रिपोर्ट ऐसी कूटनीतिक सफ़ाई के साथ लिखी गई है कि पोलैण्ड और जर्मनी दोनों ही सन्तुष्ट रहें और जो शिकायत है उसका भी अन्त हो जावे। श्रीयुत हेण्डरसन (अङ्गरेज़ी परराष्ट्र-सचिव) और श्रीयुत ब्रियाण्ड (फ़्रेञ्च परराष्ट्र-सचिव) ने पोलैण्ड सरकार को लिखा है कि यदि कौन्सिल की चेतावनी को उसने नतशिर-सा स्वीकार करके उस पर फ़ौरन अमल नहीं किया, तो पोलैण्ड के विरुद्ध जो उक्रेन की शिकायतें हैं, उनसे उसको भारी क्षति पहुँचेगी। देखें इस चेतावनी और धमकी का पोलैण्ड पर क्या असर होता है।

नॉर्वे, स्वीडन, डेनमार्क और एस्टोनिया पर विश्वव्यापी आर्थिक पतन का गहरा प्रभाव पड़ रहा है। यों तो कौन सा देश है जो इसका अनुभव न कर रहा हो, परन्तु इन छोटे-छोटे देशों में यह समस्या अधिक भयङ्कर है। गत १२ जनवरी को स्वीडन की रिक्सडेग (पार्लामेण्ट) में यही प्रधान विषय था। सम्राट् ने जो भाषण दिया, उसमें आर्थिक पतन का विस्तृत उल्लेख करके कहा गया था कि राज्य-कोष तथा प्राइवेट उद्योग-धन्धों पर इसका अत्यन्त चिन्ताजनक प्रभाव पड़ रहा है, इसलिए या तो कर बढ़ाना पड़ेगा या पिछली बचत का उपयोग करना पड़ेगा। उधर व्यापार-शैथिल्य के कारण कारख़ानों के मालिकों ने घोषणा की थी कि वर्तमान मज़दूरी की दर से कारख़ानों को भारी क्षति पहुँच रही है, इसलिए उसमें १० प्रतिशत कमी की जावेगी। इस घोषणा से श्रमजीवी लोगों ने क्रुद्ध होकर गत फ़रवरी में यह प्रतिघोषणा निकाली थी कि या तो १० प्रतिशत मज़दूरी और बढ़ाई जावे, अन्यथा एक सङ्गठित हड़ताल की जावेगी। आख़िर हड़ताल हुई और सरकार तथा समाज-सेवी नेताओं के संयुक्त प्रयत्न से भी उसका निवारण नहीं हुआ। मार्च का मास कैसे गुज़रा, इसका अभी समाचार नहीं आया है। नॉर्वे की स्टोरटिङ्ग (पार्लामेण्ट) की गत बैठक में भी वाणिज्य-शिथिलता की विशेष चर्चा थी। वहाँ बेकारी भयानक रूप से बढ़ती जाती है, और सरकार ने बेकार लोगों के सहायतार्थ १ लाख क्रोमर (नॉर्वे का सिक्का) की मञ्ज़ूरी दी है। गत २ फ़रवरी को डेनमार्क के नक्सकाऊ नामक नगर में ५०० बेकार मज़दूर मिल कर अधिकारियों के पास गए और कहा कि या तो हमको खाने को दो या उपार्जन का कोई साधन बतलाओ। गत वर्ष डेनमार्क में बेकारों की संख्या ५९,००० थी। परन्तु इस समय ७९,००० से ऊपर है। फ़ोकेटिङ्ग (पार्लामेण्ट) की गत बैठक में इस विषय पर विचार किया गया था। एस्टोनियन सरकार ने भी अभी अपने वार्षिक बजट में एक करोड़ क्राउन की तख़फ़ीफ़ (कमी) की है। इसके फल-स्वरूप कर बढ़ाया गया है, स्कूलों की फ़ीस में वृद्धि की है, और सरकारी नौकरों का वेतन तथा पेन्शनें घटा दी गई हैं।

अभी कुछ वर्ष हुए, फ़िनलैण्ड ने द्वादश वर्षीय मद्य-निषेध क़ानून पास किया था, जो अब तक चल रहा है। परन्तु वहाँ भी अमेरिका-जैसी कठिनाइयाँ उपस्थित होती जाती हैं और स्थिति काफ़ी विचारणीय है। चुङ्गी-विभाग ने रिपोर्ट की है कि सन् १९२९ में साढ़े नौ लाख लिटर (माप) शराब ज़ब्त की गई थी, परन्तु इस वर्ष अर्थात् सन् १९३० में साढ़े दस लाख लिटर ज़ब्त की गई है। सन् १९२९ में शराब पीने के अपराध में २३ हज़ार मनुष्यों को दण्ड दिया गया था और सन् १९३० में २५ हज़ार को। यह भी प्रकट किया गया है कि अन्य जुर्म कम हो रहे हैं। सुधार-सङ्घों की ओर से समाज-सचिव को प्रार्थनाएँ भेजी गई हैं कि भविष्य में मद्य-निषेध नियम का अधिक कठोरतापूर्वक पालन करवाने का आयोजन किया जावे।

ज़ेकोस्लोवेकिया की जनता में कई जातियाँ सम्मिलित हैं। इनमें ज़ेकों की संख्या ६५·५ प्रतिशत, जर्मनों की २३·५ प्रतिशत, हङ्गेरियों की ५·४ प्रतिशत, रूथेनियनों की ३·२ प्रतिशत, यहूदियों की १·३ प्रतिशत और पोल लोगों की ०·५ प्रतिशत है। हाल में जो मनुष्य-गणना हुई है, उसमें अल्पसंख्यक जातियों को यह आशङ्का थी कि सरकार गणना इस विधि से करेगी, जिससे उनकी संख्या और भी कम प्रकट हो। कई सप्ताह तक इन जातियों ने बड़ा तूफ़ान उठाया था। सरकार ने जर्मन और ज़ेचक जातियों के बहुसंख्यक गणकों को इस कार्य के लिए नियुक्त करके जनता के असन्तोष को शान्त किया। ज़ेकोस्लोवेकिया की सब रेलें सरकारी सम्पत्ति हैं और प्रबन्ध सब सरकार के हाथ में है। अभी हाल में ही

(शेष मैटर २९वें पृष्ठ पर देखिए)

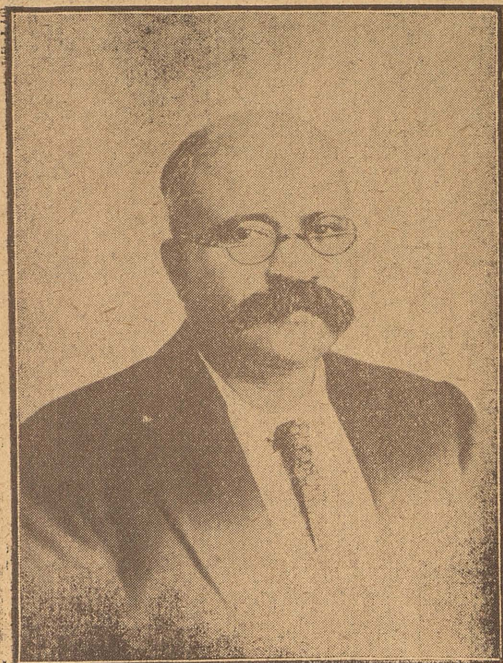
'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

अपनी क़ुर्बानी से है मशहूर नेहरू ख़ान्दान ! शम्अ-महफ़िल देख ले, यह घर का घर परवाना है !!

अपनी धर्मपत्नी श्रीमती स्वरूपरानी सहित स्वर्गीय पं० मोतीलाल जी नेहरू (आपका यह चित्र मृत्यु के दो सप्ताह पूर्व का लिया हुआ है)

बाईं ओर से— कुमारी इन्दिरा नेहरू (कन्या); कुमारी कृष्णा नेहरू—भूतपूर्व राष्ट्रपति की कनिष्ठ सहोदरा; पं० जवाहरलाल नेहरू; उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कमला नेहरू

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ



डॉ० डी० राघवेन्द्र राव, एम० आर० सी० एस०, एल० आर० सी० पी० (लण्डन), जो कोचीन राज्य में चिकित्सा तथा सफ़ाई विभाग के चीफ़ ऑफ़िसर नियुक्त हुए हैं।



श्री० थु० थिन मौङ्ग। रङ्गून कॉरपोरेशन ने आपको सन् १९३१ के लिए अपना मेयर निर्वाचित किया है।

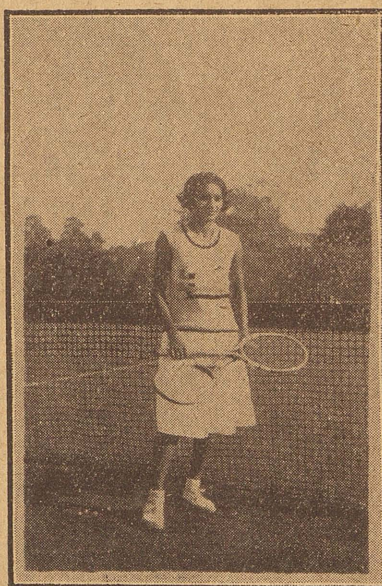


लेजिस्लेटिव एसेम्बली के नए प्रेज़िडेण्ट सर इब्राहीम रहमतुल्ला ख़ाँ



मिस० ए० आर० हेरिस, लखनऊ के गर्ल्स नॉर्मल स्कूल की सञ्चालिका, जिन्होंने गत नए साल के उपलक्ष में द्वितीय श्रेणी का क़ैसरे-हिन्द पदक प्राप्त किया है।







कुमारी शीलाराव—जिन्होंने अखिल भारतवर्षीय टेनिस टूर्नामेण्ट की स्त्री-प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है।

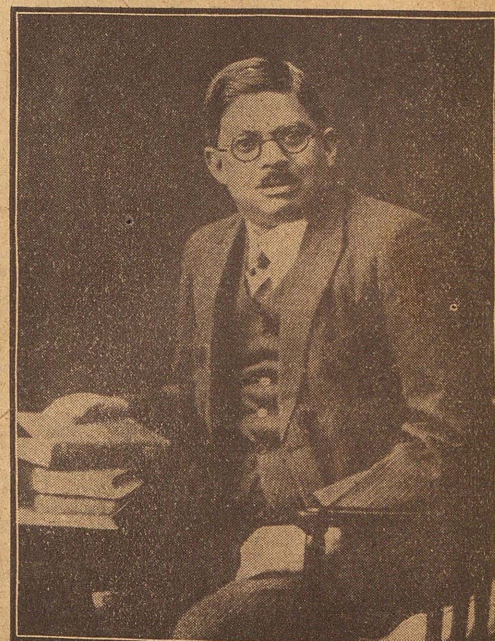




श्री० जे० पी० श्रीवास्तव, एम० एल० सी०, जो राजा बहादुर कुशलपालसिंह के स्थान पर, संयुक्त प्रान्त की सरकार के शिक्षा-मन्त्री नियुक्त हुए हैं।



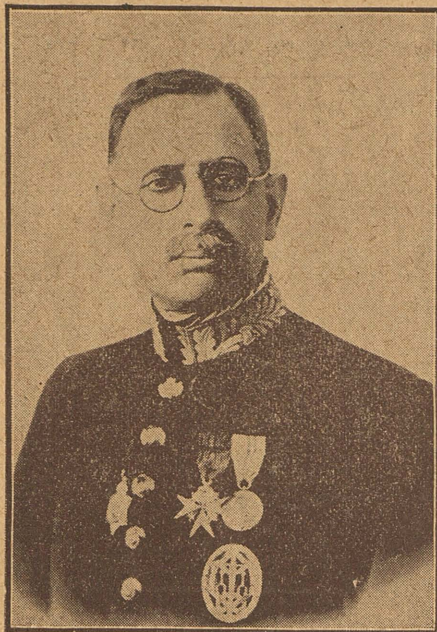
मि० ई० सी० आग़ाबेग, जो आसनसोल की मेसर्स आग़ा-बेग ब्रादर्स के मैनेजिङ्ग पार्टनर हैं और जिन्होंने आसनसोल की म्युनिसिपैलिटी को २०,०००) रु० पानी-कल का भवन बनवाने के लिए दिया है। इसके सिवा गिर्जे, मस्जिदें, पाठशालाएँ और अस्पताल आदि बनवाने में भी आपने विपुल अर्थ दान किया है। आसनसोल डिवीज़न के भारतीय और यूरोपीय अधिवासियों के सुख-स्वच्छन्दता के लिए आपने कितनी ही कीर्तियाँ स्थापित की हैं।



'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ



त्रिचनापल्ली (मद्रास) के अखिल भारतवर्षीय खादी-प्रदर्शिनी का स्वागत-समारोह।



भारत-सरकार के शिक्षा-मन्त्री—सर फ़ज़ले हुसेन, जो दिल्ली यूनिवर्सिटी के कन्वोकेशन के सभापति बनाए गए थे। यह सम्मान पाने वाले आप सर्व-प्रथम भारतीय हैं।



त्रिचनापल्ली (मद्रास) के अखिल भारतवर्षीय खादी-प्रदर्शिनी के उद्घाटनकर्ता आचार्य पी० सी० राय का स्वागत-समारोह।



कानपुर की राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—श्रीमती शान्ता देवी शर्मा—जो हाल ही में जेल से छूटी हैं।



डॉ० श्रीमती सुखताङ्कर—आप बम्बई के म्युनिसिपल कॉरपोरेशन की सदस्या हैं।



मध्य प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के आठवें डिक्टेटर—डॉक्टर के० सी० बघेल, जिन्होंने सरकारी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया है।



स्वर्गीय पं० मोतीलाल नेहरू के श्राद्ध के दिन रङ्गून (बर्मा) में निकलने वाले वृहद् जुलूस का एक भाग।



कालीकट (दक्षिण) के कॉङ्ग्रेस की सातवीं डिक्टेटर—श्रीमती भगी पादामनी—राष्ट्रीय कार्यों में आप विशेष भाग लेती हैं।



मसूरी कॉङ्ग्रेस कमिटी की प्रधाना—श्रीमती सावित्री देवी श्रीवास्तव। कानपुर में होने वाले सङ्गीत समाज की आप सभानेत्री चुनी गई थीं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ



धात्री केथेलिन रैम्बले—मद्रास प्रेज़िडेन्सी की सर्वोच्च धात्री-परीक्षा पास करने के उपलक्ष में वहाँ के धात्री एसोसिएशन ने आपको एक पदक प्रदान किया है।



श्री० डी० एस० अयाधुराई—आप एक मद्रासी हैं। आपने गत जनवरी में एक विशालकाय चीता मारा था, जिसका चित्र ऊपर दिया है।



हिज़ हाईनेस ठाकुर साहब धर्मेन्द्रसिंह जी—आप राजकोट स्टेट के नए शासक हैं। आपको हाल ही में अपने स्टेट का शासनाधिकार प्राप्त हुआ है।



कुन्नूर (मद्रास) की मादक-निवारिणी कृस्तान महिला-समिति की सदस्याएँ। बीच में (टोपी लिए) समिति की सभानेत्री श्रीमती डो० ई० सिलवा।



श्री० कल्याणदास भाईदास सराफ़—आप बम्बई की सराफ़ एसोसिएशन के सभापति हैं।



श्रीमती एल० सी० जैन—आप अभी हाल ही में इङ्गलैण्ड से आई हैं और इलाहाबाद की 'गर्ल गाइड कमिश्नर' नियुक्त हुई हैं।



राजा ऋषिकेश लाहा, सी० आई० ई०; आप बङ्गाल नेशनल चेम्बर ऑफ़ कॉमर्स के प्रेज़िडेण्ट चुने गए हैं।



हमने माना कि बहुत देखे हैं मरने वाले, आप मरने का हमारे भी तमाशा देखें।
आईना सामने रख लीजिए, खुल जाय अभी; आप क्या चीज़ हैं, यह आप तमाशा देखें!

दुनिया

ज़र्रे-ज़र्रे से अयाँ[1] जलवए यकताई है,
क़तरे-क़तरे में जो पिनहाँ[2] है, वह दुनिया देखें।
—"शैदा" देहलवी

अब किसी दूसरे आलम का तमाशा देखें,
दीदए[3] शौक़ न जाती हुई दुनिया देखें।
—"अख़गर" लखनवी

वह मेरे नज़्आ[4] के, आलम का तमाशा देखें,
अब जो आए हैं, तो जाती हुई दुनिया देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

तुझको देखें, तेरी दुनिया का तमाशा देखें,
दोनों आँखों में नज़र एक है क्या-क्या देखें!
—"शैदा" देहलवी

फ़लसफ़ी[5] बहस में क्या जलवा ख़ुदा का देखें,
डोर उलझी है, तो फिर उसका सिरा क्या देखें।
बाग़े-आलम की बहुत हमने बहारें देखीं,
मर के क्या जाने कहाँ जायँ हम और क्या देखें?
—"दर" ग्वालियारी

लोग दुनिया जिसे कहते हैं, वह है आलमे[6]ख़्वाब
इसमें क्या ख़ाक रहें और इसे क्या देखें!
—"राना" ग्वालियारी

देख कर हाल मेरा उठ गए वह यह कह कर,
इसमें अब क्या है, इसे बैठ के हम क्या देखें!
—"शाकिर" ग्वालियारी

तुझको देखें कि तेरी ज़ुल्फ़े चलीपा देखें।
महवे हैरत हैं, कि हम इश्क़ में क्या-क्या देखें!
—"सब्र" मुरादाबादी

यह तमन्ना[7] थी कि हुस्ने रुख़े ज़ेबा देखें,
तुम छुपे बैठे हो परदे में तो हम क्या देखें!
वक़्त कम, और ज़माने में हज़ारों मञ्ज़र,
पूछते हैं, निगहे शौक़ से, क्या-क्या देखें?
घर छुटा, देश छुटा, अपने सब अहबाब छुटे,
गर्दिशे[8] बख़्त से देख अभी क्या-क्या देखें!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

कलेजा

जल बुझा शम्आ[9] पे हो-हो के फ़िदा परवाना,
इतनी सी जान का दिल देखें कलेजा देखें!
—"शाकिर" ग्वालियारी

कशमकश में तेरे ज़ख़्मी हैं कि अब क्या देखें,
तीर देखें तेरा, या अपना कलेजा देखें।
—"सब्र" मुरादाबादी

फिर चले तीरे-नज़र, फिर वह तमाशा देखें,
क्या मेरा दिल है, मेरे दिल का कलेजा देखें!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—प्रकट, २—छुपा हुआ, ३—आँखें, ४—अन्तिम समय, ५—तार्किक, ६—नींद की दुनिया, ७—अभिलाषा, ८—तक़दीर का उलट-फेर, ९—दीपक।

तमन्ना

फीकी पड़ जायगी, "अरमान" हिना[10] की रङ्गत,
मल के हाथों से मेरा ख़ूने तमन्ना देखें।
—"अरमान" कानपूरी

मौत की फ़िक्र में, बेमौत मरा जाता हूँ,
मुझको देखें, वह मेरे दिल की तमन्ना देखें।
छुपने वाले, हवसे तालिबे[11] दीदार तो देख,
यह तमन्ना है कि हम हस्बे[12] तमन्ना देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

दौरे गरदूँ[13] ने बदल दी है कुछ उसकी हालत,
अब हो क्या रङ्ग, तिलस्माते[14] जहाँ का देखें।
महव हो जायँ तेरे नक़्शे क़दम पर मिट कर,
देख कर पाँव तेरा मुँह न किसी का देखें!
—"शैदा" देहलवी

आँख पड़ जाय बुतों पर जो सनम[15] ख़ाने में,
जलवए हुस्न में एक नूर ख़ुदा का देखें।
—"रौनक़" देहलवी

सदक़े[16] सदक़े तेरे ऐ जलवए[17] जानाँ सदक़े,
जो तुझे देख लें वह मुँह न किसी का देखें।
अब उन्हें चैन नहीं, अब उन्हें आराम नहीं,
देखने वाले असर मेरी[18] फ़ुग़ाँ का देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

शौक़[19] सिजदा में, वहीं फ़र्शे ज़मीं हों आँखें,
जिस जगह पर भी तेरा नक़्शे कफ़े[20] पा देखें।
—"रौनक़" देहलवी

ख़्वाब में जिसने दिखाई है झलक धुँधली सी,
काश आँखों से उसी बुत का[21] सरापा देखें।
—"क़मर" चरथावली

सर झुका कर वहाँ आँखों से लगाएँ[22] उश्शाक़,
यह जो रस्ते में तेरा नक़्शे कफ़े पा देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

तमाशा

बाग़े आलम में, जो रङ्गे[23] गुले यकता देखें,
ऐन कसरत[24] में भी वहदत[25] का तमाशा देखें।
नज़र आ जाय तसव्वुर[26] में तजल्ली[27] उनकी,
जलवए तूर का हम दिल में तमाशा देखें।
—"रौनक़" देहलवी

१०—मेहदी, ११—प्रेमी, १२—जी भर, १३—आसमान का चक्कर, १४—संसार का तमाशा, १५—मन्दिर, १६—निछावर, १७—ज्योति, १८—फ़रियाद, १९—बन्दना करना, २०—पाँव का निशान, २१—सर से पैर तक, २२—प्रेमियों, २३—फूल, २४—बहुत, २५—एक, २६—ध्यान, २७—ज्योति।

अपनी हस्ती का जो एहसासे[28] ख़ुद आराई[29] हो
जुज़वे[30] में कुल का नज़र आए तमाशा देखें।
—"शैदा" देहलवी

तूर[31] पर बर्क़[32] से यह होश ने मूसा से कहा,
हम कहाँ तक तेरे जलवे का तमाशा देखें।
—"अख़गर" लखनवी

शोलारु[33] तुमको अगर हज़रते मूसा देखें,
है यक़ीं तूर का वह फिर न तमाशा देखें।
—"अरमान" कानपूरी

खुल न जाएँ कहीं असरारे[34] जुनूनो वहशत,
आईनाख़ाना में क्यों अपना तमाशा देखें।
—"अकमल" इटावी

आईना में जो वह अपना रुख़े[35] ज़ेबा देखें,
ख़ुद तमाशाई बनें, और तमाशा देखें।
—"दास" मुरादाबादी

वह हमारे दिले पुर-दाग़ को देखें आकर,
जाके गुलशन में न फूलों का तमाशा देखें।
—"राना" ग्वालियारी

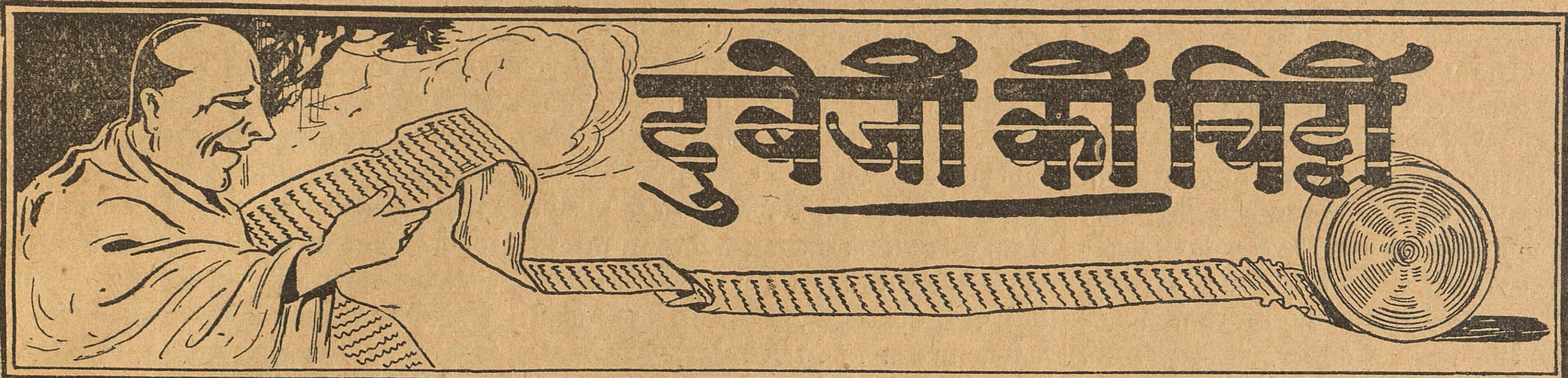
किब्रो[36] नख़वत के जिन आँखों पर पड़े हैं परदे,
ख़ाक वह क़ुदरते ख़ालिक़ का तमाशा देखें।
शाम से ता ब-सहर,[37] और सहर से ता शाम,
हम कहाँ तक तेरे जलवे का तमाशा देखें।
—"शाकिर" ग्वालियारी

आज उनके भी उड़े हाथ के तोते "तायर",
आके बालीं[38] पर अगर मेरा तमाशा देखें।
—"तायर" बरेलवी

दिल की ज़िद है, कि निकल जाऊँगा पहलू से अभी
आँखें कहती हैं ज़रा और तमाशा देखें।
—"क़मर" चरथावली

हमने माना, कि बहुत देखे हैं मरने वाले,
आप मरने का हमारे भी तमाशा देखें।
हमसे औरों से ज़माने में सरोकार नहीं,
तू दिखाए जो तमाशा, वह तमाशा देखें।
आईना सामने रख लीजिए, खुल जाय अभी,
आप क्या चीज़ हैं, यह आप तमाशा देखें।
आतिशे[39] इश्क़ से दिल ख़ाक हुआ जाता है,
घर किसी का जले और आप तमाशा देखें।
ख़ाक होने के सिवा, जिस्म में रक्खा क्या है,
मौत आ जाय तो सब उसका तमाशा देखें।
है यक़ीं हज़रते "बिस्मिल" की तरह हों बिस्मिल
आप अगर उनके तड़पने का तमाशा देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

२८—ख़्याल, २९—अपने को सँवारना, ३०—हिस्सा, ३१—पहाड़ का नाम है, ३२—बिजली, ३३—प्रेमिका, ३४—भेद, ३५—सुन्दर चेहरा, ३६—ग़रूर, ३७—सुबह, ३८—सिरहाना, ३९—आग।



अजी सम्पादक जो महाराज,

जय राम जी की !

आज कानपुर के दङ्गे का कुछ विवेचन करने की इच्छा हो रही है। कानपुर का दङ्गा भी, सच मानिए, ईश्वर की लीला थी ! लोगों के लिए मनुष्य का मार डालना खटमल के मार डालने के समान था और घर फूँक देना ऐसा था, जैसे आपके प्रेस में कभी-कभी रद्दी फूँक दी जाती है। पुलिस ने उस समय ब्रह्म का पार्ट जिस ख़ूबी से खेला है, वह सर्वथा प्रशंसनीय था। मनुष्यों की हत्या, घरों का लूटा जाना और फूँका जाना उसके लिए एक तमाशा था। माया में फँसे हुए प्राणी एक दूसरे का गला काट रहे थे और पुलिस यह लीला देख कर हँस रही थी। यदि कभी कोई सहायता के लिए उसको पुकारता था तो वह मानो सुनती ही न थी। सुने भी तो कैसे ? मनुष्य कर्म-बन्धन तथा माया में फँसा हुआ दुख-सुख झेलता है। ब्रह्म उसमें हस्तक्षेप नहीं करता—हस्तक्षेप करे तो विश्व का सब कार्य ही उलट-पुलट हो जाय ! इसी प्रकार यदि पुलिस हस्तक्षेप करती तो दङ्गे का सब कार्य उलट-पुलट हो जाता। कहते हैं कि गज की टेर सुन कर भक्त-वत्सल भगवान नङ्गे पैरों दौड़ पड़े थे। तो जनाब, वह कोई थर्ड-क्लास भगवान होंगे। फ़र्स्ट-क्लास भगवान अर्थात् ब्रह्म जूतियाँ चट-काते हुए भी नहीं घूमते—नङ्गे पैरों भला कौन दौड़ेगा ? पुलिस ने भी यही किया, उसने माया में पड़े हुए प्राणियों की ज़रा भी परवा न की। यदि वह थर्ड-क्लास भगवान की तरह होती तो पीड़ितों की पुकार सुन कर निश्चय ही अपने बूट उतार कर फेंक देती और नङ्गे पैरों दौड़ पड़ती। वह तो ब्रह्म की भाँति निर्लेप तथा निर्विकार होकर चुपचाप सब लीला देखती रही। उसके लिए दङ्गा बिल्कुल साधारण बात थी और क्यों न होती ? यह तो संसार है, इसमें ऐसा होता ही रहता है।

अब ज़रा माया में पड़े हुए प्राणियों की लीला सुनिए। कानपुर के दङ्गे का सूत्रपात, जहाँ तक अपने राम को मालूम हुआ है, इस प्रकार हुआ कि दो मुसलमान, जिनके सम्बन्ध में कहा जाता है, कि ख़ुफ़िया पुलिस के आदमी थे, बूचड़ख़ाने की ओर दौड़ते हुए गए और चिल्ला कर बोले कि—"मुसलमानो ! तुम्हें शर्म नहीं मालूम होती, यहाँ बैठे हो,बादशाही नाके पर हिन्दू मुसलमानों को पीट रहे हैं।" इतना सुनते ही मुसलमान लोग उठे और अपने पड़ोसी हिन्दुओं को पीटने लगे। सम्पादक जी, यह मनोवृत्ति आज तक मेरी समझ में नहीं आई, कि यदि कोई मुझसे आकर कहे कि अमुक स्थान में मुसलमान हिन्दुओं को पीट रहे हैं तो मैं हिन्दुओं की सहायता के लिए उस स्थान पर जाने की अपेक्षा उठ कर अपने पड़ोसी मुसलमान को पीटने लगूँ। साँप का विष झाड़ने वाले लोगों के सम्बन्ध में यह किम्बदन्ती अलबत्ता सुनने में आई है कि उनमें यह कमाल होता है कि जो कोई उनसे जाकर कहता है कि अमुक आदमी को साँप ने काट खाया तो वह सूचना देने वाले को तमाचा मारता है। तमाचे के लगते ही सूचना देने वाला बेहोश होकर गिर पड़ता है और उधर सर्पदंष्ट अच्छा हो जाता है। और इधर सूचना देने वाले के शरीर में सर्प-विष आ जाता है जिसे झाड़ने वाला मन्त्र द्वारा दूर कर देता है। यदि ऐसा कमाल भी होता कि अपने पड़ोसी को पीटने से दूसरी जगह का दङ्गा अपने आप शान्त हो जाता और इधर थोड़ी देर परस्पर लड़-भिड़ कर ये भी शान्त हो जाते, तब भी कुछ बात होती। परन्तु यहाँ तो विष उतरने की अपेक्षा दूना चढ़ता है। वल्लाह क्या कमाल है, यद्यपि वीरता और न्याय इसमें लेशमात्र भी नहीं है। वीरता और न्याय तो तब हो, जब हम उन्हीं का सामना करें और उन्हीं को ठोकें-पीटें जिन्होंने कि ठोंक-पीट-काण्ड प्रारम्भ किया है। इसमें भगवान जाने कौन सी बहादुरी है कि राम से बदला लेने के लिए श्याम को पीट दिया जाय ! और फिर ऐसी दशा में, जबकि राम की हमने कभी सूरत भी नहीं देखी और श्याम एक मुद्दत से हमारा पड़ोसी है। यह तो वैसी ही बात हुई कि कोई व्यक्ति यह सुन कर कि अमुक के पुत्र ने अपने पिता को पीटा, अपने पुत्र को पीटने लगे। क्यों ? इसलिए कि पुत्र ने पिता को पीटा, इसलिए पुत्र को दण्ड अवश्य मिलना चाहिए। इस बात से कोई सरोकार नहीं कि किस पिता के बदले में कौन पुत्र पिटता है। इस अन्धेर का भी कुछ ठिकाना है ! इन भले आदमियों के लिए उस समय न पुलिस का अस्तित्व रह जाता है न न्यायालय का। यों साधारणतया लड़ाई-झगड़ा होने पर पुलीस तथा न्यायालय की शरण ली जाती है, परन्तु लोग कभी-कभी अपने हाथ में क़ानून की नकेल पकड़ कर सरकार का पार्ट स्वयम् ही अदा करने पर कटिबद्ध हो जाते हैं। यद्यपि इसमें नुक़सान उठाना पड़ता है; क्योंकि ऐसा करने में स्वयम् सरकार बहादुर भी पिट जाती है।

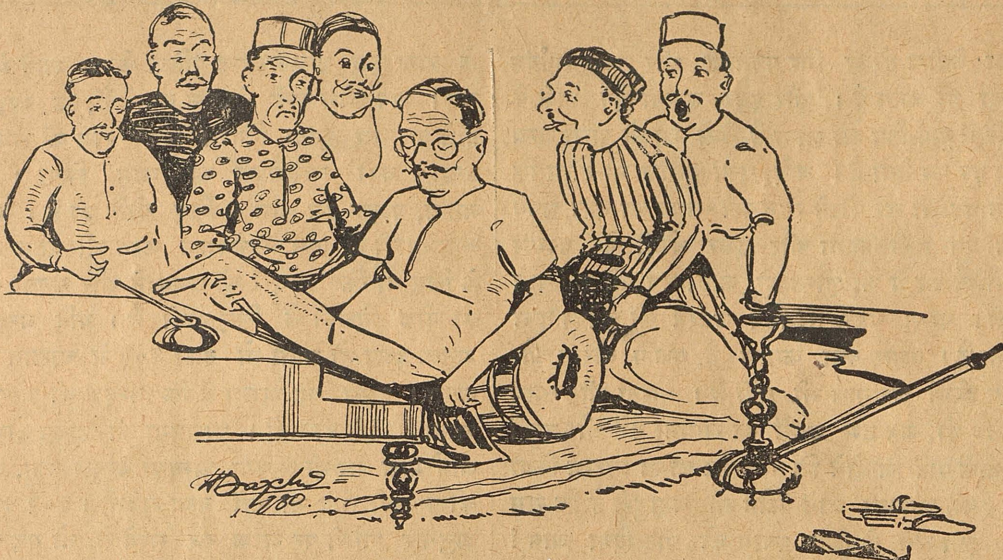
इस प्रकार के दङ्गों की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि अपराधी के बदले में निरपराध को दण्ड मिलता है। कानपुर के दङ्गे में हिन्दू-मुसलमान लड़े और दोनों ने बड़ी वीरता दिखाई। ख़ूब स्त्रियों और बच्चों पर हाथ साफ़ किए गए। जब से अङ्गरेज़ी राज्य हुआ तब से लोगों का अस्त्र-शस्त्र चलाने का अभ्यास छूटा हुआ है। अतएव इस विचार से, कि यह विद्या बिल्कुल लुप्त न हो जाय, लोग इस प्रकार कभी-कभी 'स्वाध्याय' कर लिया करते हैं। परन्तु यह स्वाध्याय अशिक्षित लोगों तक ही सीमाबद्ध रहता है। पढ़े-लिखे और बुद्धिमान लोग ज़रा सोच-समझ कर काम करते हैं। एक वकील साहब के मकान पर जब मुसलमानों ने आक्रमण किया तो वह बन्दूक़ बग़ल में रख कर क़ानून की पुस्तक के पृष्ठ उलटने लगे और यह देखने लगे कि वह किस दफ़ा के अनुसार बन्दूक़ का उपयोग कर सकते हैं। गँवार मुसलमानों ने उन्हें इतना समय भी न दिया कि वह उस दफ़ा को ढूँढ़ लेते। बेचारों ने विवश होकर यह निश्चय किया कि चाहे मकान लुट जाय और सब लोग मार डाले जायँ, परन्तु वह बन्दूक़ न चलाएँगे। परिणाम यह हुआ कि उनका मकान लुट गया। उनके और उनके परिवार के प्राण कुछ हथियारबन्द पुलिस के आ जाने से बच गए। अब लोग उन्हें बेवक़ूफ़ बनाते हैं, कि बन्दूक़ के होते हुए घर लुटवा दिया। अपने राम की समझ में उन्होंने बड़ी बुद्धिमानी का काम किया। अजी जनाब, बन्दूक़ इस काम के लिए थोड़े ही है। वह तो ब्याह-शादी में ज़रा भड़भड़ाहट करने और शान जमाने के लिए या फिर बन्दरों को धमकाने और कबूतर-बत्तख़ को मोक्ष दिलाने के लिए होती है। यदि बन्दूक़ से मनुष्य-हत्या हो जाती तो दफ़ा ३०२ में चालान न हो जाता। इससे यह अच्छा है कि बन्दूक़ की ओर ऐसे समय में देखे ही नहीं। परमात्मा की इच्छा होगी तो जानोमाल बच ही जायगा, अन्यथा बन्दूक़ क्या, बन्दूक़ की परदादी तोप भी नहीं बचा सकती। ३०२ दफ़ा के अनुसार फाँसी पर लटक कर मरने से तो यह अच्छा है कि अहिंसात्मक सत्याग्रही की तरह सकुटुम्ब वीर-गति को प्राप्त हो। वीर-गति से मरने वाले को स्वर्ग अवश्य मिलता है—यह सब जानते हैं। तो जनाब, घर का एक आदमी स्वर्ग को जायगा तो उसकी दुम में बँधे हुए उसके कुटुम्बी भी बिना टिकिट स्वर्ग में घुस ही जायँगे। भला बताइए तो यह श्रेष्ठ है या फाँसी के तख़्ते पर मरना और अपने कुटुम्ब को निस्सहाय रोता-बिलखता छोड़ जाना।

इस पर भी लोग उक्त वकील साहब को बेवक़ूफ़ समझते हैं। लोगों में दूरदर्शिता का माद्दा तो है ही नहीं। इसके अतिरिक्त ऐन मौक़े पर हरामज़ादी क़ानून की किताब धोखा दे गई। घर में टेलीफ़ोन भी नहीं था जो मैजिस्ट्रेट से पूछ लेते कि "हुज़ूर, मुसलमान मारे डाल रहे हैं, हुक्म हो तो एकाध बन्दूक़ मार दूँ, वरना आप पर से न्योछावर हो जाऊँ। मुझे मुसलमानों से इतना डर नहीं लगता, जितना कि फाँसी के तख़्ते से। बिना आपकी आज्ञा के बन्दूक़ चलाऊँगा तो आप बिना फाँसी दिए छोड़ेंगे नहीं।" अब वकील साहब को टेलीफ़ोन अवश्य लगवा लेना चाहिए और एक शीशे की अलमारी में क़ानून की किताब प्रत्येक समय खुली धरी रहे, जिसमें कि आवश्यकता पड़ने पर पृष्ठ उलटने की ज़रूरत न पड़े।

एक लाला साहब के यहाँ दो बन्दूक़ें थीं और द्वार पर दो गोरखे कुकड़ियाँ लिए पहरा दे रहे थे। जब मुसलमानों का आक्रमण हुआ तो गोरखों ने बन्दूक़ें माँगीं। परन्तु लाला साहब ने जो बन्दूक़ों की तरफ़ देखा तो बन्दूक़ों के पीछे उन्हें दफ़ा ३०२ तथा फाँसी के तख़्ते की झलक भी दिखाई पड़ गई। बस फिर क्या था, साफ़ इन्कार कर गए। बेचारे दोनों गोरखे कुछ देर तक कुकड़ी से लड़े, तत्पश्चात मारे गए। लाला साहब ने मुसलमानों को दो हज़ार रुपए देकर कुछ घण्टों की मोहलत माँगी तब प्राण बचे; और वह मकान तथा माल-असबाब छोड़ कर सकुटुम्ब अपनी प्राण सम प्यारी सुन्दर बन्दूक़ों सहित भाग निकले। उनका मकान फूँक दिया गया और असबाब लूट लिया गया। यद्यपि तहख़ाने में होने के कारण बारह बोरे सोना-चाँदी बच गया, जिसे वह शान्ति होने पर निकाल ले गए।

लाला साहब दशहरे पर बन्दूक़ों का पूजन करने तथा ब्याह-शादी में व्यवहार निभा देने के अतिरिक्त यह भी नहीं जानते, कि बन्दूक़ किस मरज़ की दवा है।

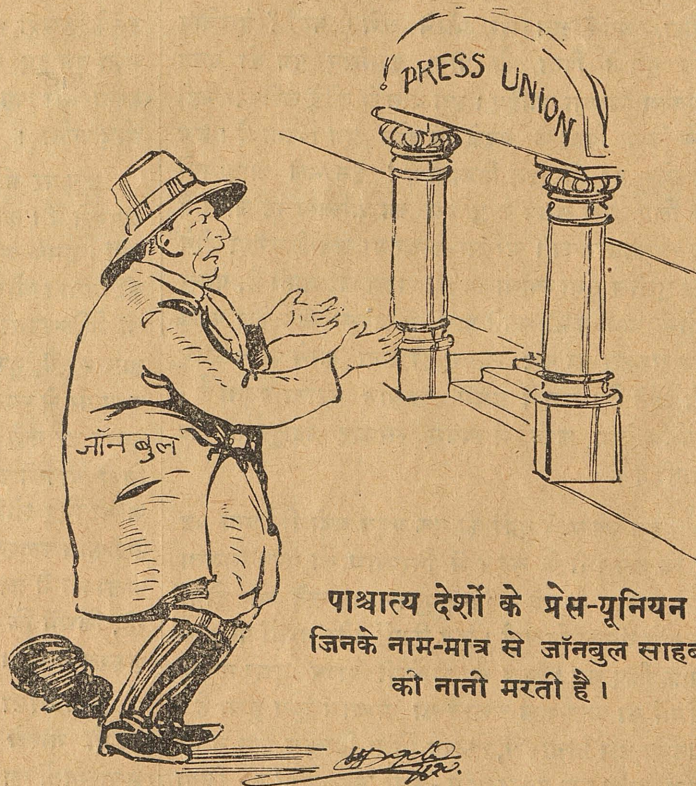
शान्ति स्थापित होने के पश्चात् एक दिन अफ़वाह उड़ी कि आज मुसलमान सङ्गठित होकर हमला करेंगे। एक सज्जन घबराए हुए दौड़े आए और बोले—"अब क्या होगा—कैसे प्राण बचेंगे ?" एक व्यक्ति पूछ बैठा—"आपके यहाँ कोई हथियार है ?" बोले—"हाँ, बन्दूक़ है।" प्रश्न किया गया कि "तब फिर इतनी घबराहट क्यों है ?" बोले—"बन्दूक़ तो है, पर बन्दूक़ चलाने



असङ्गठित भारतीय पत्रकार

जो समुचित सङ्गठन न होने के कारण अत्याचारों के शिकार हो रहे हैं।

वाला कोई नहीं है।" सब लोग हँस पड़े। अपने राम होते तो कह देते—"बाबू जी, बन्दूक़ बेचने वाले ने आपको ठग लिया। बन्दूक़ के साथ बन्दूक़ चलाने वाला मुफ़्त मिलता है, वह उसने आपको नहीं दिया।" तब एक सज्जन, जो बन्दूक़ का सदुपयोग जानते थे, उनके घर पर रात भर रहे। उन्होंने दूसरे दिन मित्रों से कहा—"ऐसे लोगों को तो लाइसेन्स दिया ही नहीं जाना चाहिए।" एक पोस्ट ऑफ़िस के एक कर्मचारी उस समय, जबकि दङ्गा पूर्णरूपेण जारी था, इस भय से पोस्ट ऑफ़िस चले, कि ग़ैर-हाज़िरी होने से कहीं डिसमिस न कर दिए जायँ—यद्यपि दङ्गे के कारण उस दिन पोस्ट ऑफ़िस बन्द था। हाथ में बन्दूक़ लिए हुए मुसलमानों की भीड़ के पास पहुँच कर बोले—"मुझसे कोई बोला तो बन्दूक़ मार दूँगा।" मुसलमानों ने बन्दूक़ देख कर कहा—"बाबू जी को जाने दो।" जब बाबू जी बन्दूक़ लिए हुए भीड़ में पहुँचे तो तड़ातड़ ऊपर लाठियाँ बरस पड़ीं, बाबू साहब की लाश अलग गिरी और बन्दूक़ अलग। मुसलमान लाश को वहीं छोड़, बन्दूक़ लेकर चम्पत हो गए। एक महोदय पिस्तौल हाथ में लिए पिट कर चले आए—जान बच गई, इतनी ख़ैर हुई। जान पर नौबत पहुँच गई, परन्तु न तो पिस्तौल हाथ से छूटा और न पिस्तौल से गोली। मित्रों के बीच में आए तो पिस्तौल हिला-हिला कर अपनी मुसीबत का वर्णन करने लगे। एक महोदय मुस्कुरा कर बोले—"बाबू जी, पिस्तौल जेब में रख लीजिए, कहीं कोई छीन न ले।" सम्पादक जी, कहाँ तक लिखूँ, ऐसी न जाने कितनी घटनाएँ हुईं।



पाश्चात्य देशों के प्रेस-यूनियन

जिनके नाम-मात्र से जॉनबुल साहब की नानी मरती है।

साथ ही यह भी हुआ कि चार-छः हिन्दुओं ने केवल लाठी और ईंटों की मार से पचासों मुसलमानों को भगा दिया। कुछ मुसलमानों ने भी बड़ी वीरता दिखाई, अपनी स्त्री-बच्चों को निस्सहाय छोड़, केवल अपने प्राण लेकर भाग निकले। इसीसे अपने राम का यह कहना है कि यह दङ्गा ईश्वर की लीला थी। लोगों में अब तक इतना भय समाया हुआ है कि साधारण सी बात में भगदड़ मच जाती है। १० अप्रैल की रात को सड़क पर दो साँड़ लड़ पड़े, पुलिस वालों ने उन्हें भगाने के लिए हल्ला मचाया। उस हल्ले को सुन कर शहर भर के लोग, जो अपनी-अपनी छतों पर पड़े थे, चिल्लाने लगे। इस चिल्लाहट को सुन कर एक धनाढ्य परिवार के सज्जन यह समझ कर, कि फिर दङ्गा हो गया, इतनी घबराहट के साथ उठे कि तीन खण्ड की छत से नीचे आ गिरे। दूसरे दिन अस्पताल में उनका देहान्त हो गया। २५ अप्रैल की शाम को अपने राम चौक में एक मित्र की दूकान पर बैठे हुए थे। सहसा भगदड़ मच गई। लोग बेतहाशा भागने लगे और दूकानें बन्द होने लगीं। कुछ लोगों ने पूछा—"क्या बात है, क्यों भाग रहे हो ?" तो कोई उत्तर नहीं देता, भागे चले जा रहे हैं। एक-दो ने उत्तर भी दिया तो बोले—"पता नहीं क्या बात है !" पता नहीं, परन्तु फिर भी भागे चले जा रहे हैं। दो-तीन मुसलमान भय के मारे नालियों में गिर गए। आख़िर कुछ आदमी आगे बढ़े, पता लगाया तो मालूम हुआ कि मेस्टन रोड पर एक बाइसिकिल-सवार गिर पड़ा, उधर से एक बारात आ रही थी—बारात के कुछ आदमी उसे उठाने दौड़े—बस इतनी सी बात में भगदड़ मच गई। अपने राम तो यह दशा देख कर स्तम्भित रह गए। कानपुर का इतना पतन हो गया ! जिस कानपुर में लोग किसी भी समय किसी भी मुहल्ले में बेधड़क चले जाते थे, उसी कानपुर में इस समय इतना आतङ्क है, कि लोग घर के बाहर निकलते हुए डरते हैं। पता नहीं, पूर्वावस्था आने में कितने दिन लगेंगे।

पता नहीं, हिन्दू-मुसलमानों का यह वैमनस्य कब दूर होगा। उस दिन एक महोदय ने कहा कि "जनाब, यह वैमनस्य कभी दूर नहीं हो सकता।" उनसे पूछा गया—"क्यों ?" बोले—"दोनों की प्रत्येक बात एक-दूसरे के विरुद्ध पड़ती है।" फिर सवाल किया गया—"उदाहरण दीजिए !" कहने लगे—"ज़रा ग़ौर कीजिएगा !" मैंने कहा—"मैं ज़रा नहीं, बहुत ग़ौर कर रहा हूँ, आप कह चलिए।" बोले—"देखिए, मुसलमान पाजामा पहनते हैं और हिन्दू धोती।"

मैंने कहा—वाक़ई, धोती-पाजामे में सदैव भिड़न्त होती रहती है, अतएव इनके पहनने वालों का भी लड़ते रहना स्वाभाविक ही है।

वह बोले—और सुनिए। हिन्दू चोटी रखते हैं और मुसलमान दाढ़ी।

मैं बोला—यह भी बड़ी ज़बर्दस्त दलील है। बड़ी ख़ैरियत हुई कि हिन्दुस्तान चीन में नहीं है, वरना रात-दिन जूता चलता रहता। चीनियों की चोटियाँ बहुत लम्बी होती हैं।

वह—हिन्दू रोज़ नहाते हैं, मुसलमान रोज़ नहीं नहाते।

मैं—ख़ूब ! यह भी पक्की बात है। आगे चलिए।

वह—नहाते समय हिन्दू पहले पैर धोते हैं, परन्तु मुसलमान हाथ धोते हैं।

मैं—बेशक, ये सब बातें लड़ाई की जड़ हैं।

वह—ऐसी दशा में बताइए मेल कैसे हो सकता है?

मैंने कहा—यह न कहिए, हो सब कुछ सकता है। संसार में असम्भव कुछ भी नहीं है।

वह—कैसे हो सकता है, बताइए ?

मैं—देखिए, न हिन्दू धोती पहनें न मुसलमान पाजामा, बल्कि घाघरा पलटन (हाईलैण्डर्स) की तरह दोनों घघरिया पहनें। न हिन्दू चोटी रक्खें, न मुसलमान दाढ़ी। सप्ताह अथवा महीने में एक दिन ऐसा नियुक्त कर लिया जाय जिस दिन हिन्दू-मुसलमान दोनों नहाया करें, वैसे कोई न नहाय। नहाते समय न हिन्दू पैर धोवें न मुसलमान हाथ—इन दोनों अवयवों को पानी से बिल्कुल अलग रक्खा जाय। कहिए जनाब, तब तो मेल हो जायगा ?

वह महोदय नाराज़ होकर बोले—आप युक्ति बताते हैं या मज़ाक़ करते हैं ?

मैंने कहा—दोनों काम करता हूँ, आप न समझें तो क्या कहूँ।

सम्पादक जो, क्या आप कोई ऐसी युक्ति बता सकते हैं, जिससे कि हिन्दू-मुसलमानों का यह चिर-वैमनस्य दूर हो सके ?

भवदीय,

विजयानन्द (दुबे जो)

* * *

मध्य यूरोप की समस्याएँ

(२०वें पृष्ठ का शेषांश)

सरकार ने एक ऐसी योजना की है, जिससे हड़ताल आदि का कोई मौक़ा ही नहीं आ सकेगा। इस योजना के अनुसार लाभ का ६० प्रतिशत रेलवे के मज़दूर कर्मचारियों में विभक्त कर दिया जावेगा और शेष सरकार लेगी। ज़ेकोस्लोवेकिया की भाँति युगोस्लोवेकिया की जनता में भी कई जातियाँ सम्मिलित हैं, जिनमें मुख्य हैं सर्व्रक्रोट और स्लोवन। महासमर के बाद इन जातियों में कई बार पारस्परिक कलह हो चुका है, परन्तु गत एक वर्ष से सब मेलपूर्वक रहने लगी हैं। फिर भी क्रोट लोग अभी पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं हुए हैं। इसका कारण यह है कि इनको इटली प्रायः उकसाया करता है। गत फ़रवरी में क्रोट लोगों ने सरकार के विरुद्ध कई जुलूस निकाले और चार स्थानों पर बम फटे।

'भविष्य' के पूर्व-अङ्क में बतलाया जा चुका है कि फ़्रान्स और इटली में घोर पारस्परिक अविश्वास है। जब तीन महान शक्तियों में (ग्रेटब्रिटेन, अमेरिका और जापान) जल-सेना-निरोध के सम्बन्ध में समझौता हुआ था तो आशा की गई थी कि फ़्रान्स और इटली में भी ऐसा समझौता हो जावेगा। इस विषय में बातचीत आरम्भ की गई थी और अङ्गरेज़ परराष्ट्र-मन्त्री ने पेरिस तथा रोम का, इस विषय में दोनों राष्ट्रों को उचित अन्तराष्ट्रीय सलाह देने की ग़रज़ से दौरा भी किया था, पर गत फ़रवरी में यह प्रकट हो गया था कि समझौता नहीं हो सकता और दोनों राष्ट्र पुनः पूर्ववत् धड़ाधड़ सैनिक, जलयान और अन्य शस्त्रास्त्र बनवाने लग गए थे। परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि बातचीत फिर भी जारी रक्खी गई और अङ्गरेज़ी परराष्ट्र-मन्त्री श्रीयुत हेण्डरसन ने इस मामले में विशेष दिलचस्पी के साथ काम किया। अब १ अप्रैल का समाचार है कि फ़्रान्स और इटली में जल-सेना-निरोध के सम्बन्ध में कुछ समझौता अवश्य हो गया है। इङ्गलैण्ड के कुछ पत्रों का तो कहना है कि यह समझौता वास्तव में दो राष्ट्रों का समझौता नहीं है, किन्तु दोनों ओर के परराष्ट्र-मन्त्रि-मण्डल के सदस्यों की एक-दूसरे के प्रति चिकनी-चुपड़ी बातें हैं। इस बात को भ्रान्तिमूलक बतलाने के लिए श्रीयुत एलेक्ज़ेण्डर ने, जो स्वयं श्री० हेण्डरसन के साथ थे, हल नगर में व्याख्यान देते हुए कहा है कि, "यह समझौता अफ़सरों का समझौता नहीं, बल्कि दोनों राष्ट्रों का समझौता है। हमें कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिए, जिससे इसको क्षति पहुँचे और किए-कराए काम पर पानी फिर जावे। हमको आशा है कि यह अस्थायी समझौता शीघ्र ही आगामी फ़रवरी को होने वाली राष्ट्रसङ्घ की बैठक में स्थायी सन्धि के रूप में परिणत हो सकेगा।"

ऐसा जान पड़ता है कि फ़्रान्स के पूर्व मन्त्री श्री० स्टीड, जिनके मन्त्रि-मण्डल को केवल छः सप्ताह के बाद ही त्याग-पत्र देना पड़ा, इटली के साथ समझौता करने के विरुद्ध थे। वर्तमान मन्त्री श्री० लावल की नेक सलाह से यह समझौता हुआ है, यह अनुमान युक्तियुक्त विदित होता है। फिर भी अभी फ़रवरी बहुत दूर है। इस अर्से में क्या होगा, किसको मालूम?

इटली में इस समय मुसोलिनी का अखण्ड राज्य है। उसने सम्राट को नेपाल के राजा की भाँति एक कोने में धर रक्खा है। मुसोलिनी की देशभक्ति, कार्यशक्ति, धी और मति सब अद्भुत हैं, परन्तु लोक-स्वातन्त्र्य का वह कम क़ायल है। उसके विरोधी निर्भीकतापूर्वक अपने विचार प्रकट करने में स्वतन्त्रता का उपयोग नहीं कर सकते। फ़ैसिस्टवाद का गुण-गान करो तब तक तो स्वतन्त्रता है, उससे इधर-उधर डिगे तो राज-विद्रोह। फ़ैसिस्ट-शासन इस बात में चीन के वर्तमान शासन से बहुत मिलता-जुलता है। ऐसी दशा में जो लोग शासन में सुधार या परिवर्तन चाहते हैं, उनको अपने विचारों का गुप्त प्रचार करना पड़ता है। अभी थोड़े दिन हुए, जब आठ विद्वान व्यक्तियों पर सैनिक न्यायालय के सामने इस बात पर अभियोग चलाया गया था कि उन्होंने गुप्त साहित्य के प्रचार द्वारा बलवा करवाने तथा शासन को उलट देने का प्रयत्न किया है। अभियुक्तों में एक वकील, एक प्रोफ़ेसर, एक सम्बाददाता, एक प्रसिद्ध गल्प-लेखक और एक प्रसिद्ध विदुषी उपन्यास-लेखिका थीं। इनमें से तीन को रिहा कर दिया गया और शेष को ३ साल से १५ साल तक के कारावास का दण्ड दिया गया है। मुसोलिनी है तो निरङ्कुश शासक, परन्तु उसने इटली के मस्तक को अन्तर्राष्ट्रीय जगत में ख़ूब ऊँचा किया है। गत जनवरी में संयुक्त राज्य अमेरिका के एक सैनिक अफ़सर मेजर जनरल स्मडले डी बटलर ने यह समाचार प्रकाशित कर दिया था कि एक समय वह मुसोलिनी के साथ इटली में घूम रहा था तो एक लड़की मोटर से कुचल कर मर गई। मुसोलिनी ने मोटर तो ठहराई नहीं, बल्कि यह कहा कि प्रधान-मन्त्री की सैर में यदि एक जान चली भी गई तो कौन बड़ी बात है। जब यह समाचार अमेरिका में फैला तो मुसोलिनी ने अमेरिका सरकार से ज़ोर के साथ इस विषय में जवाब तलब किया, तो अमेरिकन सरकार ने तत्काल स्पष्ट क्षमा-याचना कर ली और मेजर जनरल बटलर पर अभियोग चलाया।

* * *

सेवा-सूत्र*

[अनुवादक—श्री० भक्तदर्शन]

ग़रीबों की सेवा परमात्मा की उपासना है। अपनी भक्ति को जीर्ण-शीर्ण लोगों की सेवा में प्रतिबिम्बित करो।

चिल्लाहट और दिखावट से दूर रहो। निस्स्वार्थ सेवा के छोटे-मोटे कामों से प्रसन्नता प्राप्त करो।

सब प्राणियों के लिए सहानुभूति रक्खो।

सेवा के द्वारा आत्मशुद्धि करो।

दरिद्र नारायण की सेवा करो। तुम्हें तुम्हारा इच्छित पुरस्कार—प्रेम के प्रभु का साक्षात्कार—प्राप्त होगा।

आदर्श के सच्चे सेवकों के बिना कोई भी नगर मरु-भूमि तुल्य है।

सेवा-शक्ति का रहस्य त्याग है।

भावी धर्म सेवा और त्याग का धर्म होगा।

बिना कष्ट उठाए सहानुभूति पैदा नहीं हो सकती। सेवा का अर्थ है औरों के कष्टों को दूर करने के लिए उद्यत होना।

यदि तुम वास्तव में सेवा करना चाहते हो, तो जो कुछ तुम आज कर सकते हो उसे कल पर मत छोड़ो।

परमेश्वर का एक अस्त्र (Instrument) बन जाओ—तुम्हारे अन्दर से एक शक्ति उत्पन्न होगी जो लोगों की सहायता करेगी। प्रभु के चरण-कमलों की सर्वोत्तम भेंट स्वयं अपने आपको चढ़ा देना है। 'समर्पित' जीवन महान शक्तियों का केन्द्र हुआ करता है।

सेवा का पुरस्कार है और अधिक सेवा करने की शक्ति।

सेवा की यह एक कसौटी है—क्या तुम्हारा हृदय शुद्ध होता जा रहा है? क्या तुम उस 'स्वर्गीय केन्द्र' (Divine Centre) के समीप आते जा रहे हो?

यदि तुम एक सच्चा सेवक बनना चाहते हो, तो भाग्य-विधाता परमात्मा पर विश्वास रक्खो।

यदि तुम सेवा के पथ पर अग्रसर होना चाहते हो, तो उन्हें आशीर्वाद दो जो तुम्हें सताते हैं।

शान्ति की भावना में आगे बढ़ो; और इस अभिलाषा को प्रकट करो कि क्या कभी मैं उस 'अदृश्य' (The unknown) का एक शान्त अज्ञात सेवक बन सकूँगा?

उच्च गिरि-शृङ्गों पर मत चढ़ो, वरञ्च ग़रीबों की झोपड़ियों में घुसो और प्रेम-देव की अभ्यर्थना के लिए उनसे एकात्मता प्राप्त करो।

'भाई' का अर्थ है भार-वाहक—यदि तुम सेवा के इच्छुक हो, तो दूसरों का भार हटाओ।

जिसने आत्म-दमन करना नहीं सीखा, उसे सेवा करना नहीं आया।

कठिनाइयों से मत घबड़ाओ। विश्वास रक्खो कि यदि तुम्हारा हृदय पवित्र है तो पृथ्वी, आकाश तथा सब देवगण तुम्हारे सहायक होंगे।

धन्य हैं वे, जो ग़रीबों के आँसू पोंछते हैं तथा ग़रीबों के कष्टों में श्रीकृष्ण की आवाज़, मनुष्यता के उस चिरन्तन प्रेमी की आवाज़ सुनते हैं।

* साधु श्री० टी० एल० वास्वानी की नव-प्रकाशित 'आँसू' (Tears) नामक पुस्तिका से।

* * *

भावी भारतीय स्वराज्य की व्याख्या और उसका परिणाम

[श्री० भोलालाल दास जी, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]



यों तो कराची कॉङ्ग्रेस कई बातों के लिए विशेषता रखती है, किन्तु उसकी सब से बड़ी विशेषता स्वराज्य की व्याख्या है। जिस स्वराज्य के लिए आज भारत के नर-नारी और बूढ़े-बच्चे, सभी लालायित हो रहे हैं तथा जिसके लिए आज दस-ग्यारह वर्षों से इतना ज़बरदस्त और सर्व-व्यापी आन्दोलन हो रहा है, उसके वास्तविक रूप को अब तक कोई नहीं जान सका था। संक्षेप में स्वराज्य का अर्थ 'Government of the people by the people for the people' अर्थात् "जनता के लिए, जनता द्वारा, जनता का राज्य" समझा जाता था। किन्तु इस मोटे अर्थ का बोध तो छोटे से "स्वराज्य" शब्द से भी हो जाता था। परन्तु स्वराज्य का वास्तविक स्वरूप क्या होगा, इसको कोई भी नहीं जानता था। इसलिए सभी अपने-अपने मत के अनुसार इसका अर्थ लगाया करते थे। ऐसी स्थिति में कराची कॉङ्ग्रेस ने इस व्याख्या के द्वारा जनता को अपना ध्येय स्थिर करने में बड़ी मदद दी है। यद्यपि यह व्याख्या भी पूर्ण और अन्तिम नहीं है, फिर भी इसमें स्वराज्य का भावी खाक़ा अच्छी तरह खिंच गया है।

कई गोरे पत्रों और राजनीतिज्ञों ने इस व्याख्या को रूसी सोशलिज़्म की नक़ल बतलाया है, किन्तु यह उनकी भूल है। क्योंकि स्वतन्त्रता की असलियत प्रत्येक देश और समय के लिए एक ही रहती है, इस हिसाब से सोशलिज़्म के सिद्धान्तों का भी इसमें समाविष्ट होना अस्वाभाविक नहीं है, किन्तु इसी कारण उसे सोशलिज़्म नहीं कहा जा सकता। यद्यपि सोशलिस्ट सरकार में स्वतन्त्रता की आजकल पराकाष्ठा देखी जाती है। हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल जी नेहरू, जिनका हाथ इस व्याख्या में सर्वोपरि है, सोशलिस्ट विचारों के पूर्ण समर्थक हैं, तथापि हमें इस व्याख्या में सोशलिज़्म की गन्ध भी नहीं मिलती है। वरन् हमें तो इसके प्रतिकूल, इसमें प्रमुख बातों का निरूपण सोशलिज़्म सिद्धान्तों के विरुद्ध ही नज़र आता है। हम न तो इसमें पूँजीपतियों का विरोध पाते हैं और न ज़मींदारों के विनाश का प्रयत्न। हमें न तो इसमें धर्म का ह्रास दिखाई पड़ता है और न समाज का काया-पलट ही नज़र आता है। ऐसी स्थिति में इसे सोशलिस्ट का अनुकरण बतलाना अर्थ का अनर्थ करना और पक्षपात है। यह उन्हीं लोगों की स्वार्थमयी व्याख्या है, जिनके लिए स्वतन्त्रता का थोड़ा आन्दोलन भी साम्राज्य नष्ट होने के बराबर भयानक है। हम तो यही कहने के लिए बाध्य हैं कि भारतीय नेताओं ने अपनी निजी परिस्थिति के अनुकूल अपना मार्ग स्वतन्त्र रीति से ढूँढ़ निकाला है। वे केवल अपने देश, काल और पात्र के विचार से ही इस व्याख्या पर उपनीत हुए हैं। इस व्याख्या से जहाँ हमारे विरोधियों की तिल्ली चमकेगी, वहाँ इसके उपासकों की अनेक दुर्भावनाएँ भी नष्ट होकर आन्दोलन में ख़ासा ज़ोर पहुँचेगा।

बाहरी दुनिया को इससे हमारे दृढ़ सङ्कल्प का पता अवश्य लगेगा और यह कुछ कम लाभ की बात नहीं है। बहुत दिनों तक हमारे भाग्य-विधाताओं ने संसार में इस बात का डङ्का पीट रक्खा था कि भारत-वासी अपनी विविध अनेकताओं के कारण कोई सम्मिलित माँग उपस्थित ही नहीं कर सकते। किन्तु नेहरू-रिपोर्ट ने उसका मुँहतोड़ उत्तर देकर संसार को बतला दिया था कि भारतवर्ष में न तो राजनीतिज्ञों का अभाव है और न एकता का ही। फिर भी उसका मसविदा अधिक से अधिक औपनिवेशिक स्वराज्य के उद्देश्य से ही लिखा गया था और उसमें ब्रिटिश सम्बन्ध को अनुच्छेद्य मान कर ही कुल बातों का समावेश किया गया था, जिसके कारण हम अन्यान्य राष्ट्रों के समकक्ष होने की योग्यता नहीं रखते थे और न उनकी सहानुभूति के योग्य ही हो सकते थे। क्योंकि वह एक प्रकार से 'मियाँ-बीबी' के झगड़े का फ़ैसला था, जिसमें दूसरा कोई राष्ट्र दख़ल नहीं दे सकता था। किन्तु जब सरकार ने नेहरू रिपोर्ट की माँगें पूरी नहीं कीं और लाहौर कॉङ्ग्रेस ने स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी तो हमारी यथार्थ स्थिति समस्त संसार के समक्ष आई और अब वह इङ्गलैण्ड का धराऊ नहीं रहा। ऐसी स्थिति में हमारे लिए अनिवार्य था कि हम अपने ध्येय को संसार के समक्ष और भी प्रत्यक्ष रूप से रक्खें। इस दृष्टि से कराची कॉङ्ग्रेस ने इस विषय में आशातीत सफलता प्राप्त की है। अब दुनियाँ आँखें खोल कर देख सकती है कि भारत की ३५ करोड़ जनता किस प्रकार की स्वतन्त्रता चाहती है और इङ्गलैण्ड के साथ जो उसका अहिंसात्मक युद्ध चल रहा है, उसका उद्देश्य क्या है। संसार की पञ्चमांश जनता का हिताहित अब संसार के सभी देश भली-भाँति सोच सकते हैं। कोई भी विरोधी विज्ञापनबाज़ी अब इस स्पष्ट व्याख्या के आगे नहीं टिक सकती है।

इस बाहरी उपकार के अलावा देश का जो भीतरी उपकार इससे हुआ है, वह तो और भी अच्छा है। न मालूम कितनी मिथ्या धारणाएँ इस अभागे और मूर्ख देश में स्वराज्य के विरुद्ध फैली हुई हैं। सब से बड़ी आपत्ति तो उन मुसलमानों की है, जो अपने को पहले मुसलमान और पीछे हिन्दुस्तानी ख़्याल करते हैं। यदि मुसलमानों में पहिले हिन्दुस्तानी और पीछे मुसलमान होने का भाव उत्पन्न हो जाय, जैसा कि हिन्दुओं में पहले हिन्दुस्तानी और पीछे हिन्दू होने का भाव है, तो यह आपत्ति स्वयं मिट जायगी। आज जो मुसलमान राष्ट्रीय विचार के हैं, उनकी बुद्धि में ऐसी कोई आपत्ति नहीं है, तो भी साम्प्रदायिक मुसलमान नेताओं का समुदाय दुर्भाग्यवश, इस दुर्भावना में पड़ा हुआ है कि स्वराज्य होने से मुसलमानों की स्थिति शोचनीय हो जायगी—उनके धर्म, सभ्यता और भाषा का नाश हो जायगा, इत्यादि। इस विचार से उनका सिद्धान्त यह है कि पहले हिन्दू-मुसलमानों में समझौता हो ले, पीछे कोई स्वराज्य स्थापित हो। राष्ट्रीय विचारों के मुसलमानों और साम्प्रदायिक विचार के मुसलमानों में इस समझौते के सम्बन्ध में गहरा मतभेद है। हम स्पष्ट स्वीकार करते हैं कि साम्प्रदायिक विचार वाले मुसलमानों का सन्तोष इस व्याख्या से तो क्या, किसी भी उपाय से नहीं हो सकता है। उनके सन्तोष का उपाय केवल यही है कि चाहे जैसे हो, मुसलमानों को कुल अधिकार दे दिया जाय, किन्तु इतना अवश्य है कि कराची कॉङ्ग्रेस की इस व्याख्या से राष्ट्रीय विचार के मुसलमानों को पूर्ण सन्तोष हुआ है। क्योंकि इसमें न केवल मुसलमानी धर्म, सभ्यता, भाषा और आचार-विचार की पूर्ण रक्षा की गई है, प्रत्युत सभी अल्प-संख्यक समाजों की वैयक्तिकता स्थिर रक्खी गई है। यद्यपि कॉङ्ग्रेस इससे पहले से भी मुसलमानों की सभ्यता आदि को अक्षुण्ण रखने की प्रतिज्ञा कर चुकी है, और नेहरू-रिपोर्ट में भी उसका पूर्ण विधान किया गया है, तथापि इस व्याख्या से यह स्पष्ट हो गया है, कि किसी भी दशा में इनकी अवहेलना नहीं हो सकती। सच पूछिए तो अब साम्प्रदायिक नेताओं को भी आपत्ति करने का कोई स्थान नहीं रहा। अब वे समझें या न समझें, परन्तु कॉङ्ग्रेस ने अपने कर्त्तव्य का पालन कर दिया है, और उसीके परिणाम-स्वरूप आज राष्ट्रीय विचार के मुसलमान नेता कॉङ्ग्रेस का साथ दे रहे हैं तथा साम्प्रदायिक समुदाय से अपना मतभेद प्रगट करते हुए सम्मिलित निर्वाचन का समर्थन कर रहे हैं।

दूसरी महान आपत्ति उन हिन्दू हठधर्मियों की थी, जो स्वराज्य की स्थापना से अपने धर्म की हानि समझते थे। उनका ख़्याल था कि स्वराज्य होने से जात-पाँत, धर्म और आचार सब एक हो जायँगे। यद्यपि

आकांक्षा

[श्री० देवीप्रसाद (कुसुमाकर) बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

निर्दयता करती प्रहार हो,
निर्भय होकर दीनों पर।
दर्प चढ़ा हो धाक जमाने,
फ़ौलादी सङ्गीनों पर।
दीन निहत्ये लोगों पर भी,
गोले जहाँ बरसते हों।
अपने स्वत्व जहाँ पाने को,
व्याकुल लोग तरसते हों।
प्रकृति-धनी हो देश किन्तु वह,
तरस रहा हो दानों को।
सहना हो दिन-रात दम्भ के,
घृणायुक्त अपमानों को।
स्वावलम्ब की भक्ति जहाँ हो,
इज़्ज़त की लेने वाली।
मातृ-भूमि की सेवा होवे,
जहाँ जेल देने वाली।
निर्भय चैन जहाँ करना हो,
मूर्तिमान होकर दूषण।
जहाँ स्वाभिमानी लोगों की,
हथकड़ियाँ होवें भूषण।
आत्म-शक्ति देकर प्रभु! मुझको,
उसी देश में उपजाना।
देश-भक्ति का बाना तुम हो,
अपने हाथों पहनाना॥

* * *

राष्ट्र की उन्नति के लिए यह बात आवश्यक है, तथापि कराची कॉङ्ग्रेस ने ऐसी कोई व्याख्या नहीं की है जिससे यह समझा जावे कि स्वराज्य की स्थापना से जात-पाँत या धर्म आदि के नाश का कोई सम्बन्ध हो। यह तो संसार का नियम है कि पुरानी चीज़ें बेकार होकर अपने आप ही मिट जाती हैं तथा अपने भग्नावशेष से नवीन और लाभदायी वस्तुओं को उत्पन्न करती हैं। आज वर्तमान सनातनधर्म की भी वही दशा है। इस रूप में अब वह किसी प्रकार नहीं टिक सकता। समय उसको स्वयं परिवर्तित कर देगा और जो धर्म शुद्ध तथा सनातन है, वह स्वयं क़ायम हो जायगा। यह निश्चय है कि सनातनधर्म की असलियत को कोई नहीं मिटा सकता। किन्तु समय-समय पर उसमें जो बहुत से अतात्विक और बेकार ढोंग पैदा होते रहते हैं, उनका समय ख़ुद नाश करके धर्म को पूर्व स्थिति पर लाता रहता है। इसलिए कराची-कॉङ्ग्रेस ने राष्ट्र को धर्म से निष्पक्ष रख कर बहुत अच्छा काम किया है। उसने प्रत्येक नागरिक को धर्मादि के विषय में पूरी वैयक्तिक और सामाजिक स्वतन्त्रता दी है तथा यह निश्चय किया है कि स्वराज्य सरकार किसी भी धर्म की पक्षपातिनी नहीं होगी। सनातनधर्म के हिमायतियों को यह भय था कि स्वराज्य होने से वर्णव्यवस्था नष्ट हो जायगी तथा रूस के समान-धर्म को देश-निकाला दिया जायगा। परन्तु अब इस शङ्का का कोई स्थान नहीं है। प्रत्येक हिन्दू या मुसलमान, सिक्ख या क्रिस्तान अपने-अपने धर्म का पालन करने या न करने में स्वतन्त्र है। जात-पाँत के ढकोसलों को ही सनातनधर्म मानने वाले व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक इसकी जड़ को और भी मज़बूत बना सकते हैं। राष्ट्र उन्हें बाधा नहीं देगा। किन्तु विश्वास ऐसा किया जाता है, कि लोकमत इन्हें स्वयं नष्ट कर देगा। ख़ैर, कुछ भी हो, अब किसी को धर्म-नाश करने का कलङ्क राष्ट्र के मत्थे मढ़ने की गुञ्जाइश नहीं रही।

दूसरी बड़ी आपत्ति देश के अन्दर ज़मींदारों और पूँजीपतियों की थी। उनको भी भय था कि भावी स्वराज्य गवर्नमेण्ट में हमारी सत्ता का नाश हो जायगा, परन्तु इस व्याख्या ने इनकी शङ्काओं को भी निर्मूल कर दिया है। स्वराज्य सरकार न तो ज़मींदारों की ज़मींदारी छीनेगी और न पूँजीपतियों के कल-कारख़ानों को ही राष्ट्रीय बना लेगी। हाँ, कृषक और कर्मियों के हितार्थ वह जहाँ मालगुज़ारी का दर घटा देगी वहाँ कारख़ानों में काम करने वाले कर्मियों को पूरा वेतन तथा आराम दिलाने की व्यवस्था करेगी। इस विधान से एक ओर जहाँ भारतवर्ष के विशाल कृषक-समुदाय को अपार आनन्द हुआ वहाँ सभी श्रमजीवियों के स्वत्व-रक्षा का प्रयास भी, सफल हुआ। अलबत्ता उपज के ऊपर कृषकों से एक प्रकार के कर को उगाहने का प्रस्ताव किया गया है, किन्तु इसमें कृषकों के भयभीत होने की कोई बात नहीं है। क्योंकि उनको आज अगणित अप्रत्यक्ष करों का भार वहन करना मुश्किल हो रहा है—यदि उनमें कमी की जावे—जैसा कि कॉङ्ग्रेस का निश्चय है, और सरकार अपना ख़र्च कम करके प्रजा को उनसे युक्त कर दे तो यह प्रत्यक्ष कर प्रजा के लिए महान लाभदायी होगा। दूसरी बात यह है कि साथ ही साथ मालगुज़ारी और लगान भी कम करने की व्यवस्था की गई है। अतः कुल मिला कर प्रजा को भारी लाभ है। वस्तुतः नेताओं ने इस बात का पूर्ण विचार रक्खा है कि भावी स्वराज्य से साधारण प्रजा का ही विशेष उपकार हो और वह वस्तुतः जनता का स्वराज्य कहा जा सके। हम इस व्याख्या में उसकी पूर्ण व्यवस्था देखते हैं।

इस प्रकार इस व्याख्या ने लगभग सभी आपत्तियों का उत्तर दिया है। किन्तु अब अछूतों की ओर से यह आपत्ति की जा सकती है कि जब कॉङ्ग्रेस ने जात-पाँत के बखेड़ों को यों ही छोड़ दिया है, तब तो हम लोगों की सामाजिक स्थिति ज्यों की त्यों ही गिरी रहेगी। किन्तु यह आपत्ति भी क्षणिक है। क्योंकि इस व्याख्या ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य कर दी जावेगी और सरकारी स्कूल, कुएँ, सड़कें नौकरियों आदि का मार्ग सब के लिए एक-सा खुला रहेगा। किसी व्यक्ति के जात-पाँत या धर्म के कारण उसकी योग्यता में कोई फ़र्क़ नहीं आने पावेगा, सब को अपनी उन्नति करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होगा और यदि उनमें स्पृहा होगी तो हर्गिज़ वे गिरे हुए नहीं रहेंगे। दूसरी बात यह है कि देश जैसे-जैसे अपने उद्योग-धन्धों की वृद्धि करता जायगा, वैसे ही वैसे श्रमजीवियों की स्थिति भी अच्छी होती जायगी और उनके साथ-साथ अछूतों की भी उन्नति होती जायगी। इसके सिवा लोकमत इन ढकोसलों के विरुद्ध जैसे-जैसे दृढ़ होता जायगा वैसे-वैसे अछूतपन का भेदभाव भी नष्ट होता ही जायगा और इस शङ्का का कोई स्थान नहीं रहेगा!

एक और बड़ा बखेड़ा जो इस व्याख्या ने तय किया है वह यह है, कि भारतीय स्त्रियों को पुरुषों के साथ वह लड़ाई लड़ने की ज़रूरत नहीं रही, जिसके लिए इङ्गलैण्ड आदि देशों की स्त्रियों को वर्षों परेशानी उठानी पड़ी थी। इसने स्पष्ट रूप से बतलाया है कि सरकारी नौकरी या वोट आदि में स्त्री-पुरुष का भेद नहीं रक्खा जायगा। मताधिकार का प्रश्न भारतीय नेताओं ने पहले से ही स्त्रियों के पक्ष में स्थिर किया था, किन्तु यह उनकी उदारता और भावी हानि-लाभ के विचारों पर निर्भर था। गत आन्दोलन में भारतीय ललनाओं ने इसका पूर्ण मूल्य चुका दिया है, अतः अब वे इसकी यथार्थ अधिकारिणी भी हैं। थोड़ी सी सङ्कीर्णता बड़ा-बड़ा दुष्परिणाम कालान्तर में उपस्थित कर देती है और यदि भारतीय पुरुष-समाज स्त्रियों के इस उचित अधिकार को इस समय स्वीकार नहीं करता तो कौन जानता था यहाँ भी कुछ दिनों में रूस और अमेरिका का दृश्य उपस्थित होता। दुर्भाग्यवश स्त्री-समाज में बहुतों की यह धारणा है कि उन देशों की स्त्रियाँ सर्वथा अच्छी दशा में हैं, किन्तु हमारे समाज का सङ्गठन और विशेषतः हमारे घरों का दायित्व जिस ढङ्ग से निर्मित हुआ है, वह हमारी सभ्यता का ख़ासा परिणाम है। उसको बिल्कुल उलट देना अपने अस्तित्व को खो देना होगा। अतः उसकी त्रुटि मात्र की पूर्त्ति कर देना मानो सोने में सुगन्ध भर देना है।

यह तो हुआ देश के बाहरी और भीतरी प्रभावों का संक्षिप्त चित्र, किन्तु इस व्याख्या से देश की मौजूदा सरकार पर भो काफ़ी प्रभाव पड़ा है। लाहौर-कॉङ्ग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास किया है, जिसका अर्थ साम्राज्य से बाहर जाने का भी है। सरकार को अब पूर्ण अवसर है कि वह भारत को इस प्रकार का स्वराज्य देकर साम्राज्य के अन्दर रक्खे या उसकी माँग को इधर-उधर करके उसे साम्राज्य से वहिर्गत हो जाने के लिए बाध्य कर दे। इसमें अब शक नहीं है कि गाँधी-इर्विन समझौते ने यदि भारत में पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं की तो एक ज़बर्दस्त आन्दोलन का सूत्रपात होगा और भारत पूर्ण स्वतन्त्र होकर ही चैन लेगा।

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जे० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—२; दृश्य—२

साहित्यानन्द के मकान का पिछवाड़ा

(संसारीनाथ साहित्यानन्द के मकान के पिछवाड़े की दीवाल फाँद कर बदहवास निकलता है ।)

[नोट—दीवाल पर से कूदने का इन्तज़ाम खिसकने वाले बग़ली पर्दे (Sliding Wing) में होना चाहिए, वरना पर्दे की तरतीब ठीक नहीं बैठेगी, क्योंकि इसके पहले के दृश्य में मेज़-कुर्सियाँ हैं, जिसके आगे पट-परिवर्तन के लिए पर्दा गिराना ज़रूरी है ।]

संसारी—(घबड़ा कर भागता हुआ) बाप रे बाप ! यह मर्दूद यहाँ भी पहुँच गया ।

(संसारीनाथ घूम-घूम कर पीछे देखता हुआ भागता जाता है । सामने से एकाएक जदुनाथ आ पड़ता है और उससे टकरा जाता है ।)

जदुनाथ—संसारीनाथ ! अरे !!!

संसारी—हाय ! क्या अब इधर से भी पहुँच गए ?

जदुनाथ—कौन, संसारीनाथ ?

संसारी—तुम हो ? मैं समझा साहित्यानन्द ।

जदुनाथ—वाह भई ! इतने दिनों के बाद मिले भी तो अन्धे होकर । क्या प्रेम ने तुम्हारी आँखें भी छीन लीं या यह तुम्हारी लेखनी की करामात है ? क्योंकि इन दिनों तुम लेख भी सुना, बड़े ज़ोरों से लिखते हो ? मगर इतने बौखलाए हुए क्यों हो ?

संसारी—कुछ न पूछो । बेमौत मर रहा हूँ । तक़दीर से लड़ रहा हूँ । (पीछे ताक कर) मगर कहीं वह यहाँ भी न आ जाए ।

यदुनाथ—अरे म्याँ ! आदमी हो या घनचक्कर ? इधर-उधर क्या देख रहे हो ?

संसारी—आह ! कभी आदमी ज़रूर था, मगर जब से प्रेम के चक्कर में पड़ा तब से सचमुच घनचक्कर बन गया ।

जदुनाथ—फिर लगे वाही-तबाही बकने ? क्या हुआ क्या ? कुछ कहो तो सही !

संसारी—पूछ कर क्या करोगे ? क्या अब भी तुम्हारा पेट नहीं भरा ? अब तो दर्शनों तक के लिए तरसता हूँ । रातो-दिन रो-रोकर मरता हूँ, तुम्हीं लोगों की बदौलत । तुम्हारी ही सलाह में पड़ कर चपला के साथ शादी करने का प्रस्ताव साहित्यानन्द से उस दिन कर बैठा था, जिसका नतीजा यह हुआ कि अब उनके घर में मेरी पैठ तक नहीं होती । दूर ही से मुझे देख कर डण्डा लिए दौड़ते हैं । आज महीनों तड़पने के बाद जब नहीं सब्र कर सका तो बड़ी हिम्मत करके लुक-छिप कर उनके यहाँ गया ।

जदुनाथ—अच्छा-अच्छा, तब क्या हुआ ? बातचीत हुई ?

संसारी—आह ! बातचीत की कहाँ नौबत आई ? मैं चपला के पास पहुँच भी न सका था कि बीच ही में वह फट पड़े ।

जदुनाथ—वह कौन ?

संसारी—वही साहित्यानन्द और कौन ? वह मियाँ-बीबी दोनों बैठक से लड़ते हुए निकले । मुझे छिपने का कहीं मौक़ा न मिला तो झट पाख़ाने में घुस गया ।

जदुनाथ—राम ! राम ! तुम्हारी अक़्ल बिल्कुल ही मारी गई ? जब तुम उससे इतना डरते हो तब उसके यहाँ गए क्यों ? ख़ैर कहो, उसके बाद क्या हुआ ?

संसारी—हुआ क्या ? बीबी की फटकारों का जवाब जब साहित्यानन्द को कुछ न सूझा तो अपनी जान बचाने के लिए उन्होंने भी लोटा लेकर पाख़ाने ही की शरण ली ।

जदुनाथ—(एकाएक हँस कर) वाह ! वाह ! आहाहाहा ! तब तो ससुर-दामाद की अच्छी मुठभेड़ हुई होगी !

संसारी—होती तो । मगर मैंने इसकी नौबत ही नहीं आने दी । झट उन्हीं के कन्धे पर लात रख कर दीवाल फाँद गया और वैसे ही तुम मिले ।

जदुनाथ—(बड़े ज़ोरों से हँसता हुआ) आहा-हाहा ! आहाहाहा ! उफ़ ! पेट में बल पड़ गए । यह तो सोने में सुहागा हुआ । उस बेचारे के कन्धे तुम्हें बड़ी दोआएँ देते होंगे । अब वह ज़रूर तुम्हें अपनी लड़की ब्याह देगा ।

संसारी—क्यों नहीं ? पावें तो मुझे कच्चा चबा जाएँ । तभी तो घूम-घूम कर देख रहा हूँ, कहीं आते न हों ।

जदुनाथ—तुमने काम ही ऐसा लाजवाब किया है । अब भी वह तुमसे ख़फ़ा न हों, तो ताज्जुब ही है ।

संसारी—उनकी ख़फ़गी का हाल न कहो । अगर उन्हें कम से कम यही मालूम हो जाए कि उनके अख़बार में श्रीमती तिलोत्तमा देवी के नाम से लेख सब मेरे ही लिखे हुए होते हैं, तो वह अपना सारा अख़बार का अख़बार ही जला दें ।

जदुनाथ—क्या ? क्या ? क्या ? तुम्हीं तिलोत्तमा देवी हो ? तभी मुझे तुम्हारे नाम से किसी अख़बार में भी लेख नहीं दिखाई पड़ा । हालाँकि जब से सुना कि तुम अब लेख भी लिखने लगे हो, उसी वक़्त से मैं तुम्हारा लेख अख़बारों में ढूँढता हूँ ।

(रमाकान्त का आना)

रमाकान्त—वाह भाई संसारीनाथ ! जब तुमने साहित्यानन्द के पिछवाड़े बसेरा डाल रक्खा है तब भला तुम घर पर कैसे मिल सकते थे ? एक तो महीनों के बाद आज दौरे पर से लौटा तो सीधे तुम्हारे यहाँ लपका । जब नहीं मिले और (जदुनाथ की तरफ़ इशारा करके) इनसे भी पूछने पर तुम्हारा कुछ पता न चला तो मैं समझ गया कि हज़रत अपनी 'प्रेमगली' का चक्कर लगा रहे होंगे । आख़िर मिले यहीं । कहो कैसे रहे भाई ?

जदुनाथ—अजी हाल-चाल पीछे पूछना, पहिले यह तो सुन लो । आप ही हैं श्रीमती तिलोत्तमा देवी ।

रमाकान्त—सचमुच ? वाह ! वाह ! अरे ! भई तुम्हें लेख लिखने का शौक़ कैसे चर्रा उठा !

संसारी—जब कभी दिल पर चोट लगेगी तो इसका भेद मालूम हो जाएगा ।

जदुनाथ—सच कहते हो उस्ताद । मान गया । बिना चोट खाए भावों का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं होता और बिना इस ज्ञान के कोई लेखक लेखक नहीं हो सकता और न कवि कवि । जब दिल पर चोट लगती है और भाव तिलमिला उठते हैं तब उन्हें बिना उगले रहा भी नहीं जाता ।

संसारी—उफ़ ! ग़ज़ब करते हो भाई जदुनाथ । तुमसे असलियत छिप नहीं सकती ।

रमाकान्त—मगर हमारे यहाँ की जीवनियों में यह बातें देखने में नहीं आतीं ।

जदुनाथ—कैसे आएँ, जीवनी जीवनी हो तब तो ? यहाँ तो जीवनी के नाम से ख़ुशामद-गाथा लिखी जाती है—बड़े उच्च-कुल में उत्पन्न हुए । उच्च शिक्षा पाई । परीक्षा में प्रथम होते थे । बड़े भले मानुष थे । डेढ़ सौ किताबें लिखीं । वग़ैरह-वग़ैरह । पूछिए, भला इन बातों से किसी को क्या मतलब या दिलचस्पी ? दुनिया में उनके ऐसे करोड़ों उच्च शिक्षा वाले पड़े हैं । इसीसे यहाँ जीवनियों का कुछ भी महत्व नहीं है ।

रमाकान्त—(हँस कर) तब जीवनियों में क्या होना चाहिए लेकचराधिराज ?

जदुनाथ—हँसने की बात नहीं है । किसी की जीवनी हमेशा किसी न किसी गुण ही के लिए लिखी जाती है । इसलिए इसमें उन घटनाओं और परिस्थितियों की अच्छी छान-बीन होनी चाहिए, जिनके द्वारा उस गुण की उपज, वृद्धि, परिवर्तन इत्यादि हुए हैं, ताकि दुनिया उससे सबक़ ले । विदेशी जीवनी-लेखक तो इन बातों के पीछे मर मिटते हैं, इनके रहन-सहन, आचार-विचार निजी पत्रों तक में ढूँढते हैं, देखो Boswell ने Cromwel की जीवनी के लिए क्या नहीं किया । तब जाकर वह जीवनियाँ साहित्य का अङ्ग बनाती हैं ।

संसारी—वाह भाई जदुनाथ, तुम्हारी बातों का अगर संग्रह किया जाए तो साहित्य-सुधार पर बड़ी अच्छी पुस्तक बन जाए ।

जदुनाथ—तुम क्यों न कहोगे ऐसा ? लेखक हो न ?

रमाकान्त—हाँ, यह तो मैं भूल ही गया । हाँ भई संसारीनाथ, तुम्हें उपनाम ही रखना था तो कोई मर्दाना नाम रखते ? ज़नाना नाम क्यों रक्खा ? क्यों, सखी-भाव का कुछ ज़ोर तो नहीं है ?

संसारी—राम कहो । मर्द का चोला पाकर मुझे औरत बनना पसन्द नहीं । कौन ज़नख़ों की तरह 'अय बहिनी, अय दीदी' कह कर अपनी औक़ात ख़राब करे और दूसरों से अपनी ही नहीं, बल्कि अपने धर्म की भी हँसी करावे ? अगर ईश्वर मुझे इस रूप में नहीं मिल सकते तो उन्होंने मुझे यह चोला दिया क्यों ? ऐसे ईश्वर को मेरा दूर ही से प्रणाम है, जो असली कौन कहे, बनावटी औरतों तक पर भी रीझ जाते हों ?

रमाकान्त—तब तुमने तिलोत्तमा का नाम क्यों रक्खा ?

जदुनाथ—कहते क्यों नहीं, कि सम्पादकों की आँखों में धूल झोंकने के लिए ।

संसारी—हाँ भई, यही बात है । जब देखा कि नए लेखकों की कहीं पैठ नहीं होती और सब जगह से मेरे लेख वापस आने लगे, तब मैंने यह चाल खेली और तारीफ़ है कि मेरे इतने लेख छप जाने के बाद भी अगर अपने नाम से कोई लेख भेजूँ तो वह अब भी उसी तरह वापस आ जाएगा ।

जदुनाथ—क्यों नहीं ? बड़े सम्पादकों के पास नए लेखकों के गुण और दोष परखने या सलाह बताने के लिए समय नहीं और टुटपुँजियों को तमीज़ नहीं । और तुमने भी तो अपने लेखों के लिए साहित्यानन्द का अख़बार चुना । क्योंकि तिलोत्तमा के लेख उसीमें मैं ज़्यादातर देखता हूँ । ऐसे ऐरे-ग़ैरे पचकल्यानियों से इसके सिवाय उम्मीद ही क्या हो सकती है, जो सिर्फ़ दूसरों ही के पद-चिन्हों पर क़दम रखना जानते हैं ?

संसारी—क्या करता ? सब से पहिले उन्हीं पर मेरा चकमा चल गया। क्योंकि स्त्रियों के लेखों के लिए ख़ास तौर से उन्होंने विज्ञापन दे रक्खा था।

जदुनाथ—हाँ, वह जानता होगा कि नए लेखकों के बदले नई लेखिकाओं के लेख चुनने में अपनी योग्यता की आबरू बहुत कुछ बची रह सकती है। क्योंकि इनके लेखों में अगर दोष भी होंगे तो पाठक समझेंगे कि सम्पादक जी उनका उत्साह बढ़ा रहे हैं।

संसारी—और दूसरे असलियत तो यह थी कि मुझे अपनी चपला को अपना हृदय चीर कर दिखाना मञ्जूर था। इसीलिए मैंने उसके घर का अख़बार चुना, ताकि वह उसे पढ़ने के लिए आसानी से पा सके। सच पूछो तो उसीके लिए मैं लेखक बना और उसीके लिए मैं लिखता भी हूँ।

रमाकान्त—उसे क्या मालूम कि तुम्हीं तिलोत्तमा हो ?

संसारी—उसे न मालूम होगा तो फिर किसे मालूम होगा ? सौ-सौ ख़ुशामदें करके टेसुआ से यह भेद उसके पास मैंने पहिले ही कहला भेजा था।

रमाकान्त—यह कहो। तुमने टेसुआ को अपनी तरफ़ कर लिया।

संसारी—मगर इससे क्या ? साहित्यानन्द तो अपनी तरफ़ नहीं हैं। एक तो योंही नाराज़ थे, अब और जामे से बाहर हो गए। यही तो रोना है।

जदुनाथ—(सोचते-सोचते चौंक कर) भला तिलोत्तमा के लेखों की माँग के लिए तुम्हारे साहित्यानन्द भी कभी पत्र भेजते हैं ?

संसारी—बराबर। पहिला लेख पहुँचते ही उन्होंने तो ख़तों का ताँता बाँध दिया है।

जदुनाथ—बस अब मार ली बाज़ी। दोस्त अब मत घबड़ाओ। चपला की शादी तुमसे करा कर छोड़ूँगा। इसके लिए मुझे एक चाल सूझ गई। अब उसके जितने भी ख़त तिलोत्तमा के नाम से आएँ उनके जवाब मुझसे लिखवाया करो। और तुम अपने लेखों की भाषा जितनी भी कठिन बना सको, बनाओ। हालाँकि ऐसा करना अपनी भाषा की जड़ खोदना है। जिसे सरल लिखने की योग्यता नहीं होती, वही इसे अपनी ल्याक़त झाड़ने के लिए अपनाते हैं। मगर ख़ैर, यहाँ तो उल्लू को उल्लू बना कर अपना काम निकालना है।

संसारी—तिलोत्तमा के नाम से तो उनका एक आज ही ख़त आया है, जिसका जवाब अभी तक मैंने नहीं दिया है।

जदुनाथ—लाओ उसे हमें दो।

संसारी—यहाँ कहाँ ? घर पर है।

जदुनाथ—चलो फिर वहीं चलो। इसी दम से मैं अपनी कार्रवाई शुरू करता हूँ।

रमाकान्त—मगर यह क्या कहा कि कम योग्यता वाले कठिन भाषा अपनाते हैं। भला यह कैसे मुमकिन हो सकता है ?

जदुनाथ—सरल लिखना कठिन है और कठिन लिखना आसान, लिख कर देखो तब पता चलेगा। भाषा की शान विचारों में है, विचारों का प्रभाव शैली में है और शैली की जान सरलता में होती है।

(बातें करते-करते सब का जाना और चपला का अपने मकान की दीवाल पर दिखाई पड़ना।)

चपला—(अपनी दीवाल से झाँकती हुई) अरे ! यहाँ तो कोई नहीं। मगर इधर ही से उनकी बातचीत की भनक सुनाई पड़ रही थी। हा ! मैं भी कैसी अभागिनी हूँ कि आज वह इतने दिनों के बाद घर में आए भी तो......(एक तरफ़ देख कर) अरे ! पिता जी आ रहे हैं। और हाथों में क्या लिए हैं ?

(दीवाल पर से सर हटा लेती है ; और बीच-बीच में थोड़ा-थोड़ा झाँकती है।)

साहित्यानन्द—(बहुत से कमानीदार चूहेदानी लिए हुए) साला मेरे ही कन्धे पर चढ़ कर सर से दीवाल फाँद गया ; मानो मैं मनुष्य नहीं, सीढ़ी था। ऐसी दुष्टता ? उसकी ऐसी-तैसी करूँ। साला अब पिछवाड़े के मार्ग से आता-जाता—उहुँक आगमन और प्रस्थान करता है। इसी हेतु मैं चूहों को फाँसी देने वाली इतनी कमानीदार चूहेदानियाँ तुरन्त हाट से क्रय कर लाया। अब इन्हें उसके मार्ग में बिछा दूँगा। बस जैसे ही वह यहाँ आएगा और उसका पैर—उहुँक पाद किसी न किसी चूहेदानी पर पड़ा, तहाँ उसकी कमानी कचाक से लगेगी और उसका अङ्गुष्ठ खटाक से कट कर पृथक हो जायगा, तब साले को मेरे कन्धे पर आरूढ़ होने का आनन्द मिलेगा ? (दाँत किटकिटा कर) क्या बताऊँ, जब वह दीवाल—उहुँक—भीत फाँद गया तब जाना कि वह संसारीनाथ है, नहीं तो मैं अपने कन्धों को ऐसा हिला देता कि साला धमाक से नीचे गिरता और तड़ाक से मैं उस पर चढ़ बैठता—उहुँक—आरूढ़ बैठता। अरे बाप रे बाप ! हाय ! हाय ! मर गया ! इस हिलने-डुलने में एक चूहेदानी की कमानी मेरे ही हाथ में लग गई। हाय ! हाय ! उँगलियाँ आधी-आधी कट गईं।

(बैठ कर रोता और अपने हाथ से चूहेदानी छुड़ाता है।)

साहित्यानन्द—(कराहता और अपना ख़ून-भरा हाथ झटकता हुआ) अब जाकर उसके मार्ग में इन चूहेदानियों को बिछा दूँ। नहीं फिर किसी की कमानी जो छूटक गई तो यह हाथ भी खण्डित हो जाएगा।

(चूहेदानियाँ लेकर एक तरफ़ जाता है और चपला दीवाल पर अपना सर निकालती है।)

चपला—हाय ! यह जानमारू कार्रवाई क्या मेरे संसारीनाथ के लिए हो रही है ? नहीं-नहीं, प्राण दे दूँगी, मगर उनका एक बाल भी बाँका न होने दूँगी। कहीं वह इधर ही से आ न पड़ें। अभी-अभी उनकी आवाज़ इधर ही सुनाई भी पड़ी थी। हाय ! क्या करूँ ?

(साहित्यानन्द का आना)

साहित्यानन्द—बिछा दिया। मार्ग भर में बिछा दिया। परन्तु अब भी सन्तोष नहीं हुआ। अच्छा अब जाकर एक युक्ति और करता हूँ।

(जाता है।)

(चपला दीवाल पर से एक रस्सी लटकाती है और उसके सहारे उतरती है।)

चपला—अब जल्दी से जाकर मैं उन जानमारू चूहेदानियों को रास्ते से हटा कर अलग पेड़ों के पास फेंक दूँ। जहाँ कोई जाता न हो। नहीं तो कौन ठीक, वह इधर ही आ पड़ें और तब हाय !......

(उसी तरफ़ जाती है, जिधर साहित्यानन्द चूहेदानियाँ लगा आया था।)

(लठैतमल और डण्डेबाज़ का दूसरी तरफ़ से आना।)

लठैतमल—बाह-बाह ! हमका हीयाँ पठै के अपने गायब हो गए ? कहो हो डण्डेबाज वै केहर गए केहर ?

डण्डेबाज़—वही तो हम भी देख रहे हैं लठैतमल। चलो उनको बुला लावें। हम लोग ऐसी कच्ची गोलियाँ नहीं खेलते।

(दोनों फिर लौट जाते हैं)

(चपला का आना)

चपला—सब हटा कर पेड़ों के पास कर आई। अब जाकर जी में जी आया।

(रस्सा के सहारे दीवाल पर चढ़ जाती है)

(साहित्यानन्द, लठैतमल और डण्डेबाज़ का आना)

साहित्यानन्द—अरे ! हमारे यहाँ उपस्थित रहने की क्या आवश्यकता ? कौन सा महाकार्य है ? तुम लोग जाकर पेड़ों की आड़ में घुस रहो। जब उस मार्ग पर किसी को चिल्लाते हुए सुनना, वैसे ही दौड़ कर उसे मारना आरम्भ कर देना। परन्तु सावधान, तुम लोग मार्ग पर नहीं, वरन् किनारे इट कर चलना !

डण्डेबाज़—यह सब सही है, मगर जब आप यहाँ मौजूद रहें तभी हम लोग यह काम करेंगे।

साहित्यानन्द—अच्छा यही सही। जाओ उस पेड़ की आड़ कर घुस हो जाओ। मार्ग से हट कर चलो। हाँ, अब ठीक है।

(दोनों का चूहेदानियों की ओर जाना)

साहित्यानन्द—अब ईश्वर उस साले संसारीनाथ को इधर भेज दे, तो बस आनन्द ही आनन्द है। आता ही होगा। परचा हुआ है। नीचे कमानियाँ अङ्गुष्ठ काट लेंगी, और ऊपर से डण्डे पड़ेंगे।

(नेपथ्य में रोने और चिल्लाने की आवाज़)

साहित्यानन्द—ओहोहो ! आ गया और फँस गया। तभी साला चिल्ला रहा है, अब साले पर मार पड़ेगी। आहाहाहाहा !

(डण्डेबाज़ और लठैतमल का लँगड़ाते हुए आना)

डण्डेबाज़—अरे बाप रे बाप, मर गए ! पेड़ के पास चूहेदानी लगा कर और वहाँ हम लोगों को इस तरह धोखा देकर भेजना ?

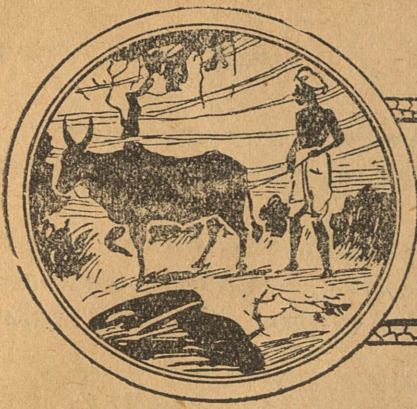
लठैतमल—देखत का हौ। मार सारे के खोपड़ी दुइ होए जाए। हाय ! दादा हमहूँ लङ्गड़ होय गएन। मार-मार, सारे के जीयत न छाँड़।

(दोनों साहित्यानन्द को मारते-मारते भगा ले जाते हैं)

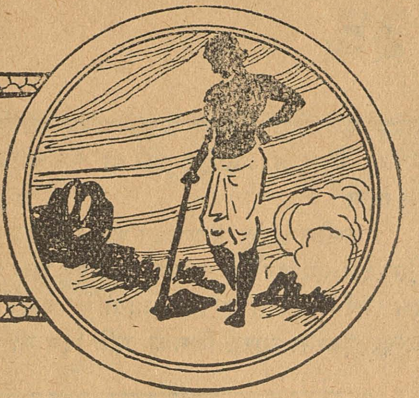
[पट-परिवर्तन]

(क्रमशः)

* * *



भारतीय भारत



भारत की देशी रियासतें

"रियासत" के उद्गार

कलसिया-नरेश पर सिगरेट पीने का अभियोग

सिक्खों में सिगरेट पीना उसी तरह 'हराम' है, जिस तरह मुसलमानों के लिए सुअर या हिन्दुओं के लिए गोमांस। कलसिया-नरेश के सिगरेट पीने के सम्बन्ध में लाहौर का एक सिक्ख अख़बार लिखता है, कि उसके सम्पादक ने ख़ुद अपनी आँखों से राजा साहब को गोल्ड फ़्लेक सिगरेट पीते हुए देखा है और आपका यह अपराध अक्षम्य है। इस सहयोगी से हम पूछना चाहते हैं, कि कौन सा राजा या महाराजा है, जो सिक्ख कहलाते हुए भी सिगरेट नहीं पीता? पञ्जाब में सिक्खों में पटियाला, नाभा, झिन्द, कपूरथला, कलसिया और फ़रीदकोट छः रियासतें हैं, इनमें नाभा तो देशान्तरित हैं और फ़रीदकोट के राजा नाबालिग़। बाक़ी चार में से कौन सा ऐसा है, जो सिगरेट नहीं पीता और प्रतिशत मुसलमान या हिन्दू रजवाड़े कितने हैं, जो अपने धर्म पर दृढ़ हैं और 'हराम' चीज़ों से परहेज़ करते हैं?

हमारे ख़्याल में इन महाराजाओं और नवाबों को धर्म को छोड़ देना चाहिए, ये जैसा चाहें अपने विचार रक्खें, परन्तु देखना यह है कि इनकी दूसरी करतूतों के कारण इनकी प्रजा पर क्या प्रभाव पड़ता है और अगर ये अपनी प्रजा के कष्ट के कारण हैं, तो क्यों न इनके साथ सहयोग की सम्पूर्ण समाप्ति कर दी जाए?

महाराजा कपूरथला का २५वाँ हज

भारत के देशी रजवाड़े यूरोप की यात्रा को उतना ही आवश्यक समझते हैं, जितना कि एक मुसलमान हज को। इसलिए अगर रजवाड़ों की यूरोप-यात्रा की उपमा उनकी हज-यात्रा से दी जाए तो कोई अनुचित बात न होगी। यह बात दिलचस्पी से सुनी जाएगी, कि कपूरथला-नरेश हर साल की तरह इस साल फिर विलायत चले गए। यह यूरोप-यात्रा आपका पचीसवाँ 'हज' है। इस सम्बन्ध में समस्त पूर्व में कोई भी आपकी समता नहीं कर सकता।

एक ओर तो कपूरथला राज्य के किसानों और ज़मींदारों की दुरवस्था पराकाष्ठा को पहुँच गई है और राज-कर की अधिकता उनके लिए महान् विपत्ति का कारण बन रही है और उधर महाराजा साहब हिन्दुस्तान से कुछ दिनों के लिए विलायत नहीं जाते, वरन् विलायत से चन्द रोज़ के लिए हिन्दुस्तान आते हैं। फलतः जब चेम्बर का अधिवेशन समाप्त हो गया, तो आपने भी अपनी यात्रा के लिए बिस्तर बाँधना आरम्भ कर दिया। क्या कपूरथला के महाराजा साहब ठण्डे दिल के साथ अपनी रियासत से अनुपस्थिति और प्रजा को दूसरों के भरोसे पर छोड़ने के प्रश्न पर विचार करेंगे?

भूपाल का 'रियासत' के मुक़द्मे में कितना ख़र्च हुआ

हमारे सम्वाददाता ने भूपाल से सूचना दी है, कि 'रियासत' के सम्पादक पर चलाए गए मुक़द्मे में अब तक भूपाल-राज्य के सत्तर हज़ार से अधिक रुपए ख़र्च हुए हैं, इसलिए नवाब साहब और राज्य के उच्च पदाधिकारियों में चर्चा हो रही है, कि इसकी जाँच के लिए एक कमीशन नियुक्त किया जाए, कि इतने रुपए कहाँ और कैसे ख़र्च हुए।

हमारे ख़्याल में अगर भूपाल-सरकार ने इधर क़दम बढ़ाया और रुपए के ख़र्च के सम्बन्ध में एक 'स्वतन्त्र' कमीशन नियुक्त करके जाँच की गई, तो निस्सन्देह जन-साधारण के विचार से यह कार्य अत्यन्त लाभजनक होगा। क्योंकि ऐसे मुक़द्मों के अन्त तक अगर भारत-सरकार के कुछ ही सौ रुपए ख़र्च होते हैं, तो क्या कारण है कि भूपाल के ख़ज़ाने को सत्तर हज़ार का बोझ उठाना पड़ा? और तुर्रा तो यह है कि अभी मुक़द्मा अपने प्रारम्भिक अवस्था में ही है। इस्तग़ासा के अभी चौथाई गवाह भी ख़तम नहीं हुए।



नवाब भूपाल

भूपाल-राज्य के इस मुक़द्मे में अगर अब तक सत्तर हज़ार रुपए ख़र्च हुए हैं, तो हमारा अनुमान है, कि इस मुक़द्मे के अन्त तक और फिर इस मुक़द्मे से पैदा होने वाले दूसरे मुक़द्मों (जिनका होना अनिवार्य है और जो हमारी ओर से होंगे) के लिए राज्य के सम्भवतः पाँच-छः लाख रुपए ख़र्च हो जाएँगे। अब आप स्वयं विचार कीजिए कि यह तमाम बोझ किसकी गर्दन पर पड़ेगा? बेचारी भूपाल की प्रजा ने ऐसा कौन सा अपराध किया है कि उसके साठ लाख तो गद्दी के उत्सव में, विलायत में, बरबाद कर दिए गए और मुक़द्मों के लिए इस बेरहमी से रुपए ख़र्च किए जा रहे हैं।

चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस का रुपया कब मिलेगा

हमें विश्वस्त-सूत्र से मालूम हुआ है कि चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस का दस लाख रुपया 'पटियाला स्टेट बैङ्क' के नाम पर रियासत पटियाला के ख़ज़ाने में जमा था, जिसको पटियाला के 'अटल प्रतापी' ने गोलमेज़ के दिनों में मोटरें आदि ख़रीदने में ख़र्च कर डाला और वापस आए तो आपको चान्सलरशिप से जवाब मिल गया। अब नया समाचार है कि नए चान्सलर साहब यह रुपए माँग रहे हैं और पटियाला-नरेश बग़लें झाँक रहे हैं। दौड़-धूप हो रही है कि कहीं से ऋण लेकर रुपए दे दिए जाएँ।

महाराज पटियाला को इस दस लाख की साधारण सी रक़म की क्या चिन्ता है? प्रजा अपना पसीना बहाने के लिए तैयार रहे। चार-पाँच करोड़ पहले का भी तो क़र्ज़ है। दस लाख और सही। जो चार-पाँच करोड़ उतारेगा, वह दस लाख भी उतार देगा। महाराजा ने तो विलायत में आनन्दपूर्ण दिन बिताया और मोटर बेचने वालों के दिलों पर अपनी उदारता का सिक्का जमा आए।

गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में कर्नल हक्सर के ख़र्च

पिछले पाँच-छः वर्षों में पटियाला-नरेश ने चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के फ़ण्ड के साथ जिस बेरहमी का बर्ताव किया है और पानी की तरह रुपए बहाए हैं, वह जानकारों से छिपा नहीं है। उसका अन्दाज़ा केवल इसी से हो सकता है कि चेम्बर के सिर्फ़ एक सफ़ेद हाथी कर्नल हक्सर की तनख़्वाह आठ हज़ार रुपए महीना थी। हालाँकि आप ग्वालियर में तीन हज़ार रुपए से अधिक नहीं पाते थे।

अब कर्नल हक्सर के सम्बन्ध में हाल में ख़बर मिली है कि जब आप गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के प्रतिनिधि बन कर गए थे तो आपकी यात्रा में एक लाख, साठ हज़ार रुपए ख़र्च हुए हैं, जो सब के सब चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के मत्थे पड़े हैं। अब इससे अनुमान किया जा सकता है कि महाराज पटियाला ने चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस में किस बेहयाई के साथ अपनी उदारता का परिचय दिया है, किस बेदर्दी से रुपए उड़ाए गए हैं और इसकी ज़िम्मेदारी किस पर है?

क्या अन्यान्य रजवाड़े अपने भूतपूर्व चान्सलर से पूछेंगे कि चेम्बर के रुपए के साथ भी क्यों पटियाला के ख़ज़ाने का सा व्यवहार हुआ और इस उदारता का लाभ महाराज पटियाला के सिवा और किस राजा को मिला?

गोलमेज़ की सेवा में हैदराबाद के २६ लाख

हैदराबाद से हमारे सम्वाददाता ने गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के डेपुटेशन के सम्बन्ध में कुछ ख़बरें भेजी हैं, जिनमें कहा गया है कि, इस डेपुटेशन ने, जिसके सर अकबर हैदरी, कर्नल सर ट्रेञ्ज, नवाब मेहदी जङ्ग और सर रेजीनाल्ड ग्लेसनी मेम्बर थे, अपनी इस यात्रा में २६ लाख ख़र्च किया। ज़रा अनुमान कीजिए कि अगर रियासतें अपनी प्रजा को अधिकार देने की ओर पैर भी बढ़ाती हैं तो किस शान के साथ? नहीं कहा जा सकता कि रियासत हैदराबाद के फ़ेडरेशन में शामिल होने के बाद वहाँ की बेकस प्रजा को क्या फ़ायदा पहुँचेगा और हैदराबाद के निज़ाम अपनी स्वेच्छाचारिता से कैसे बाज़

आवेंगे, जिन्होंने श्रीगणेश पर ही २६ लाख पर पानी फेर दिया।

अफ़सोस है कि हैदराबाद का ख़ज़ाना वहाँ किसी ज़िम्मेदार एसेम्बली के सामने जवाबदेह नहीं है, अन्यथा इस ख़र्च की तफ़सील पूछी जाती कि अढ़ाई महीने के अन्दर छब्बीस लाख, जिसकी प्रति दिन की औसत ३५



महाराजा पटियाला

हज़ार के क़रीब होती है, कहाँ, किस तरह और क्योंकर ख़र्च हुए और इस ख़र्च से वहाँ की प्रजा को क्या लाभ पहुँचा?

काँग्रेस और महाराज नाभा

गुरुद्वारा प्रबन्धक कमिटी (जो सिक्खों की सब से बड़ी और शक्तिशालिनी संस्था है) ने हाल में प्रस्ताव द्वारा काँग्रेस से प्रार्थना की है कि महाराज नाभा अपने स्वतन्त्र विचारों के कारण गद्दी से अलग किए जाकर नज़रबन्द हैं, उनकी मदद की जाए। और सिक्खों में उस समय तक शान्ति नहीं हो सकती, जब तक आपको अपनी गद्दी पर फिर से नहीं बिठाया जाता।

महाराज नाभा का गद्दी पर बिठाया जाना एक महत्वपूर्ण विषय है, परन्तु नहीं कहा जा सकता कि उस पर कभी विचार होगा या नहीं? और अगर विचार होगा तो कब? क्योंकि वर्तमान सरकार जिसे एक निश्चित विषय समझे हुई है और भावी स्वराज्य सरकार ने अपने प्रारम्भिक ज़माने के अन्दर ही सभी देशी नरेशों को गद्दी से उतारने की ओर क़दम बढ़ाया है। परन्तु यह कितने दुख और लज्जा की बात है कि महाराज नाभा को बिना अपराध बताए ही अपने वतन से दो हज़ार मील की दूरी पर बिना किसी मीयाद के नज़रबन्द कर दिया गया है।

सरकार से जनता यह पूछने का अधिकार रखती है कि वह कौन सी बग़ावत थी, जिसके लिए महाराज नाभा पर सन् १८१८ की तलवार इस्तेमाल की गई। अगर देश-प्रेम और स्वतन्त्रता-प्रेम ही वह अपराध है तो क्यों लॉर्ड इर्विन आज महात्मा गाँधी के पैरों पर झुके हैं और भारत को स्वायत्त शासन दिया जा रहा है?

आवश्यकता है कि काँग्रेस अपनी पूरी शक्ति महाराज के लिए लगाए और अगर अधिक नहीं तो कम से कम आपको देश-निकाले और नज़रबन्दी से तो मुक्त किया जाए?

निज़ाम का फ़ेडरेशन से तौबा!

दो सप्ताह हुए हमने एक प्राइवेट समाचार के आधार पर लिखा था कि हैदराबाद के निज़ाम भावी फ़ेडरेशन में सम्मिलित होना नहीं चाहते। और उसके लिए सर अकबर हैदरी की वक्तृताओं को सख़्त नापसन्द किया गया है। आज हमारे इस समाचार का समर्थन हो गया। निज़ाम-सरकार ने फ़ेडरेशन के सम्बन्ध में जो घोषणा की, वह हमारे पास पहुँच गई है। उससे यह साफ़ प्रकट होता है कि निज़ाम फ़ेडरेशन से तौबा करते हुए अपने लिए इसे ख़तरनाक बताते हैं। और इस हालत में उसमें सम्मिलित हो सकते हैं कि आपकी स्वेच्छाचारिता में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो, बल्कि उसके समर्थन में एक नया सार्टीफ़िकेट भी दे दिया जाए। इस घोषणा की चन्द शर्तें देखिए। आप फ़रमाते हैं:—

(१) रियासत हैदराबाद उस समय फ़ेडरेशन में सम्मिलित होगी, जब कि सर्व-श्रेष्ठ देशी रियासत होने की हैसियत से उसकी 'पोज़िशन' सुरक्षित रहेगी और उसके बादशाही अधिकारों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो।

(२) हैदराबाद रियासत के फ़ेडरेशन में सम्मिलित होने या न होने का निश्चय गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के निर्णयों के बाद होगा। वर्तमान निज़ाम अन्यान्य देशी रजवाड़ों की तरह फ़ेडरेशन में सम्मिलित होने के लिए बाध्य नहीं हैं। क्योंकि अन्यान्य रजवाड़ों का प्रतिनिधित्व ख़ुद उनके अधिपतियों ने किया था।

(३) फ़ेडरल सब-कमिटी की सिफ़ारिशों में जब तक यथेष्ट सुविधाएँ न हों, हैदराबाद किसी प्रकार के त्याग के लिए तैयार नहीं है।

आत्म-बल

[श्री० 'मगन']

जो परिपूरित 'धन-बल' 'मद-
बल', 'भुज-बल', 'पशु-बल' से है!
हम उसे समझते निर्बल;
जो रहित 'आत्म-बल' से है!!

❀

'धन' क्या है? झूठो छाया;
'मद' क्या है? मन का 'मल' है!
'भुज-बल'! विश्वास रहित है!
'पशु-बल'? बिल्कुल निष्फल है!!

❀

'श्री', 'ऋद्धि', 'सिद्धि', 'विद्या', 'यश';
चरणों में गिरते आकर!
दृढ़ 'आत्म-बली' के आगे;
'ब्रह्माण्ड' काँपता थर-थर!!!

* * *

(४) कुछ विषयों के अतिरिक्त फ़ेडरल सरकार रियासतों के भीतरी अधिकारों में दख़ल न दे।

(५) डिफ़ेन्स और ख़ारिजी सम्बन्ध केवल सम्राट के अधिकार में होना चाहिए।

(६) बड़ी रियासतों को उनके विस्तार के अनुसार फ़ेडरेशन में भाग दिया जाए!

इस शर्तों से अनुभव किया जा सकता है कि रियासत हैदराबाद फ़ेडरेशन में सम्मिलित हो सकती है, जब कि उसे भीतरी मामलों में पहले की तरह ही स्वेच्छाचारी रहने दिया जाए। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या यह मुमकिन है और क्या इस नीयत पर इन लोगों को भारत का हितैषी कहा जा सकता है?

काश्मीर में एसेम्बली और सुधार

जम्मू का समाचार है कि महाराज काश्मीर पहली मई को वहाँ पहुँच जाएँगे और आपके आने पर एसेम्बली की घोषणा की जाएगी। इस घोषणा के बाद तुरन्त ही उसके अनुसार कार्य भी आरम्भ कर दिया जाएगा।

इस समय कई रियासतों में एसेम्बलियाँ क़ायम की गई हैं, परन्तु कोचीन, त्रिवाङ्कुर जैसी दो-तीन रियासतों को छोड़, बाक़ी एसेम्बलियाँ धोखे की टट्टी हैं। इसलिए

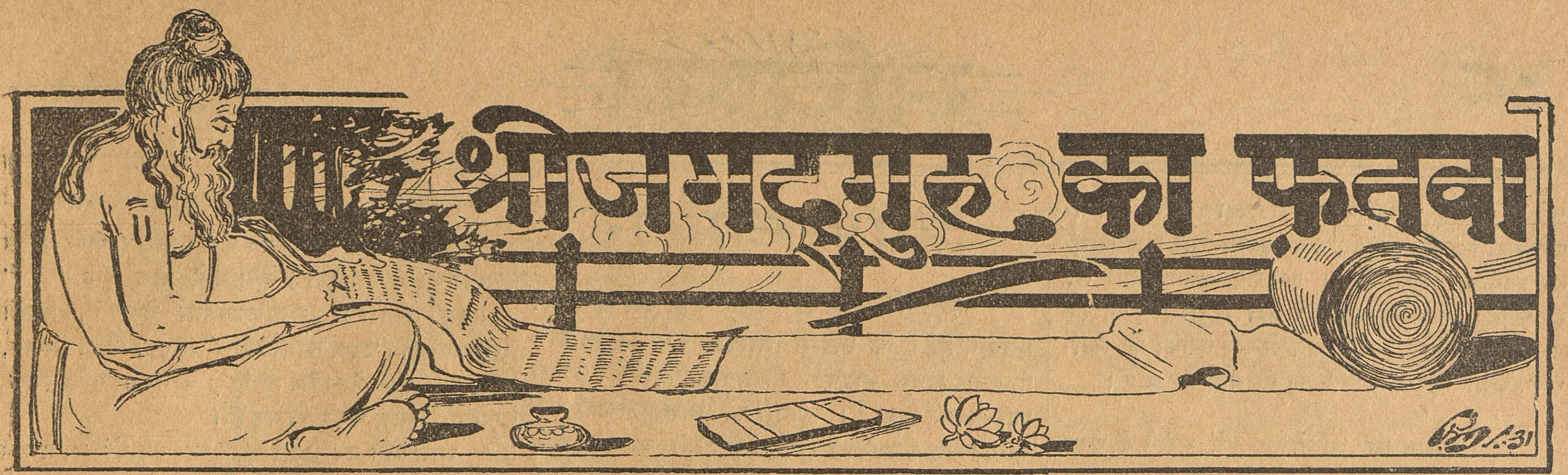


महाराजा काश्मीर

हम महाराज काश्मीर को बतलाना चाहते हैं कि अगर वह एसेम्बली की घोषणा कर रहे हैं, तो अपनी नेकनीयती का प्रमाण देते हुए, उसे एक ज़िम्मेदार इन्स्टीट्यूशन बनाएँ, न कि भूपाल, झिन्द और कपूरथला की तरह लोगों को उल्लू बनाने का सिर्फ़ एक ज़रिया।

काश्मीर में इस समय केवल कई अख़बारों का जाना ही नहीं बन्द है, बल्कि अत्यन्त घृणित तरीक़े से वहाँ के एकमात्र अख़बार 'रणवीर' को भी बन्द कर दिया गया है। अब अगर वहाँ एसेम्बली बनाई जा रही है, तो प्लेटफ़ॉर्म और प्रेस को भी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

* * *



[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

पुराने ज़माने की बात है। देश में धर्म, भगवान की तूती 'हँपों-हँपों' रव से बोल रही थी। बङ्गाल और मिथिला में पवित्र कौलिन्य प्रथा प्रचलित थी। क़सम ख़ुदा की, उन दिनों के लुत्फ़ों की याद आती है तो निगोड़ी जिह्वा घड़ों लार टपका कर सारी तोंद को ही लत्तफत्त कर देती है।

❀

उस धर्मयुग में श्रीजगद्गुरु जैसे कुलीनों को आजकल की तरह भङ्ग-बूटी के लिए फ़तवा नहीं लिखना पड़ता था और न महोदर की पूर्त्ति के लिए मौ० शौकतअली की तरह 'ख़िलाफ़ती' रोज़गार ही करना पड़ता था। बात यह थी कि जिस तरह आजकल गुरु लोग चेले मूँड़ा करते और गुलछर्रे उड़ाया करते हैं, इसी तरह उन दिनों कुलीन लोग ब्याह किया करते और चाँदी काटा करते थे। किसी के सौ बीबियाँ होती थीं तो किसी के दो सौ और ढ़ाई सौ। एकदम 'आम का आम और गुठलियों के दाम' की बहार थी।

❀

तोंद और दाढ़ी में परिवर्तन की आवश्यकता नहीं। बस, मान लीजिए कि श्रीजगद्गुरु 'कुलीन' हैं और १९१ शादियाँ कर चुके हैं। हठात् एक दिन एक नाई इक्यावनवीं ससुराल से एक पत्र लेकर पहुँचा। ससुर जी ने एक बार पधारने की कृपा करने के लिए प्रार्थना की थी। इस बुलाहट का कारण, अगर ख़ुदा ने अक़्ल दी हो तो स्वयं समझ जाइए। गुरु जी ने बड़ी बही निकाली। और चश्मा लगा कर ससुरालों की लम्बी 'लिस्ट' देख कर बोले—

❀

"कहाँ से आए—पुरुषोत्तमपुर से? हाँ, सन् १७८९ में यह शादी मैंने की थी।" ससुर जी ने पत्र के अन्त में साफ़-साफ़ लिख दिया था—"पधारने में विलम्ब कीजिएगा तो सारी इज़्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी। अब इस अधीन के मान के आप ही रक्षक हैं। इस कुल को कलङ्क से बचाइए।"

❀

श्रीजगद्गुरु के 'वार्धक्य-विसिकुड़ित' होंठों पर मुस्कुराहट की एक स्पष्ट रेखा दौड़ गई। नाई से बोले—"कह देना, मान की रक्षा मुफ़्त में नहीं होती। सवारी के लिए सोलह कहारों वाली पालकी, १,००१) पधराई, मान-मरम्मत का मेहनताना ५०,००१) और अगर निशा-यापन की व्यवस्था अन्तःपुर में होगी तो उसकी दक्षिणा अलग होगी। समझे?"—"समझ गया, कृपा-निधान!" नाई ने उत्तर दिया।

❀

यही दशा हमारे लँगोटी-बाबा की है। आप भी 'पधरौनी' पर अड़ गए हैं और फ़रमाते हैं कि (१) जब तक फ़ौजी ख़र्च में काफ़ी कमी न की जाएगी, (२) रियासतों की प्रजा का संरक्षण न होगा, (३) देश को आर्थिक स्वतन्त्रता न दी जाएगी और (४) सरकारी ऋण के बारे में पूरी जाँच न हो लेगी तब तक लन्दन के मँड़वे में क़दम भी न रक्खेंगे। अन्तःपुर की दक्षिणा अभी अलग है। फलतः बी ब्रितानिया के मान का अल्लाह ही वली है!

❀

मगर जनाब, बिल्कुल एकतरफ़ा विचार न कीजिएगा। ज़रा कुलीन जामाता के ससुर जी की उस समय की उस सुखकर अवस्था का भी अनुमान कीजिए, जिस समय आप खाट पर बैठे हुए 'दौहित्र' खेलाते होंगे और सुन्दर शिशु अपनी छोटी मुट्ठी में नाना जी की मूँछें पकड़ कर खींचता होगा। उस 'सात स्वर्ग अपवर्ग सुख' की तुलना में तुच्छ पधरौनी की हक़ीक़त ही क्या है?

❀

ख़ैर भई, पधरौनी और ठहरौनी के मज़े तो उन्हें लेने और देने वाले जानें, हम बारातियों को तो रात भर के आमोद-प्रमोद के लिए कुछ सुन्दर सामान चाहिए, सो अल्लाह के फ़ज़्ल से आजकल कानपुर में कौड़ियों के मोल मिल रहा है। आयुष्मती पुलिस के नाज़ो-अन्दाज़ की कहानियों से अख़बारों के कलेवर होलिहारों के दुपट्टे बन रहे हैं।

❀

भगवान भला करे, पुलिस के डिप्टी-इन्स्पेक्टर जनरल मि० बेल का। आपने अपनी गवाही में 'यथानामो तथा गुणः' को अक्षर-अक्षर चरितार्थ कर डाला है। ठीक 'बेल' की भाँति गोल और ठोस बुद्धि के आदमी हैं। मगर, माशाअल्लाह 'गङ्गा पीना' तो क्या अगर चाहें तो एक ही गण्डूष में 'सातो समुद्र' पी जावें। पुलिस के कलङ्क की स्याही सोखने के लिए यह अच्छा 'ब्लाटिङ्ग' पेश किया है, यारों ने कमीशन के सामने!

❀

कौन कहता है, दङ्गे के समय पुलिस तास खेलती थी, 'टुकुर-टुकुर दीदम दम न कसीदम' का पार्ट कर रही थी? अजी, वे झूठे हैं, इर्ष्यालु और परनिन्दक हैं। दूसरे का पानी मारना इनका काम है। वे पानी में आग लगाने वाले जो न कहें वह थोड़ा है। बेचारी ने दङ्गा रोकने में अपनी जान लड़ा दी थी और झूठे कहते हैं, पुलिस ने कुछ किया ही नहीं! वही कहावत हुई कि 'मुर्ग़ी की जान गई और खाने वाले को स्वाद ही न मिला!'

❀

नैहाटी के एक बूढ़े अग्रवाल-कुल-भूषण ने परलोक-पथ के लिए एक षोड़शी सङ्गिनी संग्रह किया था। माल राजपूताने से चालान होकर नैहाटी पहुँच गया था। परन्तु अड़ङ्गाबाज़ों ने ऐसी लकड़ी मारी कि जाल में फँसा हुआ शिकार उड़ गया और बेचारे बड़े लाला कमर थाम कर रह गए!

❀

ज़रा सोचने की बात है, कि अगर नैहाटी के बड़े लाला की शादी हो जाती और वे दो-चार वर्ष तक नई ललाइन के साथ रह कर परलोक-पथ के लिए थोड़ा सा सामान मोहय्या कर लेते तो उन कमबख़्तों का क्या बिगड़ जाता, जिन्होंने 'दाल-भात में मूसरचन्द' बन कर बेचारे की सारी आशाओं पर पानी फेर दिया है?

❀

यह तो मानी हुई बात है कि लाला जी ललाइन जी को अपने साथ न ले जाते। उनके परलोक-प्रस्थान के बाद वे (अर्थात् ललाइन जी) निश्चिन्ततापूर्वक बैठी-बैठी रुद्राक्ष की माला फेरतीं, पास-पड़ोस के नवयुवक भाभी जी से मिलने आते, 'बूढ़ों का ब्याह हो और जवानों के घर नौबत बजे' यह पुरानी कहावत चरितार्थ होती और इस असार संसार में कुछ दिनों तक लाला जी की एक जीती-जागती स्मृति रह जाती।

❀

बेचारी दान-पुण्य करतीं, गङ्गा नहातीं, देवपूजन करतीं और कथा सुनने जातीं। इससे सनातन-धर्म की उन्नति होती और लाला जी को भी परलोक में सुख और शान्ति प्राप्त होती। परन्तु इन सुधारकों की खोपड़ी में इतनी बुद्धि कहाँ, जो इन तत्वपूर्ण बातों की गवेषणा कर सकें?

❀

ख़ैर, 'पछड़ने से डरते नहीं पहलवाँ!' लाला जी को हताश नहीं होना चाहिए। पास में पैसा हो तो यहाँ षोड़शियों और चतुर्दशियों की कोई कमी नहीं है। न तीर ख़ाली जाने से शिकारी को हताश होना चाहिए और न दाँव ख़ाली जाने से खिलाड़ी को। इसलिए हमारी सलाह है कि लाला जी एक बार फिर प्रयत्न करें, अन्यथा—

'ख़ारे-हसरत क़ब्र तक दिल में खटकता जाएगा,
मुर्ग़ बिस्मिल की तरह लाशा फड़कता जाएगा!

❀

हाय प्रभुवर, इस कलिकाल में तुम्हारी जो न दुर्गति हो जाए, वही थोड़ी है। सुनते हैं सीमा-प्रान्त के सनातनधर्म कॉन्फ़्रेन्स ने प्रस्ताव पास किया है कि देवमूर्त्तियों को खद्दर पहनाया जावे। बताइए, यह मई की गरमी और खद्दर की पोशाक! एक तो 'तितलौकी दूसरे नीम चढ़ी!' क़सम शाह मदार की, प्रभुवर की सारी देह में घमौरी हो जायगी, बेचारे परेशान हो जाएँगे।

❀

इसलिए हिज़ होलीनेस इस प्रस्ताव का घोर विरोध करते हैं। क्योंकि यह प्रस्ताव असामयिक, अनुचित और अप्रासङ्गिक है। अगर लोगों का हौसला इसी तरह बढ़ने दिया जाएगा तो एक दिन यह भी प्रस्ताव कर देंगे कि ठाकुर जी सुबह-शाम दो घण्टे चर्ख़ा काता करें और ठकुराइन जी रूई में से बिनौले चुना करें!

❀

अरे वाह रे हम! जो भविष्यद्वाणी की थी, वही हुआ। सम्मेलन के आगामी अधिवेशन के सभापति के लिए श्री० रत्नाकर जी चुन लिए गए। फलतः इस साल के सम्मेलन में जैसा कि श्रीजगद्गुरु पहले ही फ़रमा

चुके हैं, सुरमई आँखों की ख़ासी बहार रहेगी। सभापति सुरमा-प्रेमी, स्वागताध्यक्ष सुरमा-प्रेमी और अन्यतम कार्यकर्ता सुरमाप्रेमी। इसलिए प्रतिनिधियों को भी चाहिए कि अपनी-अपनी आँखों में सुरमा लगा कर सम्मेलन में पधारें, ताकि कम से कम दर्शकों को महाराज रणजीतसिंह के दरबार की तो याद आ जाए।

❀

ख़ैर, सम्मेलन का अधिवेशन इस महीने के अन्त में होगा। परन्तु तैयारियाँ महीनों पहले से जारी हैं। गाङ्गेय जी ने मलाई की कुलफ़ियों का और पं० बनारसी दास जी चतुर्वेदी ने 'टट्टियों' (अवश्य ही ख़स की) का भार अपने हाथ में लिया है। बाक़ी 'तरावट' पहुँचाने का भार पं० रामशङ्कर जी त्रिपाठी के ज़िम्मे है। फलतः प्रतिनिधियों को मई की गरमी से बचाने के लिए काफ़ी इन्तज़ाम किया गया है।

❀

हमारे नए बड़े लाट बहादुर ने आते ही जिस सरलता और फ़रमाँ-बरदारी का परिचय दिया है, बड़े दुःख की बात है कि बहुत कम लोगों ने उस पर ध्यान दिया है। इससे मालूम होता है कि ई-जानिब की तरह 'ख़ुर्दबीन' अर्थात् सूक्ष्म-दर्शी इस देश में बहुत कम हैं।

❀

ख़ैर, लाट साहब ने अपने विलायती सूत्रधारों से पूछा है कि आगामी ६ मई को शिमला म्युनिसिपैलिटी के मानपत्र का उत्तर देना है, इसलिए बताइए, कि हम किस नीति का अवलम्बन करें, अर्थात् घूँघट खोल कर नाचें या परदे में? वाक़ई मसला ग़ौर-तलब है। क्योंकि इधर नौकरशाही है और उधर मज़दूर-शाही—एक को ताण्डव पसन्द है और दूसरे को 'खेमटा'!

❀

मगर अपने राम तो 'इविनी नृत्य' के विशेष पक्षपाती हैं। बेचारे ने श्याम को भी न छोड़ा और कुल को भी कलङ्क से बचा लिया। भारत के सुप्रसिद्ध नर्त्तक—अजी, वही बताशों पर नाचने वाले—स्वर्गीय पण्डित गिरिधारी तिवारी होते तो 'सुभाना अल्लाह' अश-अश करके रह जाते।

❀

कॉङ्ग्रेस के एक बूढ़े बाबा ने ६९ वर्ष की उमर में, अपने प्रेम-विकम्पित हाथों से पाँचवीं बार एक पञ्चदश वर्षीया का पाणि-पीड़न किया है। परन्तु जनाब, मुफ़्त में नहीं, बल्कि बदले में एक साढ़े तीन वर्ष की

प्राप्ति-स्वीकार

स्वदेशी चूड़ियाँ—हमें यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि स्वदेशी आन्दोलन के प्रारम्भ होते ही हमारे अनेक भाइयों ने देशी चीज़ें बनाने का उद्योग आरम्भ कर दिया है। चूड़ियों को भारतीय स्त्रियाँ सौभाग्य-चिन्ह समझती हैं। और वास्तव में यह बड़े लज्जा की बात थी, कि कपड़ों की भाँति स्त्रियों को बिन्दी, सेंदुर और चूड़ियों तक के लिए विदेशों की कृपा पर अवलम्बित रहना पड़ता था।

विगत राष्ट्रीय आन्दोलन में अन्य सारी विदेशी वस्तुओं के साथ ही साथ अधिकांश भारतीय महिलाओं ने अपनी सब से प्रिय वस्तु चूड़ियों तक का बहिष्कार इसलिए कर दिया था, कि वे विदेशी थीं। बात बिल्कुल साधारण है, किन्तु इस साधारण सी बात से हमें भारतीय महिलाओं की उस जाग्रति का पता चलता है, जिनसे विदेशों तक में उनकी क़ुर्बानियों की धाक बँध गई है।

जो चूड़ियाँ हमारे पास समालोचनार्थ भेजी गई हैं, हम दावे के साथ कह सकते हैं, कि वह किसी भी तरह जापान, ऑस्ट्रिया तथा ज़ेकोस्लोवेकिया से आने वाली चूड़ियों से कम नहीं हैं। जिन बहिनों को आवश्यकता हो, वे—दि हनुमान ग्लास वर्क्स, फ़ीरोज़ाबाद (यू०पी०) से मँगा सकते हैं। शायद नमूने की चूड़ियाँ मुफ़्त भेजी जाती हैं। दूकानदार भी इससे विशेष लाभ उठा सकते हैं। इनका मूल्य विदेशी चूड़ियों की अपेक्षा बहुत कम है।

हमें यह जान कर और भी प्रसन्नता होती है, कि यह कार्य शिक्षित व्यक्तियों ने अपने हाथ में लेकर देश के सामने एक अनुपम आदर्श उपस्थित किया है। इस फ़र्म के मालिक पं० सुशीलचन्द्र चतुर्वेदी, बी० एस-सी०, एल्-एल्० बी० तथा प्रधान मैनेजर श्री० गङ्गाप्रसाद जैन, एम० ए०, एल्-एल्० बी० बधाई के पात्र हैं। हम कारख़ाने की हृदय से उन्नति चाहते हैं।

* * *

कन्या का विवाह २४ वर्ष के युवक से कर चुके हैं! बताइए, अब कौन कमबख़्त कहेगा कि बूढ़े बाबा ने अन्याय किया है? हिसाब लगाइए तो जमा-ख़र्च ठीक उतरेगा। अगर थोड़ा-सा फ़र्क़ निकलेगा तो महज़ ब्याज का। सो कारबार में तो ऐसा होता ही है।

❀

नैवेद्य (डाबर शृङ्गारदान)—कलकत्ते के सुप्रसिद्ध फ़र्म डॉक्टर एस० के० बर्मन, (पोस्ट बॉक्स नम्बर ५५४, कलकत्ता) ने हमारे पास एक 'डाबर' नामक शृङ्गारदान समालोचनार्थ भेजा है, जिसमें ८ प्रकार की शृङ्गार-सामग्रियों (साबुन, तेल, मञ्जन, पाउडर, इत्र और क्रीम आदि) के नमूने ख़ास-ख़ास ख़ानों में सजा कर रक्खे गए हैं।

आज प्रति वर्ष हमारे देश का करोड़ों रुपया इस प्रकार की शृङ्गार-सामग्रियों में विदेशों को जा रहा है और इसी धन से पाश्चात्य देशवासी मालामाल और भारतवासी कङ्गाल हो रहे हैं! आज देश के सौभाग्य से भारतवासियों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है और अब वे स्वदेश की बनी हुई चीज़ों को अपनाने लगे हैं। हमारा अनुमान है कि देवियाँ इन स्वदेशी शृङ्गार-सामग्रियों से सन्तुष्ट होंगी। डॉक्टर बर्मन की यह संस्था पिछले ४० वर्षों से देश की सेवा कर रही है और इसलिए इसके सञ्चालक बधाई के पात्र हैं। बक्स तथा लेबुल और पैकिङ्ग आदि की सफ़ाई की हमें शिकायत है। यदि इस ओर विशेष ध्यान दिया जाय तो कोई वजह नहीं है, कि लेबुलों की छपाई और पैकिङ्ग आदि ठीक उस ढङ्ग की न हो सके, जैसी मनमोहक विदेश वाले करते हैं। यह केवल ध्यान देने की बात है, और हमें आशा है, संस्था के ज़िम्मेदार व्यक्ति इस ओर विशेष ध्यान देंगे और इस सम्बन्ध में बङ्गाल कैमिकल वर्क्स वालों से मित्रवत् शिक्षा ग्रहण करेंगे।

विशेष विवरण के लिए अन्यत्र प्रकाशित आपका विज्ञापन देखिए

* * *

दन्त-रक्षक—यह एक देशी मञ्जन है। फ़ी डिब्बी का मूल्य ।) है और दन्त-रक्षक कम्पनी, नई सड़क, लश्कर ग्वालियर से मँगाया जाता है। कम्पनी का दावा है कि दाँतों की सब बीमारी में यह मञ्जन लाभ पहुँचाता है।

* * *

निर्वासिता

निर्वासिता वह मौलिक उपन्यास है, जिसकी चोट से क्षीणकाय भारतीय समाज एक बार ही तिलमिला उठेगा। अन्नपूर्णा का नैराश्यपूर्ण जीवन-वृत्तान्त पढ़ कर अधिकांश भारतीय महिलाएँ आँसू बहावेंगी। कौशलकिशोर का चरित्र पढ़ कर समाज-सेवियों की छातियाँ फूल उठेंगी। उपन्यास घटना-प्रधान नहीं, चरित्र-चित्रण-प्रधान है। निर्वासिता उपन्यास नहीं, हिन्दू-समाज के वक्षस्थल पर दहकती हुई चिता है, जिसके एक-एक स्फुलिङ्ग में जादू का असर है। इस उपन्यास को पढ़ कर पाठकों को अपनी परिस्थिति पर घण्टों विचार करना होगा, भेड़-बकरियों के समान समझी जाने वाली करोड़ों अभागिनी स्त्रियों के प्रति करुणा का स्रोत बहाना होगा, आँखों के मोती बिखेरने होंगे और समाज में प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध क्रान्ति का झण्डा बुलन्द करना होगा; यही इस उपन्यास का संक्षिप्त परिचय है। मूल्य केवल ३) रु०

लम्बी दाढ़ी

दाढ़ी वालों को भी प्यारी है बच्चों को भी,
बड़ी मासूम बड़ी नेक है लम्बी दाढ़ी।
अच्छी बातें भी बताती है, हँसाती भी है।
लाख दो लाख में बस एक है लम्बी दाढ़ी॥

ऊपर की चार पंक्तियों में ही पुस्तक का संक्षिप्त विवरण "गागर में सागर" की भाँति समा गया है। फिर पुस्तक कुछ नई नहीं है, अब तक इसके तीन संस्करण हो चुके हैं और ६,००० प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं। पुस्तक में तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर के अलावा पूरे एक दर्जन ऐसे सुन्दर चित्र दिए गए हैं कि एक बार देखते ही हँसते-हँसते पढ़ने वालों के बत्तीसों दाँत मुँह से बाहर निकलने का प्रयत्न करते हैं। मूल्य केवल २॥); स्थायी ग्राहकों से १॥।=) मात्र!

बाल-रोग-विज्ञानम्

इस महत्वपूर्ण पुस्तक के लेखक पाठकों के सुपरिचित, 'विष-विज्ञान', 'उपयोगी चिकित्सा', 'स्त्री-रोग-विज्ञानम्' आदि-आदि अनेक पुस्तकों के रचयिता, स्वर्ण-पदक-प्राप्त प्रोफ़ेसर श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य हैं, अतएव पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। आज भारतीय स्त्रियों में शिशु-पालन सम्बन्धी समुचित ज्ञान न होने के कारण सैकड़ों, हज़ारों और लाखों नहीं, किन्तु करोड़ों बच्चे प्रति वर्ष अकाल मृत्यु के कलेवर हो रहे हैं। इसमें बालक-बालिका सम्बन्धी प्रत्येक रोग, उनका उपचार तथा ऐसी सहज घरेलू दवाइयाँ बतलाई गई हैं, जो बहुत कम ख़र्च में प्राप्त हो सकती हैं। इसे एक बार पढ़ लेने से प्रत्येक माता को उसके समस्त कर्तव्य का ज्ञान सहज ही में हो सकता है और वे शिशु-सम्बन्धी प्रत्येक रोग को समझ कर उसका उपचार स्वयं कर सकती हैं। मूल्य २॥) रु०

दक्षिण अफ़्रिका के मेरे अनुभव

जिन प्रवासी भाइयों की करुण स्थिति देख कर महात्मा गाँधी; मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ और मिस्टर पोलक आदि बड़े-बड़े नेताओं ने ख़ून के आँसू बहाए हैं; उन्हीं भाइयों की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करने वाले पं० भवानीदयाल जी ने अपना सारा अनुभव इस पुस्तक में चित्रित किया है। पुस्तक को पढ़ने से प्रवासी भाइयों की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थिति तथा वहाँ के गौराङ्ग प्रभुओं की स्वार्थपरता, अन्याय एवं अत्याचार का पूरा दृश्य देखने को मिलता है। एक बार अवश्य पढ़िए और अनुकम्पा के दो-चार आँसू बहाइए!! मूल्य २॥) रु०

चुहल

पुस्तक क्या है, मनोरञ्जन की अपूर्व सामग्री है। केवल एक चुटकुला पढ़ लीजिए, हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। काम की थकावट से जब कभी जी ऊब जाय, उस समय केवल पाँच मिनट के लिए इस पुस्तक को उठा लीजिए, सारी उदासीनता काफ़ूर हो जायगी। इसमें इसी प्रकार के उत्तमोत्तम हास्यरस-पूर्ण चुटकुलों का संग्रह किया गया है। कोई चुटकुला ऐसा नहीं है, जिसे पढ़ कर आपके दाँत बाहर न निकल आवें और आप खिलखिला कर हँस न पड़ें। भोजन के पश्चात् मनोरञ्जन के लिए ऐसी पुस्तकें पढ़ना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक है। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष—सभी के काम की चीज़ है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल लागत-मात्र १); स्थायी ग्राहकों से ॥।); केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं, शीघ्रता कीजिए, नहीं तो दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

उपयोगी चिकित्सा

इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ के यहाँ होनी चाहिए। इसको एक बार आद्योपान्त पढ़ लेने से फिर आपको डॉक्टरों और वैद्यों की ख़ुशामदें न करनी पड़ेंगी—आपके घर के पास तक बीमारियाँ न फटक सकेंगी। इसमें रोगों की उत्पत्ति का कारण, उसकी पूरी व्याख्या, उनसे बचने के उपाय तथा इलाज दिए गए हैं। रोगी की परिचर्या किस प्रकार करनी चाहिए, इसकी भी पूरी व्याख्या आपको मिलेगी। इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपकी ये सारी मुसीबतें दूर हो जायँगी। भाषा अत्यन्त सरल। मूल्य १॥)

चित्तौड़ की चिता

पुस्तक का 'चित्तौड़' शब्द ही उसकी विशेषता बतला रहा है। क्या आप इस पवित्र वीर-भूमि की माताओं का महान साहस, उनका वीरत्व और आत्मबल भूल गए? सतीत्व-रक्षा के लिए उनका जलती हुई चिता में कूद पड़ना, आपने एकदम बिसार दिया? याद रखिए! इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपके बदन का ख़ून उबल उठेगा! पुस्तक पद्यमय है, उसका एक-एक शब्द साहस, वीरता, स्वार्थ-त्याग और देश-भक्ति से ओत-प्रोत है। मूल्य केवल लागत मात्र १॥); स्थायी ग्राहकों से १=) रु०

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Registered No. A—2085

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A.—Editor, at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad


CSDS
centre for the
study of developing
societies


BRITISH
LIBRARY